रामराजा बहादुर

भारतीय साहित्य निधि

रामराजा बहादुर

सी. वी. रमन पिल्लै

संक्षिप्तीकरण

के. एन. दामोदरन नायर

अनुवाद

एन. ई. विश्वनाथ अय्यर

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

ISBN 81-237-0521-2

प्रथम संस्करण : 1993 (शक 1915)

Ramraja Bahadur (*Hindi*)
रू० 35.00
निदेशक, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया
ए- 5 ग्रीन पार्क, नयी दिल्ली 110016 द्वारा प्रकाशित।

मुद्रक : इन्डिया ऑफसेट प्रेस नई दिल्ली।

भूमिका

रिचार्डसन का "पमेला" ही अंग्रेजी का पहला उपन्यास माना जाता है। उसका प्रथम प्रकाशन सन् 1740 में हुआ था। इसके सौ साल बाद भारतीय उपन्यास का श्रीगणेश किया गया। सन् 1856 में बंगला में "आलालेर घरेर दुलाल" (लाड़- प्यार से बिगड़ा हुआ बालक) नामक प्रथम उपन्यास प्रकाशित हुआ। श्री टेकचंद ठाकुर (प्यारी चंद मिश्र का उपनाम) इसके लेखक थे। मलयालम साहित्य में प्रथम मौलिक उपन्यास की रचना तीस वर्ष पश्चात हुई। सन् 1887 में श्री टी. एम. अप्पु नेडुंङ्गाटी का रचा "कुंदलता" उपन्यास मलयालम का सबसे पहला उपन्यास माना जाता है। परंतु अंग्रेजी उपन्यास के ढांचे में रचा हुआ सर्वप्रथम लक्षणयुक्त मलयालम उपन्यास होने का श्रेय "इंदुलेखा" को प्राप्त हुआ। सन् 1889 में इंदुलेखा का प्रथम प्रकाशन किया गया। इसके लेखक श्री ओ. चंतुमेनोन थे। इस में उस युग के केरल का सामाजिक जीवन यथार्थ रूप में चित्रित है। प्रस्तुत ग्रंथ के प्रकाशन की शताब्दी मनाई जा चुकी है। तथापि "इंदुलेखा" की मोहिनी केरलीय पाठ्कों पर छायी हुई है। इंदुलेखा के प्रकाशन के दो वर्ष पश्चात, सन् 1891 में मार्तण्डवर्मा उपन्यास का प्रथम मुद्रण हुआ। 'मार्ताण्डवर्मा' सी. वी. रमन पिल्लै का ऐतिहासिक उपन्यास है। यह मलयालम भाषा का पहला ऐतिहासिक उपन्यास भी है। यद्यपि 'धर्मराजा' और 'रामराजाबहादुर' उपन्यास-कला की दृष्टि से मार्ताण्डवर्मा से श्रेष्ठ हैं। तथापि दूसरा कोई उपन्यासकार मलयालम में मार्ताण्डवर्मा से बढ़िया ऐतिहासिक उपन्यास नहीं लिख सका है। सी. वी. की सृजन-प्रतिभा अजेय रही है।

भारत में उपन्यास का उदय नवजागरण के युग में हुआ, जबकि रूढ़िवादी सनातनी भारतीय समाज में परिवर्तन की नयी लहर उठी थी। बंकिमचंद्र एवं शरदचंद्र के दिनों में बंगाल का जो समजिक वातावरण था उसके समांतर रूप में केरल के सामाजिक तथा शैक्षिक क्षेत्र में नयी घटनाएं घटीं, नये रंग-ढंग नजर आने लगे। इसी पृष्ठभूमि में चंतुमेनोन और सी. वी. रमन पिल्लै मलयालम में प्रकट हुए। नयी पीढ़ी ने पश्चिमी शिक्षा प्रणाली से ज्ञान-विज्ञान के नये आयामों का परिचय प्राप्त करके परंपरागत और अनुल्लंघनीय माने गये आचार-व्यवहार एवं रूढ़ि-रीतियों को चुनौती दी। ट्रावंकोर और मलाबार में भी थोड़ी सी अलग सूरत में सामंतवादी जीर्णता अनुभव हो रही थी। स्वाधीनता-प्रेमी मानव हर क्षेत्र में कुछ-न-कुछ रद्दो-बदल का इंतजार कर रहा था। ऐसे ही माहौल में चंतुमेनोन एवं सी. वी. रमन पिल्लै ने उपन्यास-लेखन शुरू किया था। उनके उपन्यासों में केरलीय

नायिका की संकल्पना में संशोधन किया गया। पुरुषों की अधीनता को चुनौती देने में असमर्थ हो हवेली के भीतर अपनी फूटी किस्मत को रोती, आंसू बहाती औरतों को उन्होंने अपनी रचना में आदर्श स्त्री के रूप में स्वीकार नहीं किया। चंतुमेनोन की मानसपुत्री इंदुलेखा, सी. वी. के मार्ताण्डवर्मा की सुभद्रा एवं रामराजा बहादुर की सावित्री कुट्टी—तीनों युवतियां सामने आफत को देखकर थर्रा नहीं उठती थीं। वे साहसपूर्वक उनका सामना करती थीं।

जीवन-दर्शन के विषय में दोनों लेखक कुछ-कुछ समानधर्मी कहला सकते हैं। परंतु इन दोनों की शिल्पविधि में अंतर स्पष्ट है। ट्रावंकोर और मलाबार की सामाजिक व्यवस्था बुनियादी तौर पर एक-सी थी, तो भी उनका बाहरी ढांचा अलग-अलग था। इस अंतर ने सी. वी. और चंतुमेनोन की उपन्यास-संकल्पना में भी फर्क करा दिया। मलाबार सीधे अंग्रेज सरकार द्वारा शासित था। मद्रास प्रांत के उच्चतम अधिकारी गर्वनर थे। मलाबार मद्रास का एक जिला था। ट्रावंकोर रियासत के शासन की बागडोर राजवंश के हाथों में थी, जिसका सिद्धांत था— "धर्मो स्मत्कुलदैवतम्"। रियासत के प्रजाजन नरेश को "राजा प्रत्यक्षदेवतम" मानते थे। सी. वी. के तीनों उपन्यासों में राजा-प्रजा का यह घनिष्ठ संबंध अंतर्धारा के रूप में परिलक्षित है। मलाबार में जन्मे और पले हुए चंतुमेनोन इस संबंध की कल्पना ही कर सकते थे। उलटे सी. वी. बचपन से ही ट्रावंकोर-राजमहल के संपर्क में रहे थे। राजा-प्रजा का संबंध अनेक व्यक्तिगत अनुभव का विषय रहा। राज-भक्ति उनकी रग-रग में रही। यही कारण है कि चंतुमेनोन की कलम से सामाजिक उपन्यास निकले और सी. वी. ट्रावंकोर के इतिहास की पृष्ठभूमि पर सफलतापूर्वक उपन्यास रच सके। (जिस वातावरण में सी. वी. का शैशव, किशोरावस्था और यौवन बीते, उसने उस ऐतिहासिक उपन्यासकार के रूपायन में अनुपम योग दिया।)

ट्रावंकोर की राजधानी तिरुवनंतपुरम् के परिवारों में "कोच्चुकंडच्वार" भवन से सी. वी. की घनिष्ठता बचपन से ही रही थी। ट्रावंकोर के यशस्वी दीवान केशवपिल्लै— ये राजा केशवदास के नाम से प्रसिद्ध थे—ने अपनी पत्नी के लिए यह शानदार भवन बनवाया था। सी. वी. के बालपन के दिनों में इसमें केशवपिल्लै की नातिन के पुत्र केशवन तंपी रहते थे! सी. वी. के पिता नीलकंठपिल्लै ग्रंथों की प्रतिलिपि की तैयारी में तंपीजी की सहायता करते थे। अतएव पिता के साथ पुत्र सी. वी. छोटी उम्र में ही उस घर पर बराबर जाया करते। सी. वी. के पिता का असामयिक देहांत हो गया तो उदारमना केशवन तंपी ने होशियार बालक सी. वी. के पालन-पोषण व शिक्षा का दायित्व अपने ऊपर ले लिया। क्रांतदर्शी और दयालु तंपीजी ने सी. वी. को अंग्रेजी स्कूल में भरती करा दिया।

वह छात्र स्कूली दिनों में ही अंग्रेजी उपन्यास पढ़ा करता था। हाईस्कूल की परीक्षा में उत्तीर्ण होने के बाद सी. वी. ने तिरुवनंतपुरम् के महाराजास कालेज में प्रवेश लिया।

उस महाविद्यालय का वातावरण उसकी साहित्यिक प्रतिभा के विकास के अनुकूल निकला। प्रिंसिपल जॉर्णरोस तथा, प्रो० हार्वी ने उस छात्र के व्यक्तित्व एवं मानसिक संस्कृति को गढ़ने में उल्लेखनीय योग दिया। उपन्यास और नाटक सी. वी. के प्रिय विषय थे, खासकर ऐतिहासिक उपन्यास पढ़ने का शौक था। सर वाल्टर स्काट के अंग्रेजी ऐतिहासिक उपन्यासों ने सी. वी. को मोह लिया। इसका प्रभाव सी. वी. के प्रथम उपन्यास मार्ताण्डवर्मा में स्पष्ट दीखता भी है। सी. वी. का मानस आश्चर्य एवं सत्य के समन्वय के काल्पनिक सौंदर्य के संसार में अधिक रमता था। वे प्राचीन मलयालम कविता तथा कथकलि वाङ्मय बड़ी लगन से पढ़ते थे। अंग्रेजी के मेकाले, गिब्बन, बर्क आदि की शैली उन्हें मुग्ध करती थी। सी. वी. की सृजन-प्रतिभा प्रौढ़, गंभीर, अनुनादी और अद्‌भुतानुभूति को गरिमा देने वाली शैली से सहज आत्मीयता अनुभव करती थी।

इतिहास की भाषा तथ्यों की नीरस भाषा होती है। आंकडों एवं तथ्यों के जरिये प्रस्तुत प्रमाण ही इतिहास-निर्माण की बुनियाद का काम देते हैं। ऐतिहासिक उपन्यास तो मूल रूप से साहित्य है। वस्तुतः वह न कोरा इतिहास है, न नितांत कल्पना ही। उसे दोनों की सम्मिलित सृष्टि समझना चाहिए। ऐतिहासिक उपन्यासकार का कर्तव्य इतिहास के सूखे कंकाल में नये सिरे से मांस मज्जा एवं प्राण फूंक देना है। इस कार्य में कामयाबी पाने के लिए रचनाकार में खास क्षमताएं होनी चाहिए। पहली है परकाय प्रवेश की क्षमता तथा दूसरी है कल्पना से अतीत काल में प्रवेश करने की कुशलता। यें दोनों क्षमताएं अन्य किसी भी मलयालम ऐतिहासिक उपन्यासकार से अधिक सी. वी. में विद्यमान हैं।

ऐतहासिक घटनाएं कभी-कभी अयथार्थ प्रतीत होती हैं। परंतु कथाकार उपन्यास में जिन तथ्यों और घटनाओं का वर्णन करता है उनका पाठकों को विश्वसनीय तथा सहज लगना जरूरी है। उनका कार्य कारण संबंध भी होना चाहिए। वार एंड पीस (युद्ध और शांति) नामक उपन्यास में टालस्टाय ने मास्को से नेपोलियन की वापसी के कारणों के मामले में इतिहास की हू-ब-हू नकल नहीं की थी। टालस्टाय उन्हीं तथ्यों को पेश करते हैं जिनका पता अकेले वही लगा सके। हम उन ऐतहासिक तथ्यों के जरिये उपन्यासकार की उदात्त कल्पना के क्षेत्र की ऊंचाई तक पहुंच पाते हैं। किन्तु तालस्ताय में यह बताने की धृष्टता नहीं हो सकती कि नेपोलियन दीर्घ बाहु व दीर्घकाय व्यक्ति रहे या उन्होंने मास्को में सौ साल मजे से जीवन बिताया। सी. वी. ने रामराजा बहादुर उपन्यास में बतलाया है कि ट्रावंकोर पर टीपू का धावा एकाएक पेरियार नदी में बाढ़ आने के कारण असफल निकला तथा टीपू जान लेकर मैसूर भाग गये। यह तथ्य इतिहास द्वारा प्रमाणित है। परंतु उपन्यास में इस कोरे तथ्य को प्रस्तुत किया जाता तो विश्वास न आता। गर्मियों के दिनों में पेरियार नदी में बाढ़ कैसी ? सी. वी. की कल्पना इस तथ्य के विश्वसनीय कारण प्रस्तुत करती है।

सी. वी. ने अपने प्रथम उपन्यास मार्ताण्डवर्मा में महाराजा मार्ताण्डवर्मा के यौवन के दिनों की गाथा प्रस्तुत की है। उस प्रतापी नरेश ने पास व दूर की छोटी रियासतों को कभी चतुराई और कभी हथियार की ताकत से अपने वश में करके बड़ी तिरुवितांकुर रियासत का निर्माण किया इसके पश्चात उन्होंने उपना पूरा राज्याधिकार कुलदेवता श्री पद्मनाभ के चरणकमलों पर भेंट चढ़ाया तथा श्री पद्मनाभ दास की हैसियत से नये सिरे से राजशासन करने लगे। समीक्षकों के अनुसार, उपन्यास में ठूंस-ठूंसकर भरी घटनाएं, ऐतिहासिक तथ्यों की भरमार, और अंत तक रहस्य बनाये रखने का लेखक का मोह रचना को कमजोर बनाते हैं।

सी. वी. का दूसरा ऐतिहासिक उपन्यास 'धर्मराजा' 'मार्ताण्डवर्मा' के प्रकाशन के बीस वर्ष बाद प्रकाशित हुआ। इस लंबी अवधि के दौरान सी. वी. उपन्यास-रचना के साधन जुटाने के अथक अनुसंधान में व्यस्त थे। यह गहरी तपस्या थी।

'धर्मराजा' असफल प्रतिशोध की कथा है। मार्ताण्डवर्मा के विलक्षण पात्र कहलाने योग्य अनंतपद्मनाभन तथा कुछ अन्य पात्र धर्मराजा में प्रकट होते हैं। मार्ताण्डवर्मा नरेश दिवंगत हो गये तो उनके बाद कार्तिकातिरुनाल (कृत्तिका नक्षत्र में भूजात) रामवर्मा नरेश गद्दी पर बैठे। प्रजाजन श्रद्धावश उन्हें धर्मराजा पुकारते थे। मार्ताण्डवर्मा महाराजा के सैन्याधीश रहे अनंतपद्मनाभन इस उपन्यास में-सेवानिवृत्त होकर शांतिपूर्ण दिन बिताते हैं। मगर उनकी शांति भंग होती है। मार्ताण्डवर्मा के शत्रु कषक्कूट्टत्तु पिल्लै के परिवार में बचे हुए दो जुडवां भाई राजकीय प्रकोप से भयाक्रांत होकर परदेश की शरण में पहुंच जाते हैं। वे भाई सन्यासी के वेष में ट्रावंकोर लौट आते हैं। वे हैदर अली की मदद से ट्रावंकोर नरेश के खिलाफ षड्यंत्र रचने में लग जाते हैं। मगर वे अपनी साजिश में बुरी तरह शिकस्त खाते हैं। यही धर्मराजा की मुख्य कथावस्तु है। अनंतपद्मनाभन और देशसेवक केशवपिल्लै नामक युवक मिलकर देशद्रोही भाइयों की हर चाल को मात देते हैं। प्रतिभाओं की परस्पर टकाराहट से निकलती चिनगारियां इस उपन्यास को ज्योतिर्मय बना देती हैं।

'रामराजा बहादुर' सी. वी. का तीसरा एवं आखिरी ऐतिहासिक उपन्यास है। इसी कृति में सी. वी. की सृजनशील प्रतिभा अपने चरम विकास को प्राप्त करती है। 'धर्मराजा' के कई पात्र रामराजा बहादुर में भी हमें मिलते हैं। किंतु वर्षों के अंतराल में उनकी प्रकृति और व्यवहार में थोड़ा-बहुत परिवर्तन आ जाता है। 'धर्मराजा' की कथाधारा का युगानुकूल शेषांश 'रामराजा बहादुर' में प्राप्त है। तथापि 'रामराजा बहादुर' की कथावस्तु स्पष्ट और अपने में स्वयं पूर्ण है। 'धर्मराजा' में केशवन उण्णित्तान तथा मीनाक्षी अपने परस्पर प्रणय में सफल हो जाते हैं। वे 'रामराजा बहादुर' में अधेड़ अवस्था के दंपत्ति के रूप में नजर आते हैं। मीनाक्षी अम्मा में भारी परिवर्तन हो गया है। एक तरफ अपने सतीत्व में शंकालु पतिदेव द्वारा तिरस्कार व रूखा व्यवहार है, तो दूसरी तरफ पांच-पांच संतानों को जन्म

देने पर भी चारों के काल-कवलित होने का गहरा दुख। शोक की चरम सीमा में वह सर्वसहा हो जाती है। सती साध्वी पत्नी के विषय में उण्णितान को निराधार दुश्शंका ने उनके दांपत्य संबंध को नासूर की तरह ग्रस लेता है। दीवानजी के अंगरक्षक और सैन्याधीश अनंतपद्मनाभन के नाती त्रिविक्रमन तथा मीनाक्षी अम्मा की सुपुत्री सावित्री का प्रेम-संबंध कथावस्तु का एक और पहलू है। केशवन उण्णित्तान दीवानजी के प्रति अपनी सख्त नफरत का सारा क्रोध त्रिविक्रमन पर उतारते हैं। वे त्रिविक्रमन और सावित्री के प्रणय प्रवाह की स्वच्छंद प्रगति में अड़चन डालते जाते हैं। उनका इरादा सावित्री का विवाह अजीतसिंह नामक क्षत्रिय नरेश से कराने का है। उण्णित्तान को पता नहीं कि अजीतसिंह क्षत्रिय नरेश नहीं है और वह टीपू सुल्तान का जासूस है। दीवानजी सावित्री को अपनी ओर से भांजी सा वात्सल्य देते हैं तो उण्णित्तान का पत्नी-विषयक संदेह कई गुना बढ़ता है। सीधे और सरल हृदय उण्णित्तान मन में दृढ़ विश्वास करते हैं कि सावित्री मीनाक्षी अम्मा और दीवानजी की संतान है।

उण्णित्तान का शिष्य कोटंता आशान बड़ा धूर्त है। वह चुगली खाता है और उण्णित्तान की दुश्शंकाओं की आग में घी डालता जाता है। सावित्री का पाणिग्रहण करने पर तुले हुए अजीतसिंह का असली परिचय दीवानजी को है। वे उण्णित्तान की योजना से प्रस्तुत सावित्री का विवाह-समारोह अपनी चतुराई से भंग करा देते हैं। इसी बीच ट्रावंकोर पर टीपू का सैनिक हमला छिड़ता है और उसका मुकाबला करने दीवानजी की सैनिक तैयारियाँ शुरू होती हैं। सावित्री और अजीतसिंह का विवाह रुक जाने पर भी अशुभ के बादल छंटते नहीं। पाठकगण अब कथावस्तु के दूसरे सक्रिय और सनसनी खेज कांड में प्रवेश करते हैं। यहां हम पेरिंचक्कोडन नामक विलक्षण पात्र से पहली बार मिलते हैं। वह जंगल के निवासियों का सरदार है। इस प्रसंग पर वही नाटकीयता एवं सजीवता लाता है। वह दीवानजी का रिश्तेदार और साथ ही जानी दुश्मन है। परंतु वह त्रिविक्रमन को बहुत चाहता है। इसीलिए वह अपनी पोषित पुत्री देवकी कुट्टी के लिए त्रिविक्रमन को दूल्हे के रूप में प्राप्त करने को लालायित है। पेरिंचक्कोडन त्रिविक्रमन की मंगेतर और प्रेममूर्ति सावित्री को हरण करके टीपू के डेरे में पहुंचाता है। वह एक पंथ दो काज यों साधता है। उसकी आशा है कि सावित्री को रास्ते से हटा देने पर त्रिविक्रमन देवकी को अवश्य स्वीकार करेगा। उसकी योजना यह भी है कि दीवानजी की लाडली सावित्री दुश्मनों के डेरे में फंस जाये तो उस खबर से ही दीवानजी का मनोबल टूट जायेगा। मगर सावित्री की हिम्मत और शराफत से खुश होकर टीपू उससे पुत्री जैसा व्यवहार ही करता है।

कथावस्तु अब समाप्ति की ओर बढ़ती है। इस प्रसंग की घटनाएं अनेक हैं। जैसे— कुंचेक्कुट्टिपिल्लै कार्यक्कार की एकांत योग-साधना के फलस्वरूप पेरियार नदी में एकाएक

बाढ़ आती है। बाढ़ से घबराये टीपू सेना सहित मैसूर की तरफ भाग जाते हैं। कालियुटयान चंद्रक्कारन नामक वृद्ध इस प्रसंग का स्मरणीय पात्र है। यह केशवन उण्णित्तान का मामा है। टीपू के जासूस के रूप में राज्य भर में घूमते हुए वह दीवान के खिलाफ साजिश करता है। मगर बुरी तरह हारता है। इस पर वह टीपू के डेरे में ही लौट आता है। वह वृद्ध टीपू और फौज की भगदड़ के समय चतुराई से सावित्री को टीपू के डेरे से बचा लेता है। वह सावित्री को लिये बाढ़ से उफनी पेरियार नदी को तैरते पार कराने का साहस करता है। वह अपने भांजे की पुत्री को सुरक्षित तट पर पहुंचा तो देता है लेकिन उसके बाद बाढ़ के जल में ही उसकी समाधि बन जाती है। ये इस प्रसंग की महत्वपूर्ण घटनाएं हैं। उण्णित्तान का भ्रमजनित संदेह दूर हो जाने पर त्रिविक्रमन और सावित्री का प्रेम सफल होता है। यह तो कथावस्तु की झलक भर है। सी. वी. ने मुख्य घटनाओं के ताने-बाने में और कितनी ही छोटी घटनाओं के रंगीन धागे बुने हैं। मुख्य वस्तु की दृढ़ता बढ़ाने में मदद देती हैं।

पात्र-कल्पना में सी.वी.की कुशलाता का विश्लेषण करते करते हमें "अपारे काव्यसंसारे कविरेव प्रजापतिः" छंद स्मरण आता है। पेरिंचक्कोडन, माणिक्यगौंडन एवं कुच्चैकुट्टि पिल्लै विलक्षण पात्र हैं तथापि सी. वी. जिस निपुणता से उन्हें प्रस्तुत करते हैं। उसके कारण वे इतिहास के पृष्ठों में जीवित हाड़-मांस के पुतले ही अनुभव होते हैं। उनकी प्रस्तुति यथार्थ के एकदम अनुकूल है। ऐसे पात्रों की प्रस्तुति सधे हुए लेखकों के लिए ही संभव है। जरा सा चूकने पर पात्र-कल्पना की नींव तक उखड़ जाने का खतरा है। किन्तु सी. वी. ऐसे पात्रों का सृजन बड़ी सहजता से, अनायास करते हैं। सी. वी. की कुशलता विशिष्ट पात्रों के सृजन में ही नजर नहीं आती। चाहे सामान्य हो चाहे विशिष्ट, अपने हर पात्र को सी.वी.जानदार बना देते हैं। पेरिंचक्कोडन आदि ही नहीं, अषकनपिल्लै, कल्लरक्कल पिल्लै, कुन्चिपेण्ण और कुरूंडाड् कृष्णकुरुप तक पाठकों के हृदय में अपनी छाप जमा जाते हैं। हर पात्र के संवाद की प्रणाली अलग है, सुर और शैली अलग है।

खल पात्रों के सृजन के दौरान सी. वी. यह नहीं भूलते कि शिला के भीतर भी जल के मुक्तकण हो सकते हैं। पेरिंचक्कोडन बड़ा जालिम है। उसे कोई भी घृणित कार्य करने में संकोच नहीं है। परंतु पत्नी और पोषित पुत्री उसकी दुखती रग हैं। उनकी उपस्थिति में पेरिंचक्कोडन का पत्थर-सा दिल मोम हो जाता है। उसी तरह राक्षसी प्रकृति का होने के बावजूद माणिक्यगौंडन का कठोर हृदय अपने परिवार के प्रति ममता से पिघल जाता है।

सी. वी. अपने उपन्यास के प्रारंभिक पृष्ठों में पाठकों को अप्रिय लगने वाले पात्रों को समाप्ति की तरफ बढ़ते बढ़ते पाठकों की सहानुभूति का पात्र बनाते हैं। यह उनकी उपन्यासकला की शिल्पगत विशेषता है। माणिक्यगौंडन उर्फ कालियुडयान चंद्रक्कारन

नामक पात्र से हम कथारंभ में मिलते हैं तो हमें वह धूर्तराज लगता है। मगर कथा के चरम विकास के दौरान वह वृद्ध अपनी भांजी के प्राण बचाने के पक्के इरादे से बाढ में उफनी हुई पेरियार नदी की तीक्ष्ण धार को लांघने की कोशिश करता है। जल धारा और अपने शरीर पर दांतों से काट खाते ऊदबिलावों से जूझते हुए वह उस युवती को सुरक्षित तट पर पहुंचाता है। वह अपने अंतिम संदेश के शब्द तक पूरा नहीं कर पाता। इसके पहले ही प्रलय-प्रवाह में उसकी जल-समाधि हो जाती है। इस वृद्ध पात्र के देहांत पर पाठकों के हृदय में जहां राहत होना सहज है वहां उन्हें उस पात्र के प्रति हार्दिक सहानुभूति अनुभव होती है।

सी. वी. की रचनाओं में एक निश्चित जीवन-दर्शन सुलभ है। उनका दृढ़ मत है कि ईश्वर का न्याय निर्मम होता है। उनकी पात्र-कल्पना के पीछे यही सिद्धांत रहा है कि अंततः धर्म पराजित नहीं होता, अधर्म को दंड अवश्य मिलता है।

मदुरै नगर के मीनाक्षी मंदिर की विराट शिल्पकला का सौष्ठव सरसरी दृष्टि से देखने पर थोड़े ही समझ में आता है। प्रत्येक मूर्ति के लावण्य का आस्वादन करने में घंटे लग सकते हैं। इसी प्रकार सी. वी. की कलाकृतियों की सुषमा को हृदयंगम करने के लिए उन रचनाओं को सरसरी निगाह से पढ़ जाना काफी नहीं है। गहराई से सांगोपांग अध्ययन आवश्यक है। प्रस्तुत ग्रंथ मूल उपन्यास का संक्षिप्त संस्करण है। मूल उपन्यास के विशद अध्ययन की प्रेरणा देना और साथ ही सी. वी. की प्रतिभा से पाठक का घनिष्ठ संपर्क कराना ही इसका ध्येय है। सी. वी. के उपन्यासों का संक्षेपण कोई आसान काम नहीं है। अनेक कठिनाइयां उपस्थित होती हैं। शाखोपशाखाओं में छाई हुई कथावस्तु, विलक्षण प्रकृति के अनेक पात्र, प्रौढ़ और चुस्त संरचना-शैली अनुभव होती हैं। इनके अलावा इन सब बातों को सचेतनता और गंभीरता स्थायी रूप से देनेवाला उदात्त जीवन दर्शन है। सी. वी. की रचनाओं का संक्षेपण करनेवालों को ये सब विशेषताएं असमंजस में डालती हैं।

इसी पृष्ठभूमि में हमें श्री के. एन. दामोदरन नायर के इस संक्षेपण के महत्व पर विचार करना चाहिए। उन्होंने औचित्य पर अधिष्ठित त्याज्य-ग्राह्य विवेक से सी. वी. की रचना- प्रक्रिया का मर्म पकड़ने की लगन से और सब से बढ़कर हिमालय सी उच्च प्रतिभा के सामने अपने खड़े रहने की विनम्रता से संक्षेपण संपन्न कर दिया है। मैं इस प्रयास का अभिनंदन एक ही विशेषण से करना चाहता हूं—"प्रशंसनीय"।

—के. कुमारन नायर

1

जौहरी माणिक्यगौंडन

मैसूर के हैदर अली खाँ ने तिरुवितांकूर पर धावा बोलने की योजना तो बना ली थी, पर बाद में उसे छोड़ दिया। 'धर्मराजा' उपन्यास में इसका जिक्र किया गया है। मैसूर की सरहद पर अंगरेजों की मोर्चाबंदी की सूचना ही इसका कारण थी। जब हैदर अली के पुत्र टीपू मैसूर के सुलतान की गद्दी पर बैठे तब उन्होंने तिरुवितांकूर पर हमला करनी की ठानी। उन्होंने मलावार के नाम से प्रसिद्ध उत्तर केरल पर अपना झंडा फहराया और कोचिन को अपने राज्य में शमिल कर लिया। इसके बाद तिरुवितांकूर पर धावे की तैयारियाँ शुरू कीं।

केरल के उत्तरी खंड के लोग टीपू की फौजों की क्रूरता सहन नहीं कर सके तो शरणार्थी होकर दक्खिन की ओर भागे। उनकी बाढ़ देख कर तिरुवितांकूर के निवासी इस आक्रमण की भीषणता को पहचान गये। छोटी-छोटी रियासतों के राजा, धनी, गृहस्थ, भूस्वामी आदि हजारों की तादाद में रामवर्मा महाराजा तथा आश्रय देने को तैयार धनी गृहस्थों की शरण में पहुंचे। यह पहचानना भी नामुमकिन हो गया कि इनमें मित्र कौन हैं और शत्रु कौन। लोग अलग-अलग पोशाकों में आये। कुछ लोग प्रतिष्ठित व्यक्तियों की सिफरिशी चिट्ठियां ले आये। उनमें दुश्मनों के आज्ञाकारी गुप्तचर भी होते थे, देश में बदमली फैलाने के मतलब से आये हुए लोग भी थे। सभी लोग बिना किसी रोक-टोक के तिरुवितांकूर रियासत में प्रवेश कर गये। तस्करों के गिरोहों ने जगह-जगह अड्डे बना कर लोगों को सताना प्रारंभ किया। इनके कारण सरकार और जनता बेहद परेशान हो गई।

कुछ विदेशी भी उस राज्य में आ गये। वे मानों लोगों की घबराहट को निराधार साबित करना चाहते थे। माणिक्यगौंडन नामक जौहरी रेशम, हीरा-जवाहरात आदि बेचने तिरुअनंतपुरम् पहुंचा और महाराजा की अनुमति लेकर एक व्यापारी संस्था प्रारंभ की। एक विदेशी पहलवान भी आ गया, जिसने कई पुरस्कार और सम्मान पाये थे। वह महाराजा की सेवा में हाजिर हुआ और अपनी बराबरी के पहलवान से कुश्ती लड़ने की इच्छा प्रकट की। अपने जोड़ के पहलवान के इंतजार में वह दीवानजी की खास देखरेख में तिरुअनंतपुरम् में रहने लगा। उसका नाम था कोणोरि राव कंठीरव राव। कूर्ग और

मैसूर की सरहद पर स्थित बब्बलपुर नामक पर्वतीय राज्य के युवराज भी ऐसे ही एक और अतिथि थे। वे श्रीपद्मनाथ मंदिर में एक हजार आठ दिनों के भजन-कीर्तन के लिए आये थे। उनके साथ बड़ी संख्या में अनुचर थे, खजाना आदि भी था। उस युवराज का नाम था अजित सिंह। वे महाराजा के अतिथि बनकर तिरुवनंतपुरम् में रहने लगे।

जौहरी माणिक्यगौंडन असल में चंद्रकारन था, जो इक्कीस वर्ष पूर्व कषक्कूट्टम के चिलांपिनेत्तु भवन से एकाएक अदृश्य हो गया था। तिरुवितांकूर से गायब होने के बाद चंद्रकारन गोसाईं-दलों के साथ घूमते-फिरते सिरहस्तिन ग्राम में पहुंचा। मैसूर की उत्तरी सरहद से छत्तीस घंटों का सफर करके ही उत्तर-पूर्वी दिशा में बसे इस स्थान पर पहुंचा जा सकता था। व्यापार आदि के क्षेत्र में कई राज्यों को परस्पर जोड़नेवाले राजपथ यहीं पर एक दूसरे से मिलते थे। बगल में एक बड़ा मैदान था। इसी स्थान पर मैसूर के वित्तीय सलाहकार और करोड़पति गंगूराम सेठ ने एक धर्मशाला बनवाई थी। इस तिमंजिले भवन में एक साथ हजारों लोगों के रहने की सुविधा थी। इससे थोड़ी दूर उत्तरी दिशा में धर्मशाला न जानेवाले यात्रियों के लिए एक श्वेत मंडप था। वहां से थोड़ी दूर पूरब दिशा में सिरहस्तिनग्राम नाम से प्रसिद्ध मंडप थे।

भटकते-भटकते सिरहस्तिन ग्राम पहुंचे चंद्रकारन ने गंगूराम का वैभव देखा तो उसके मन में एक नई महत्वाकांक्षा का उदय हुआ। अपने पास सुरक्षित रखे हरे रंग के पन्नों में से एक उसने गंगूराम के चरणों पर चढ़ाया। करोड़पति गंगूराम सेठ ने कालीप्रभाव भट्ट नामधारी चंद्रकारन को अपना मित्र स्वीकार किया और उसे बागीचों आदि की व्यवस्था सौंप दी। भट्ट ने बागीचों और खेतों से होने वाली आय में बहुत बढ़ोत्तरी की। सेठजी उस पर बहुत खुश हुए। उसे सिरहस्तिन ग्राम की धर्मशाला का धर्मकर्ता नियुक्त कर दिया गया।

भट्ट के लिए कमाई का अच्छा रास्ता खुल गया। उसने सबसे पहले धर्मशाला का नवीकरण कराया। गंगूरामजी के तीस हज़ार वराहन* इस काम से उसके हाथ लगे। धर्मशाला के पश्चिम की तरफ स्नानार्थ एक जलाशय खुदवाया। इससे भी दस हजार मोहरें उसकी मुट्ठी में आ गयीं। बीच-बीच में इस तालाब में जो लाशें तैरती रहती थीं वे भट्ट द्वारा दी गयी यंत्रणा से मरे हुए लोगों की होती थीं। धर्मशाला के धर्मकर्ता के नौकर इन लाशों को कहीं गाड़ देते थे। किसी को कानों-कान खबर तक नहीं होती थी। इस प्रकार रक्षणकेंद्र धर्मशाला शोषण-केंद्र हो गयी। दानी संस्था शोषक संस्था बन गयी।

कालीप्रभाव भट्ट नामधारी चंद्रकारन में लंबे देशाटन के फलस्वरूप कुछ नई प्रवृत्तियां

---

* एक सिक्का

आ गयी थीं। वह विभिन्न भाषाओं की गालियों से युक्त पंचमेल भाषा बोलता था। मराठी जूता, कन्नड़ की पंचकच्छी धोती, मुसलमानों की अचकन और गुजराती छोटी टोपी—उसकी पोशाक थी। तांबे के रंग की गोलाकार दाढ़ी, चोट खाते-खाते घट्टों से भरी खुरदरी नाक, झड़े रोओं वाली भौंहें, उनके नीचे गहरे गड्ढे में धँसी आंखें—यही उसकी मुखाकृति थी। उसकी आंखें दूरस्थ वस्तुओं को तो अच्छी तरह देख ही सकती थीं, उसकी समीप की दृष्टि बड़ी तेज थी। उसके स्वस्थ दांत कड़ी से कड़ी चीज काट सकते थे। साठ साल की अवस्था पार करने पर भी उसमें गजब की शारीरिक शक्ति थी।

हैदर अली को मरे एक साल ही बीता था। एक दिन दोपहर के थोड़ा पहले ही सिरहस्तिन धर्मशाला में बड़ी संख्या में लोग इकट्ठे हुए, यह कुछ निराली बात थी। कंधे से कंधा सटाये, बिना झगड़े-टंटे के घूमनेवाले ये मुसाफिर भिन्न-भिन्न देश, भिन्न-भिन्न जाति व वेष के थे, अलग-अलग भाषाएं बोलते थे। इनमें सैनिक वेष के शस्त्रधारी व्यक्ति भी थे। इनके मुखों पर दया और मंदहास छाया था। बाड़ों में बँधे हुए इनके जानवर तक शोर-गुल या उपद्रव नहीं कर रहे थे।

जब कभी कोई सैनिक दल धर्मशाला आता तब भट्ट उससे धर्मशाला को प्राप्य धनराशि का हिसाब लगाने में व्यस्त होता। मगर इन यात्रियों के आगमन के शोरगुल ने उसके काम में बाधा डाली थी। इसलिए वह कमरे में क्रोध के मारे पैर पटकता टहल रहा था। फिर भी उसने सभी मुसाफिरों को भरपेट भोजन देने का आदेश दिया। इसके बाद वह अपने कमरे में वापस आया। उसे यह बात बहुत अखरी कि यात्रियों के प्रमुख स्वयं उससे मिलने नहीं आये। दांत पीसते हुए मन ही मन कुछ गुनते हुए वह रोब जमाने के लिए, मुआइने के बहाने धर्मशाला की हर मंजिल पर चक्कर लगाने लगा।

भोजन के समय यात्रियों का शोरगुल, व्यंजनों की महक, मुसाफिरों का गायन-वादन, भजन-स्तोत्र आदि भट्टजी के क्रोध की आग में घी का काम कर रहे थे। सारे कोलाहल के शांत होने के बाद सोने का वक्त आया तो धर्मशाला की तीनों मंजिलों पर बाहरी फाटक बंद होने की आवाज एक साथ सुनाई दी। इसके पश्चात रह-रहकर 'महाराज गंगूराम की जय' की पुकार सुनाई पड़ी। अंत में खामोशी का आलम छा गया।

रात्रि का भोजन बड़े प्रेम से करने के बाद भट्ट अपने शयनकक्ष में प्रविष्ट हुआ। वह कक्ष शस्त्रागार भी था। खंभे तक हथियारों से सजे हुए थे। दीवारों पर बड़ी तादाद में अस्त्र-शस्त्र टंगे थे। भट्ट पलंग पर लेटने की बजाय अत्याधिक क्रोधित होकर एक तिपाई पर जा बैठा। धर्मशाला में ठहरे हुए लोगों के प्रति असहनीय क्रोध के कारण उसने सोचा कि क्यों न सुबह के नाश्ते में जहर मिला दूं। उसने सेवकों को बुलवाया और अकारण बुरी तरह उनकी पिटाई करके अपना कुछ गुस्सा उतार लिया। भट्ट किसी तरह भी सोच न पा रहा था कि ये सारे लोग वहां क्यों इकट्ठे हुए हैं।

सोच-सोच कर थक जाने पर, जब धीरज समाप्त हो गया तब उसने अपने चारों ओर रखे शस्त्रों को संबोधित करके पंचमेल भाषा में बड़बड़ाना शुरू किया, "राक्षस ! राज्यों को अनंत महाभारत का श्मशान क्षेत्र बनाकर तबाह करते हैं। आज का लुटेरा कल मुकुट पहनता है। सात समुंदर-पारवालों का एक गिरोह दसों दिशाओं में आग लगाता फिर रहा है। राजे-महाराजे सब गये। वाह ! नवाव, सुलतान, बादशाह, निजाम—सारे कीड़े-मकोड़े बढ़ रहे हैं । ये सब आपसी लड़ाई में इस धरती को ही तबाह कर देंगे। कलियुग जो है ! गंगूराम की तिजोरी इन सारे बहादुरों को पालती-पोसती है, इन्हें फिरकी की तरह नचाती है। अतएव हमारा और हमारे अधिकारों का कुछ नहीं बिगड़ेगा। बाप रे ! क्या-क्या देखा, कितना भुगता ? बहादुर टीपू सुलतान चाहें तो दुनिया को ही निगल जायें ! मगर उनके कर्मचारियों द्वारा हमारी आज्ञा की अवज्ञा ! छि: छि ! बड़ी लानत की बात है ! नहीं ! परिवार एवं देश को त्यागे हुए इस यायावर को राजा-महाराजाओं के परस्पर ईर्ष्या-द्वेष, छीना-झपटी से क्या लेना-देना ? स्वागत-भाषण के बीच अपने अतीत के खंडहरों में भटकते भट्ट का गला रुंध गया ठुड्डी कांपने लगी, बदन पसीना-पसीना हो गया। मन को शांत करने के लिए वह पलंग पर लेट गया।

नींद न आने से भट्ट बहुत परेशान था। इतने में निचले तल्ले पर किसी दरवाज़े की सिटकनी खुलने की धीमी आहट सुनाई पड़ी। वह झटपट उठ बैठा। उसके कान खड़े हो गये। उसका बदसूरत चेहरा हैवानी क्रूरता से डरावना हो उठा। उसने कुछ हथियार अपनी कमर में बांध लिये। इसके बाद उसने अपना पूरा शरीर एक चोंगे में छिपा लिया, जिसमें से केवल उसकी आंखें दिखाई दे रही थीं। दरवाजा खोलकर एक रस्सी की नसैनी के जरिये वह नीचे उतरा। उत्तरी दिशा में कुछ दूर जाने पर उसने देखा, लंबे कद के कुछ लोग बड़ी सावधानी से सराय की ओर आ रहे थे। भट्ट जमीन पर लेट गया और घड़ियाल की तरह रेंगते हुए सराय की ओर बढ़ा। यह बड़ा कठिन काम था, गति धीमी थी। भट्ट जब सराय के मंडप की आड़ में पहुंचा तब तक वहां एकत्र लोगों के परस्पर अभिवादन और कुशल-मंगल के प्रारंभिक आदान-प्रदान समाप्त हो चुके थे।

टीपू सुलतान के सलाहकार और विश्वासपात्र मित्र त्रयंबकराव तिरुमलराव इस बैठक की अध्यक्षता कर रहे थे। विद्वानों की बातचीत का पूरा मतलब भट्ट की समझ में नहीं आया। उसको बड़ी निराशा हुई। इसी बीच बहस रामराजा बहादुर शब्द पर केंद्रित हो चली थी। भट्ट खुश हुआ कि उसकी मन-माफिक चर्चा हो रही है। उसने बड़े ध्यान से बातें सुनीं। चर्चा में भाग लेनेवाले जिन गांवों व स्थानों के नाम दुहराये जा रहे थे, उनसे भट्ट को समझते में देर न लगी कि टीपू सुलतान ने तिरुवितांकूर पर आक्रमण करने का निश्चय किया है। भट्ट खुश हो उठा कि जवानी में जो पद उसने पाना चाहा था, उसे फिर से पाने की शुभ घड़ी आ गयी है। उसका दिल उछलने लगा, दिमाग तेजी से काम

करने लगा। यौवन के अपने पुरुषार्थों की स्मृतियों की बाढ़ सी आ गयी। उसने बड़ी गहराई से सोचा। वह उन विजयों और पदों की कल्पना करने लगा जिनको थोड़ा-सा परिश्रम करके वह पा सकता था। भट्ट को बड़ा आनंद आया कि वह अपने वीरव्रत की पूर्णाहुति कृतज्ञता और जीत की तृप्ति के साथ कर सकेगा। जब तक वह इन चिंताओं से उबरता तब तक स्थानपति अपनी बातचीत समाप्त कर चुके थे।

जिस सिपाही ने स्थानपतियों के लिए गुप्त रूप से दरवाजा खोला था, वह फिर दरवाजा बंद करके तिरुमल राव से प्राप्त होनेवाले पुरस्कार की खुशी की लहरों पर तैर रहा था कि काला चोगा पहने भट्ट उसके सामने जा खड़ा हुआ। उसने उसे कसकर छाती से जकड़ लिया। सिपाही की हड्डी-पसली चूर-चूर हो गयी और वह जमीन पर गिर पड़ा। उसकी लाश भट्ट के खुदवाये तालाब में फेंक दी गयी।

भट्ट ने उसी रात तिरुमलराव को अपने कमरे में निमंत्रित किया। राव का अभिवादन करते समय भी भट्ट का चेहरा क्रोध व द्वेष से तमतमाया हुआ था। महाब्राह्मण की गंभीर मुद्रा में पलंग पर बैठे भट्ट के कहने पर भी राव बैठे नहीं। वे मुलाकात जल्दी खतम करके बिदा होने को अधीर हो रहे थे। भट्ट अपनी प्रतिष्ठा में कमी आने नहीं देना चाहता था, अतएव थोड़ी देर नामजप के बहाने मौन बैठे रहने के पश्चात उसने हिंदुस्तानी में पूछा, "नीचे मंडप में जो विचार-विमर्श हुआ उसका सार क्या इस बूढ़े को भी बताने का कष्ट करेंगे ?"

तिरुमल राव ने इसके उत्तर में शुद्ध हिंदुस्तानी में प्रतिप्रश्न किया, "क्या गुरुजन जानते हैं कि सर्वेश्वर के कृपापात्र मंडलाधीश देशरक्षार्थ जो कार्य करते हैं, उन्हें अनैतिक ढंग से जानने की कोशिश करनेवालों को क्या भोगना पड़ता है ?"

आश्चर्यसूचक हंसी हंसते हुए भट्ट बोला, "धत ! तो यह भी सिखा दो कि स्वामी के गुप्त आदेशों का पालन सब पर प्रकट करनेवाले को कैसा दंड मिलना चाहिए।"

तिरुमलराव बोले, "टीपू सुलतान महाराजा बहादुर की प्रखर प्रतिभा भी यह मर्म न जान सकी कि महाराजा की कृपा से धनी बने गंगूराम सैठ ने शत्रु के जासूस सर्पराज को धर्मकर्ता नियुक्त किया है। क्या गुरुजी को पता है कि आपके इस दास के साथ कितने सैनिक आये हैं ?"

भट्ट ने इस प्रश्न का जो उत्तर दिया वह तिरुमल राव को पसंद नहीं आया। राव ने सोचा कि इसका उचित दंड देने के लिए तलवार लाना चाहिए था। राव के दिल की बात उनकी मुखाकृति से समझकर भट्ट बोला, "महाशय ! सुना था कि तिरूमल रावजी राजमंत्रियों के सुरगुरु हैं। अब पता लगा कि वे असुरगुरु हैं। अज्ञात अनंत शक्ति की करुणा से हम दो सौ वसंत पूर्ण कर चुके हैं। आगे इतनी ही अवधि पूरी किये बिना हम महासमाधि

ग्रहण करने को तैयार नहीं हैं। प्राचीनकाल में किसी के बाण फूल हो गये थे न? उसी तरह मेरे कंठ की तरफ आनेवाले खड्ग यज्ञोपवीत हो जायेंगे। हंस क्यों रहे हैं?"

भट्ट का अभिनय, भाषा, स्वरूप और आत्मप्रशंसा एक-दूसरे के अनुकूल नहीं थे, इसलिए राव वहां से चलने को तत्पर हुए।

इस पर भट्ट बोला, "ठहरिए! आप लोगों की बातचीत के दौरान रामराजा बहादुर शब्द का प्रयोग किया गया था न? प्रतिभाशाली हैदर अली ने उसे हराने के लिए एक महायोगी को नियुक्त किया था। स्वामी गंगूरामजी (हैदरअली खां बहादुर के हुक्म से योगिराज) को इस रियासत में शृंगेरीमठ की सी शान से रहने के लिए आवश्यक धनराशि भेजा करते थे . . . ।"

तिरुमल राव आश्चर्यचकित हो उठे। वे सोचने लगे, यह खूसट बूढ़ा तो मेरे स्वामी के राजकीय क्रियाकलापों के अंतरंग रहस्यों तक को जानता है ! भट्ट ने तिरुवितांकूर के पुराने इतिहास और राज-परिवार की स्थिति पर एक छोटा सा भाषण ही दे डाला। फिर बोला, "मैं प्रकृति से मितभाषी हूं। फिर भी अपने आराध्य टीपू सुलतान की विजय-कामना से इतनी बातें कह गया। टीपू सुलतान की विजय हो !"

तिरुमल राव हर्षित हुए कि उनके स्वामी को विश्वामित्र जैसे दिव्य सिद्धिवाले महात्मा मिल रहे हैं। उन्होंने भट्ट के चरणों की ओर हाथ बढ़ाया। भट्ट ने बीच में ही रोक कर उन्हें गले लगा लिया।

शीघ्र ही तिरुअनंतपुरम् पहुंचने के बाद भट्ट को टीपू सुलतान के लिए जासूसी करने का अधिकार दिया गया। वह माणिक्यगौंडन के छद्म नाम से जौहरी की पोशाक में जासूसी करने तिरुवितांकूर पहुंच गया।

2
गृहकलह की मुसीबत

तिरुअनंतपुरम नगर के सारे निवासी हर्षोल्लास में मगन हो रहे थे, किंतु एक भवन राजकृपा, प्रतिष्ठा और लक्ष्मी के प्रसाद से अनुगृहीत होने के बावजूद बिना चहल-पहल के, खामोश दीख रहा था। किले के भीतर, पूर्वी प्राचीर के समीप उत्तर की ओर खड़ा नंतियंतुमठम् नामक वह भवन शांत-स्तब्ध खड़ा था। इस परिवार के मुखिया नंतियं उण्णित्तान का सुपुत्र चिलंपिनेत्तु केशवन उण्णित्तान था, जो मामूली मुंशी के पद से उन्नति करते-करते राजकोष का मुख्य अधिकारी हो गया था।

उण्णित्तान का महत्त्व उसके सरकारी ओहदे के कारण नहीं था। संस्कृत भाषा पर उसका अद्‌भुत अधिकार ही इसका कारण था। महाराजा रामवर्मा भी काव्यरचना में उण्णित्तान से अपनी शंका का निवारण करते थे। उसकी आर्थिक स्थिति धनकुबेर की सी थी। पिता के पक्ष में कोट्टारक्करा की भूसंपत्ति, चिलंपिनाषिकं की चल-अचल संपत्ति, गोद ली हुई भांजी होने के नाते अनंतपद्मनाभन से उसकी पत्नी को मिला रामवर्मत्तु भवन और उससे लगी हुई जमीन-जायदाद कुल मिलाकर उण्णित्तान के पास अपार संपत्ति थी। नंतियंतुमठम् को चिलंपिनाषिकम् की छोटी लंका ही समझिए। प्रवेशद्वार के दोनों तरफ कांसे के भारी दीपदान पीठ पर उठाये गजराज शोभित हो रहे थे। भीतर प्रवेश करते ही बड़ा सहन दिखाई पड़ता था जो झाड़-बुहारकर साफ किया गया था। दक्खिनी और उत्तरी तरफ स्त्रियों और पुरुषों के लिए अलग-अलग बंने हुए स्नानघरों के साथ तालाब थे। दालान के पश्चिमी छोर पर दोनों तरफ केरलीय परंपरा के अनुसार कोट्टीयंबलम् (फाटक) वाला एक विशाल अष्टभुजा भवन था। मुख्य निवास यही था। इसके दक्षिण-पूर्वी कोने में दोनों तरफ खुला सहन था। इसकी सीढ़ियां और खंभे सुंदर शिल्पकला के नमूने थे। सहन की पश्चिमी तरफ उण्णित्तान का ग्रंथालय था। मुख्य भवन की उत्तरी दिशा में स्त्रियों के रहने के कमरे थे।

भवन के पश्चिम खंड के उत्तरी भाग के छोटे गलियारे में एक बड़े पलंग पर एक औरत लेटी थी, जो शोक या रोग से पीड़ित थी। राजधानी के आमोद-प्रमोद उसे जरा भी खुशी नहीं दे रहे थे। उसका ध्यान अपने पतिदेव उण्णित्तान के आमोद-प्रमोद में भाग लेकर लौटने पर भोजन कराने पर केंद्रित है। महाराजा तो अपने सचिव के साथ टीपू के

हमले का सामना करने के लिए रियासत की उत्तरी सीमा के सुरक्षा-प्रबंध का निरीक्षण करने गये थे। उन दिनों सचिव को दीवान कहा जाता था। महाराजा व दीवान वापस आये तो उनका स्वागत धूमधाम से किया गया। उण्णित्तान उसी समारोह में भाग लेने गये थे। स्वागत-समारोह की वाद्यध्वनि से वह स्त्री समझ गयी कि पतिदेव शीघ्र ही घर आ जायेंगे।

अभिजात कषक्कूट्टम् परिवार की मीनाक्षी उण्णित्तान की पत्नी थीं। वह खाट से उतरकर चौके में गयी। पति के पहुंचते ही उन्हें भोजन कराने का सारा प्रबंध करके वह फिर गलियारे में पलंग पर आ बैठी। किसी जमाने में स्वर्णकमल की तरह खिला उसका मुखमंडल सबको चकित कर देता था। वही अब शोक और उदासी से मुरझाया पड़ा था। उन दीर्घ नयनों के गाढ़े नीले तारे प्रकृति की कला-कुशलता की उत्तम सृष्टि के रूप में रूखे लोगों को भी विमोहित करते थे। इस दीनदशा में भी वे नेत्र कुलीनता की उज्वल किरणें बिखेर रहे थे। उसकी शारीरिक सुषमा भी अनन्य थी। खुले केश मुख के आधे से अधिक भाग पर बिखरे हुए थे, जिनमें एकाध सफेद बाल भी चमक रहे थे। अवस्था तो सिर्फ अड़तीस की थी। जहां अब भी यौवन का उल्लास होना चाहिए था वहां दुख और गहरी चिंता अकाल वार्धक्य का कारण बन गयी थी। वह बीच-बीच में नाम-संकीर्तन करती, पति के चरणों की आहट की प्रतीक्षा में बैठी थी।

उसी समय साँप की तरह रेंगता कोटंता आशान चुपचाप आंगन में आ गया। आशान केशवन उण्णित्तान का चेला और सेवक था।

प्लामण परिवार के 'आशान' लोग महाराजा की सेना के सेनापति होते थे। रामय्यन दलवा ने उनकी संपत्ति और पद-प्रतिष्ठा किसी और परिवार को दे दी। इसके बाद प्लामण परिवार वाले दक्षिण की ओर चले गये। वे नांत्तियम् परिवार की छत्र-छाया में रहने लगे। मामा ने कोटंता को केशवन उण्णित्तान के पास संस्कृत सीखने को भेजा था, पर वह पढ़ाई में बिलकुल कच्चा था। वह गुरुदेव के भवन में ही खाता-पीता था। वह उनके साथ तिरुअनंतपुरम् भी पहुंच गया। केशवन उण्णित्तान का चेला होने के नाते उसने तिरुअनंतपुरम् के युवा रसिकों के समाज में अपने लिए जगह बना ली।

दुबला और नाटा कोटंता हमेशा मुंडु पहनता था, जिसमें अपनी छाती को भी लपेट लेता था और किसी भी समय उसकी धोती ढीली होने की संभावना रहती थी। चौकोर मुख पर पतली लकीरों सी भौंहें, आठों पहर व्यंग्य की हंसी बिखेरते पतले होंठ, लंबा सोना-जड़ा जूड़ा, कहावतों और हावभावों से भरा वार्तालाप, सामान्य लोगों से मिलते समय भी जोर-शोर का भाषण—ये आशान की कुछ और खूबियां थीं। सत्य, शांति तथा ईश्वर उसके पास भी न फटकते थे।

पच्चीस वर्ष की उम्र होने के बावजूद शक्ल-सूरत में बहुत छोटा होने के कारण

कोटंता को यह डर नहीं था कि उसे फौज में भरती होना पड़ेगा। मगर दो बातों ने उसे एक गोरखधंधे में फंसा दिया था। अगर दुश्मन जीतेगा तो चोटी कटानी पड़ेगी। पहनने के लिए दो अच्छी बालियां बनवायी थीं, जिन्हें पहनना अब संभव न होगा, परंतु आठ-दस रोज पहले एक नये रिश्तेदार से मुलाकात होने पर गहने का भय दूर हो गया। अब आशान जिस युवती को मन ही मन प्यार करता था, उसे पत्नी रूप में पाने के वास्ते वह छन्द रचने लगा।

कोटंता समझता था कि गुरुपत्नी को बराबरी की हैसियत के नातेदार की तरह डांटने, बुरा भला कहने और जांचने का हक उसे भी है। आशान ने मीनाक्षी से कहा—"कुंजम्माजी, मंजन करके कुछ खा लीजिए न! डर की कोई बात नहीं है। उन म्लेच्छों के इस तरफ बढ़ने की कहानी . . . ।" आशान ने आंखें मिचकाकर इशारे से बताया कि ऐसा कभी नहीं होगा।

पति के विषय में मीनाक्षी अम्मा ने प्रश्न किया, "अभ. तक नहीं आये, इतनी देर क्यों हो रही है ?"

इस प्रश्न का उत्तर दिये बिना आशान अपने मन की अभिलाषाओं के अनुरूप आगे कहने लगा—"आज राजा की सवारी बड़ी धूमधाम की रही। दीवान साहब की नगर-परिक्रमा उससे भी शानदार थी। जो भी हो वे भाग्यशाली हैं। कुंजम्माजी, मन चंगा तो कठौती में गंगा मैं ठहरा भिखमंगा। फिर भी मुझ पर नजर पड़ी तो उन्होंने पालकी रुकवायी।" आशान ने एक शृंगारिक हंसी के साथ अपना कथन जारी रखा—"कितनी करुणापूर्वक उन्होंने प्रश्न किया कि कुंजम्मा का स्वास्थ्य कैसा है। प्रमाण है न मनोरम्यं रम्यं।"

मीनाक्षी ने आशान के कथन में छिपी चुगली और जहरीले बाणों पर ध्यान दिया। उसे बातचीत आगे बढ़ाने की इच्छा नहीं हुई। मगर आशान छोड़े, तब न ? वह बोलता गया—"हां एक बात तो छूट ही गयी। कुंजम्मा, अन्नदाता प्रभु की सवारी जब आगे बढ़ रही थी तब मेरे गुरुदेव का चेहरा कुछ कुम्हलाया हुआ था। दीवान साहब की तरफ आंख उठाकर देखा तक नहीं। क्या पता क्या कारण था। कुछ भी हो। कपास की दूकान पर कुत्ते का क्या काम ?"

मीनाक्षी अम्मा के दिल में हूक सी उठी। वह चिल्ला उठीं—"हे प्रभु! आशान मन ही मन बुदबुदाया, ". . . हां हां, इसी तरह सारी कलई खुलेगी।" फिर बोला, "कुंजम्मा! कृपा करके आप एक बार मुंह खोल दें तो कोटंता रूखा-सूखा खा के जिंदगी बसर कर सकेगा। अब दीवान साहब ही रियासत के राजा हैं। पलक मारते ही वे जमीन का पट्टा दिला देंगे। उड़ा हुआ सत्तू, पितरों को अर्पण। जमीन-जायदाद की व्यवस्था के लिए आपको भी एक सेवक तो चाहिए न ?"

मीनाक्षी अम्मा बोली, "सावित्री के पिताजी से कहो। तुम तो अब उनके लिए बड़े नेता हो न? उस तंपुरान (वर्माजी) को यहां लाकर फंसा दिया . . . "

कोटंता आशान ने बांहें ऊपर उठाईं । हाथ हिला कर मीनाक्षी अम्मा को रोकते हुए उसने कहा, "कुंजम्मा, यह क्या फरमा रही हैं? राम! राम! क्या बंदा सावित्री कुंजम्मा के देशनिकाले में सहायक होगा? ऐसा न कहें, चोर का गुस्सा दाढ़ी पर न उतारें! तंपुरान कितने दंभी हैं ! यही नहीं, छोटे कप्तानजी अब कितने हृष्ट-पुष्ट हैं!"

मीनाक्षी ने कहा, " उन बातों को रहने दो! मेरे छोटे आशान। . . . . आफतें ढाने का . . . " कोटंता, "आफतें ढाना? यह उन सब बातों से दूर रहेगा! त्रिविक्रम कुमार पिल्लै का स्वास्थ्य देखकर लोग मन ही मन डर गये कि कहीं यह अल्पायु तो नहीं होगा!"

"नारायण-नारायण," कहते हुए मीनाक्षी ने अपने कान बंद कर लिये। आशान ने अपने को धन्य माना कि अपनी इच्छा में बाधक बने दोनों व्यक्तियों के बारे में कुंजम्मा की दुखती रग पर हाथ रखने में वह सफल हुआ। इसी वक्त सावित्री आ गयी और मां से सटकर बैठ गयी। आशान बातचीत बंद कर उठ खड़ा हुआ।

आशान को रोकते हुए सावित्री ने उपहास के स्वर में कहा, "अरे नहीं! छोटे आशान, भाग न पाइयेगा। आप तो मेरे हंस हैं न? दोनों तरफ उड़ते चलने के लिए कुछ सानी-पानी क्या मजदूरी में नहीं चाहिए?"

मीनाक्षी अम्मा ने रुखाई से सावित्री की तरफ देखा।

छोटा आशान बोला, "रोज पीने से दूध भी कभी-कभी पानी जैसा बेस्वाद लगने लगता है।"

सावित्री — "ठीक है आशान, तो आपकी ही कहावतों में से एक मैं भी सुनाती हूं— लंबी-चौड़ी बात और पुराना फटा टाट! उस शूर वीर राजा के दीवान का पद अगर आशान को मिले तो. . . . "

मीनाक्षी—"बस-बस, सावित्री, हर किसी से चोंचें लड़ाने की आदत छोड़ देने की उम्र नहीं है तुम्हारी? राजा का नाम बदलकर उन्हें अपमानित करना ठीक नहीं।"

कोटंता—"इसमें क्या दोष कुंजम्मा? जिससे मन मिलता है उसी पर गुस्सा किया जाता है। विक्रमन पिल्लै से भी ऐसा ही बर्ताव करती थी बिटिया! अभी-अभी आयेंगे। मैंने राजा की सवारी के समय उन्हें देखा है। मेरी तरफ देखकर 'अभी आया' कह गये हैं। पीठ पर ऐसा धौल जमाया कि मेरा मुरब्बा बन गया।"

सावित्री ने उलाहने के स्वर में कहा—"कोई आये या जाये, आशान को क्या?"

कोटंता— "कहा है, मन की न भावे, सौतन कहावे। मेरा नसीब ही खोटा, किसी को क्यों दोष दूं?"

सावित्री— "रूठना मत आशानजी; आप तो पिताजी के बड़े लाड़ले हैं। शायद हमारी किस्मत भी खुल जाये।"

कोटंता— "कुंजम्मा! मैंने जो बात कही थी जरा इन्हें भी सुना दीजिए ! मैंने बिटिया की खुशामद नहीं की थी। राजा हमारे लायक नहीं... मैंने जोर से खंडन..."

मीनाक्षी ने आदेश के स्वर में कहा, "अब इसे भी अपने जैसा मत बना देना।"

सावित्री का खिला हुआ चेहरा फूल कर कुप्पा हो गया। आशान मां-बेटी के होनेवाले शास्त्रार्थ को रोकना नहीं चाहता था। उसने सोचा, इन्हें आपस में मरने-कटने दो। जिसकी मौत आयी हो उसे मरने से क्यों रोकना।

आशान जल्दी से विदा हो गया।

मीनाक्षी अम्मा की पांच कन्याओं में सावित्री सबसे बड़ी थी। शेष चारों छोटी उम्र में ही चल बसी थीं। अपनी नानी की याद में उसने बेटी का नाम सावित्री रखा। उसे गोद लेनेवाले बड़े मामा श्री अनंतपद्मनाभन दलपति ने उसका यह नामकरण किया था। दलपति ने अपनी मां के साथ बच्ची का रूप-सादृश्य देखकर ही यह नाम रखा था। उसका मर्म केशव पिल्लै को विदित था। जब तक दलपति जीवित थे, वे खुद सावित्री को पालते रहे। अपने देहांत के बाद उन्होंने सावित्री के पालन-पोषण का दायित्व केशव पिल्लै को सौंप दिया। सावित्री के बाद की चारों बच्चियां जब काल-कवलित हो गयीं तब माता-पिता का दिल पत्थर हो गया। सावित्री की मुखाकृति न पिता से मिलती थी, न माता से। मीनाक्षी अम्मा अपनी किशोरवस्था में केशव पिल्लै जी से हिली-मिली थी। इसकी समृति मीनाक्षी अम्मा के प्रति उनके पति के मन में घृणा का कारण बनी। यह खतरनाक गलतफहमी बराबर बनी ही रही। इसी कारण मीनाक्षी ने धीरे-धीरे बिस्तर पकड़ लिया।

बच्ची के पितृत्व के संबंध में उसके पिता को जो शंका हुई उससे सावित्री के माता-पिता का दांपत्य संबंध टूट-सा गया। इस रहस्य का बचपन में सावित्री को पता न था। वह दलपति के पोतों के साथ खेल-कूद कर बड़ी हुई। उसने अखाड़े में युद्धकला के दांवपेंच भी सीखे। कोई न कोई बहाना बनाकर वह अपने मित्रों को पिटवाया करती थी। उनके साथ उसने हिंदुस्तानी भी सीखी। किसी से डरे बिना वह सिंह शावक-सी बड़ी हुई। दुर्मुख पिता से वह दूर ही रहती थी। मगर केशव पिल्लै से वह खूब हिली-मिली थी। वे भी उसके साथ खेलते थे। उण्णित्तान की नफरत और शक इस कारण भी बढ़ते गये। दलपति ने सावित्री को वीरगाथाएं भी सिखाई थीं। यह शिक्षा उसके जीवन का आदर्श बन गयी। दलपति का स्वर्गवास दो वर्ष पहले हुआ। तभी से सावित्री ने नंतियम् मठ के पश्चिम खंड के दो कमरे अपने लिये चुन लिये और वहीं नौकरों के साथ अलग रहने लगी।

माता-पिता का आभिजात्य और शारीरिक कांति सावित्री को भी विरासत में मिले थे। उसका रूप-लावण्य प्राकृतिक रूप से निखार पर था। प्रकृति का यह भी नियम है कि तीसरी पीढ़ी की संतान का रूप-सादृश्य पहली पीढ़ी से होता है। केशवन उण्णित्तान को इस बात का पता न था। इसीलिए उन्हें यह संदेह शूल-सा गड़ रहा था कि सावित्री मेरी बेटी नहीं है।

कोटंता के चले जाने पर सावित्री फिर से प्रसन्न हो उठी। उसने मां से शिकायत की कि उन्हें उस चपल के सामने यह नहीं बताना चाहिए था कि उनकी बेटी उस धूर्त की आज्ञा मानकर चलेगी। मीनाक्षी अम्मा का ध्यान इस बात पर नहीं गया था। वह गृहकलह की संभावना से घबरा उठी। यह देख सावित्री ने मां को खुश करने के लिए पूछा, "क्यों मां ? यहां हाल ही में जो बाबाजी आये थे वे दिखाई नहीं देते ?"

मीनाक्षी—"कौन से बाबा ? उनसे तुम्हारा क्या मतलब ? पिताजी को यह सब बिलकुल पसंद नहीं। सावधान रहना।"

सावित्री— "उस महावृद्ध के पास जाना भी क्या पिताजी को अखरेगा ? शायद वे स्वयं परमेश्वर हों।"

मीनाक्षी— "हां हां, तुम्हें वरदान देने स्वर्ग से पृथ्वी पर उतरे हैं। खैर। आज इतना सज-संवर क्यों रही हो ? त्रिविक्रमन के स्वागत के लिए ?"

सावित्री— "यह भी हो सकता है। वैसे मामाजी से मुलाकात करने जाना था, इसलिए अच्छे कपड़े पहन लिये।"

मीनाक्षी—"मामाजी ? कौन-से मामाजी ? अगर दीवानजी मामा की बात कर रही हो तो मैं बताये देती हूं कि पिता की अनुमति लिये बिना उधर मत जाना।"

मां को चूमती हुई सावित्री बोली, "जो पिता मां के पास कभी आते नहीं वे कैसे पिता हैं ?"

गीली आंखों और रुंधे गले से मीनाक्षी ने कहा, "जा भाग . . . तुझे क्या पता ? सोने की गुड़ियां-सी चार-चार बेटियां जब हमेशा के लिए विदा हुईं तब तेरे पिताजी कितना रोये थे, यह तो मुझे ही पता है। इसी चिंता में मेरी देह को घुन लग गये। संभव है, दुख के मारे तेरे पिताजी को विराग हो गया हो।"

सावित्री— "पिताजी समझते होंगे कि मैं ही कुलच्छनी हूं, जिससे मेरी छोटी बहनें अल्पायु में चल बसीं। शायद इसीलिए वे मुझे अपनी पुत्री नहीं मानते।"

मीनाक्षी— "क्या कह रही हो ? बेटी न मानते तो तुम्हें रामवर्मत्तु भवन की तिजोरी और बहियां सौंप देते ?"

सावित्री, "न्याय और प्रेम एक नहीं हैं। मेरी मां से अगर उन्हें प्यार होता तो उन्हें

घरेलू मामलों में दिलचस्पी लेनी चाहिए थी; घर में नहाना-धोना और खाना-पीना चाहिए था। तिजोरी और बही भले वह अपने हाथों में ले लेते।"

मीनाक्षी— "उन्हें आने दो। जब राजा तुम्हें ले जायेंगे तब तिजोरी व बही का जिम्मा मैं ले लूंगी।"

सावित्री ने दृढ़ स्वर में कहा, "राजा के साथ तो कोई और ही जायेगी।"

मीनाक्षी अम्मा ने अपने पति की अप्रसन्नता बढ़ाने वाले और उनके प्रति अनादर की भावना वाले इस निर्णय से क्षुब्ध होकर बेटी को धमकाते हुए कहा, "देखो, तुम अब पहले वाली मुन्नी नहीं हो। चेंपकश्शेरी का कुट्टन आये तो उसका स्वागत-सत्कार करने और उससे बतियाने के लिए उतावली न होना।"

सावित्री— "अगर राजा पधारें तो ?"

मीनाक्षी— "चुप! चुप! उन्हें प्राप्त करना बड़े सौभाग्य की बात है।"

"सावित्री"— मां, यह बात जरा एक बार फिर कह के देखो तो ?"

मीनाक्षी अम्मा अपनी बेटी को इतना बड़ा धोखा देने को तैयार न थीं। इसलिए वह दातौन वगैरह करने के बहाने उठकर चली गयी। उसे विश्वास हो गया कि गृहकलह की भारी आफत सिर पर आ पड़ी है। और सावित्री मां को नीचा दिखाने के अपने प्रयत्न पर पछताती, फिलहाल बातों को ज्यों-का-त्यों छोड़ने का निश्चय करके अपने कक्ष की तरफ चल पड़ी।

3

त्रिविक्रमन को प्रवेश-निषेध

सावित्री थोड़ी देर अपने कक्ष के एकांत में शांति से रहना चाहती थी, पर यह संभव न हुआ। उसके वहां कमरे में पहुंचते ही नौकरानी कुंची दौडी आयी। उसने सूचित किया कि त्रिविक्रमन आया है और उससे मुलाकात करना चाहता है। सावित्री का उदास चेहरा एकाएक खिल उठा। वह तेजी से पिता के ग्रंथालय को लांघकर पूर्वी खंड के स्वागतकक्ष में पहुंच गयी। उन्हें एक-दूसरे को देखे डेढ़ वर्ष बीत चुका था। इस दौरान दोनों की शक्ल-सूरत में भी काफी परिवर्तन आ गया था।

सावित्री ने विक्रम से मुलाकात होने पर उसे सुनाने के लिए कई चुटकले याद कर लिये थे। मगर घनी मूंछों और तुर्की टोपीवाले छोटे भीम को देखने पर उन लतीफों को मुंह पर लाने की उसे हिम्मत ही न पड़ी। जब विक्रमन इसके पहले सावित्री से मिलता था तब वह शरारती कन्या उसे बराबर चिढ़ाती रहती थी। मगर आज उस युवक ने वहां अंग-अंग स्वर्णाभूषणों से सज्जित एक अप्सरा को अपने सामने पाया। उसकी अभ्यर्थना करने के शब्द ही उसे नहीं मिल रहे थे। उसने सिर्फ इतना ही पूछा, "क्या पिताजी घर पर नहीं हैं ?" सावित्री ने इसका भी एक ही शब्द में उत्तर दिया—"नहीं"। फिर उसने पूछा, "आने वाले हैं ?" इस पर वह बोली, "मां बीमार पड़ी हैं । चेट्टा, उनसे मिल लीजिए।"

'धर्मराजा' उपन्यास में वृद्ध सिद्ध के रूप में प्रकट होनेवाले मार्तंडन सेनापति के परिवार के वेलायुधन तंपी और चेंपकश्शेरी परिवार की कोच्चाम्मिणीजी का लाड़ला था त्रिविक्रमन। मां की तरह नाटे कद के बेटे ने मां का अपार सौंदर्य भी विरासत में पाया था। पिताजी की ओर से उसे शारीरिक शक्ति और शील विरासत में मिले थे। बचपन में सेनापति दादा उसे "नन्हा भीम" कहकर पुकारते थे। वह छोटे बच्चों का सा व्यवहार करता था, इसी से सभी मिलनेवाले उसे बहुत पसंद करते थे। उस युवक के भीतर जो जीवनी-शक्ति कूट-कूटकर भरी थी, वह एक बड़ी फौज को भी अकेले परास्त करने लायक थी। त्रिविक्रमन की विलक्षण स्फूर्ति को पहचनाकर अधिकारियों ने उसे उसकी बीस बरस की छोटी आयु के बावजूद, घुड़सवार सेना का उपसेनापति नियुक्त कर दिया था। प्रधान सेनापति के आदेश से त्रिविक्रमन केशव पिल्लै के अंगरक्षकों में अन्यतम हो गया।

आदत के अनुसार छेड़छाड़ और झगड़ा-फिसाद की बजाय त्रिविक्रमन और सावित्री को अपनी तरफ आते देख मीनाक्षी अम्मा के नयनों में खुशी के आंसू उमड़ आये। प्रेमी की भूमिकावाले युवक और बहन का अभिनय करनेवाली युवती के हावभावों का अंतर देखकर वह मुस्करा उठी। जो मां पहले उपदेश दे रही थी कि ज्यादा स्वागत-सत्कार मत करना, उसी की मुखाकृति का अंतर देख सावित्री को त्रिविक्रमन से हंसी-मजाक करने का साहस हो आया। वह मां से सटकर खड़ी हो गयी और त्रिविक्रमन की तरफ उंगली से इशारा करती हुई बोली, "देखिए न अम्मा! अब ये कैसे लगते हैं? आर्काट के नवाब या ट्रावनकोर पर धावा बोलनेवाले टीपू सुलतान?"

त्रिविक्रमन ने मीनाक्षी अम्मा को प्रणाम किया। इसके बाद सावित्री से वाक्-युद्ध के लिए तैयार हो गया, "माताजी! हमारी वह शरारत की पुड़िया नन्हीं सावित्री जिसे बचपन में कंधे पर उठाकर मैं घूमता था, कहां गायब हो गयी?"

सावित्री—"एक आदमी की नाक के नीचे ऐसी मूंछें उगी हैं कि आंख मुंह के भीतर समा गयी हैं।"

त्रिविक्रमन—"क्या करूं माताजी, अप्सराओं को देखकर मेरी आंखें चौंधिया जायेंगी न, इसीलिए ऐसी मूंछें उगायी हैं।"

मीनाक्षी—"तुम लोग छोटे बच्चों की तरह लड़ना-झगड़ना शुरू कर देते हो तो मैं इसमें क्या बोलूं? सावित्री तू चुप कर! बेटा विक्रम क्या टीपू की फौज इधर आयेगी?"

त्रिविक्रमन—"इसमें भी कोई शक है ? वैसे आगमन की दिशा का अभी पता नहीं है। हमारी फौज को उत्तर व दक्खिन में बांटकर रखा गया है। टीपू की फौजों के रास्ते में सभी इकट्ठे होंगे। उस वक्त का खेल देखने लायक होगा।"

सावित्री—"ये सभी बड़े तीसमार खां हैं न ! वह पहलवान राव तो अकेला ही है? पर कोई माई का लाल उसे हाथ लगाने की हिम्मत नहीं कर सकता।"

त्रिविक्रमन—"चौके में बैठकर ऊटपटांग मत बको। वैसे, साज-सिंगार करके खड़ी महिलाएं कुछ भी बोल देती हैं।"

सावित्री—"यह तो है! मगर मर्दों को शेखचिल्लीपना शोभा नहीं देता। मानना पड़ेगा कि पुराना राजकीय साहस अब एक सिरे से गायब है।"

त्रिविक्रमन—"शाबाश! गऊ जैसी सीधी-सादी सावित्री देवी आज तो सिंहनी की तरह गरज रही हैं। सुनिये कुंजम्माजी ! उसकी चुनौती के उत्तर में मैंने भी चुनौती दी थी। दीवानजी मामा ने आदेश दिया है कि अगर रणभूमि में लड़कर मरने की जल्दी हो तो एक देवी का हुक्म लेकर आना।"

सावित्री समझ गयी कि दीवानाजी ने 'देवी' शब्द का प्रयोग उसी के लिए किया होगा। फिर भी उसने इस बात पर रूठने का अभिनय किया कि उससे पूछे बिना त्रिविक्रमन

ने अपना विवाह तय कर लिया और बोली, "क्यों नहीं, किसी का हुक्म चाहिए तो वह लाम पर जाने के लिए भी चाहिए ? यों खड़े-खड़े डींग मत हांकिये। राव का सिर फोड़ने के लिए क्या किसी से पूछना पड़ेगा ? क्या घर का पालतू कुत्ता तभी भूंकना चाहिए जब कोई और चोर को पकड़ ले ? रहने दो तुम्हारी बहादुरी का मुझे पता है।"

त्रिविक्रमन—"तो हुजूर की लाड़ली बेटी चलकर हुक्मनामा दिलाइए न ? नहीं तो सत्यभामा भी मोर्चे पर जा डटेगी।"

मीनाक्षी—"वह सब छोड़ो ! बच्चो ! अगर फौज का धावा हो ही गया तो ये क्या करेंगे ? अभी तो जहां देखो वहीं लूट-मार, डाका, खून-खच्चर हो रहा है। चैन से रहने भी नहीं पाते।"

सावित्री—"रामवर्मत्तु भवन के विषय में मत घबराओ मां, इस रियासत में कौन-सी जगह ऐसी है जहां दीवानजी की नजर नहीं पहुंचती ?"

त्रिविक्रमन—"दीवानजी मामा की संरक्षिका सावित्री देवी के रहते फौज का भी डर नहीं है।"

सावित्री—"मुझे सावित्री देवी न पुकारना, हां !"

त्रिविक्रमन—"अरे हां, भूल हो गयी। कुंजम्मा पुकारना था न ? टीपू की तोप का संगीत सुनने का शौक है ?"

सावित्री—"बिना किसी की तरह कांपे सुनूंगी। साथ ले चलिएगा ? कद लंबा तो नहीं, पर चरबी काफी है।"

मीनाक्षी—"क्या पागलों जैसी बात कर रही हो ?"

सावित्री—"कैसा पागलपन ! मां ? किसी न किसी दिन मरना तो पड़ेगा ही। देश और माता समान होते हैं। प्रारब्ध अगर खींच ही ले जाये तो क्या किया जा सकता है ?"

तभी एक छिपकली बोल उठी। मीनाक्षी अम्मा ने अपशकुन के भय से भगवान का नाम लिया।

इसी समय कुंजी ने आकर खबर दी कि केशवन उण्णित्तानजी आ गये हैं। त्रिविक्रमन इशारे से फिर आने की सूचना देकर मुख्य भवन के पूरब की तरफ चला गया।

महाराजा के जलूस के बाद केशवन उण्णित्तान उनके दर्शन करके वापस आ रहे थे। चेहरा देखने से जाहिर था कि किसी गहरी चिंता में डूबे हुए हैं। कोई गहरी चिंता उन्हें परेशान कर रही थी।

उनके हाथ में एक ताड़ का पत्ता था जिस पर कुछ लिखा था। चिंतन के बढ़ने के साथ-साथ ताड़पत्र चूर-चूर हो रहा था। लंबा तन टेढ़ा होता जा रहा था। उनकी आंखें चंचल हो रही थीं। त्रिविक्रमन ने अनुमान से समझ लिया कि उनकी शांति में बाधा पड़ रही है। उसने हंसी दबाकर विनयपूर्वक प्रणाम किया। उण्णित्तान ने उसकी तरफ देखा

तक नहीं। किसी चिंता से परेशान वह बालों को उंगलियों से संवारते ग्रंथालय की तरफ चले गये। जाते हुए रास्ते में छाया की तरह अनुगमन करती नौकरानी कुंजी को देखा तो डांट कर भगा दिया। कुंजी ने सावित्री के पास जाकर बताया कि उण्णित्तानजी झुंझलाते हुए आ रहे हैं। उण्णित्तान विश्राम-कक्ष में प्रवेश करके बिस्तर पर पसर गये। उन्होंने अपने हाथ का ताड़पत्र दुबारा पढ़ा। उनकी मुखाकृति से स्पष्ट था कि इससे उन्हें बड़ी खीझ हुई है। उन्होंने ताड़पत्र की चिंदी-चिंदी करके उसे कूड़ेदान में फेंक दिया। महाराजा की सवारी के आगमन की व्यस्तता के समय ही वह पत्ता हाथ लगा था। उन्हें पता नहीं चला कि वह पत्र कौन लाया और देकर कहां गया। पत्र में एक गहरी और दुखदायी साजिश का संकेत था। अगर पत्र में लिखी बातें सही हों तो चिलंपिनषिकम की जायदाद और संपत्ति से वे हाथ धो बैठने वाले थे। उण्णित्तान को पता नहीं लगा कि पत्र में जिस पेरिंचक्कोड़न की चर्चा है वह कौन है। पत्र में यह भी बताया गया था कि टीपू के पक्षधर आस-पास षडयंत्र करने में व्यस्त हैं। उण्णित्तान ने सोचा कि पत्र के मर्म से महाराजा को भी अवगत करा देना चाहिए। मगर ऐसा करने पर एक और राज खोलना पड़ेगा। तब उसी व्यक्ति को दंड मिलेगा जिसने उण्णित्तान का बड़ा उपकार किया था। अपने हाथों उस व्यक्ति को दंडित कराना बड़ी कृतघ्नता की बात होगी। सोच-विचारकर उण्णित्तान ने यही निश्चय किया कि जिस गुरुजन ने मुझ पर भरोसा किया है उन्हें मैं जरूर बचाऊंगा। घटनाएं जो भी रुख अख्तियार करना हो करें।

उण्णित्तान को याद आया कि वह सिर्फ पूरबी नंतियम् परिवार की संपत्ति का स्वामी हो सकते हैं। वह ग्रंथालय के भीतर बेचैनी से बड़ी देर तक चहल-कदमी करते रहे। फिर उन्होंने सोचा कि पत्नी को सारी बातें समझा दें। इसीलिए मीनाक्षी को आवाज भी दी। लेकिन तभी उनका चेला कोंटता वहां आ पहुंचा। उण्णित्तान ने कोटंता को अपना भक्त, विश्वासपात्र एवं सत्यवादी समझ रखा था। ऐसा व्यक्ति मिल जाने के बाद पत्नी से सलाह-मशविरा करना व्यर्थ समझकर उण्णित्तान ने कोटंता से प्रश्न किया—"अरे, यह पेरिंचक्कोडन कौन है?"

आशान की हाल ही में अपने एक रिश्तेदार से मुलाकात हुई थी। उसी से पेरिंचक्कोडन का परिचय प्राप्त हुआ था। वह पुराण में वर्णित हिरण्याक्ष की तरह दक्खिनी तिरुवितांकूर में खुलेआम लूट-खसोट करने वाला एक आतंकवादी था। कोटंता को लगा कि गुरुदेव ने पेरिंचक्कोडन से मेरा परिचय जान लिया है और मुझे दंडित करने के लिए यह बात पूछ रहे हैं। उसकी घबराहट देखकर उण्णित्तान ने उसे समझाया—"घबराने की कोई बात नहीं। अगर पता है तो बता दो बस।" कोटंता ने आंखें बंद करके सोचने का अभिनय करते हुए उत्तर दिया—"कुंजम्मा को शायद पता हो। उन्हीं से कभी सुना था कि वह दीवानजी का कोई है। मुझे इसकी धुंधली सी याद है। आज उनका स्वास्थ्य कुछ ठीक

है। उझककर टहल रही हैं। नाक को छूने के लिए गर्दन के पीछे से हाथ लाने की जरूरत है? सीधे उन्हीं से पूछ लें तो पूरी बात मालूम हो जायेगी।"

उण्णित्तान क्रोध से उबल पड़े—"अरे, तू क्या बक रहा है?"

इस पर आशान ने उण्णित्तान के गुस्से की आग में घी डालते हुए कहा—"महाराजा के जलूस के बाद मैंने देखा कुंजम्मा बड़ी खुश नजर आ रही थीं। मुझसे केशवन पिल्लै के नये पद का अर्थ पूछ रही थीं। मैंने उसका अर्थ 'दोहरा स्वर्ग' बताया तो जोर से हंस पड़ीं।"

उण्णित्तान–"दुहरा स्वर्ग? वह क्या है रे?"

कोटंता—"मैंने शब्द का संधि-विच्छेद करके अर्थ बताया। "दिव घन वान"* अर्थात आकाश का देवता! और क्या अर्थ होगा?"

कोटंता की कल्पना सुन कर उण्णित्तान आगे के प्रश्न भूल गये। उनके मन की ईर्ष्या भड़क उठी। फिर भी कोटंता से जिरह की—"तो नयी दवा से मीनाक्षी के स्वास्थ्य को लाभ पहुंचा है, क्यों ?"

कोटंता—"क्या पता? चेंपकश्शेरी के कुट्टनपिल्लै, बिटिया सावित्री और कुंजम्मा को हंसी-मजाक करते और कहकहे लगाते तो सुना था।"

उण्णित्तान—"चेंपकश्शेरी के उस छोकरे का यहां क्या काम? दीवानजी ने हमें नालायक साबित करने के लिए उसे भेजा है। समझा?"

कोटंता—"समझ गया। मगर दीवानजी का क्या दोष ? बिटिया का मन ही तो खास तौर से देखना है। फिर भी 'हां' या 'ना'? कहने का हक तो घर के मालिक को ही है।"

ये शब्द उण्णित्तान के दिल में तीर की तरह जा धंसे। उन्होंने इतनी ऊंची आवाज में पत्नी को पुकारा कि कोटंता डर के मारे भाग खड़ा हुआ। अनाथ और रोगी मीनाक्षी दैन्य भाव से द्वार पर आकर आज्ञा की प्रतीक्षा करने लगी। उण्णित्ताने का मुखमंडल देखते ही उस बेचारी को महसूस हुआ कि पति से संबंध-विच्छेद की घड़ी आ गयी है। पतिदेव ने बड़ी कठोर आवाज़ में पूछा, "बोलो! तुम्हें क्या चाहिए? मैं या चेंपकश्शेरी के लोग?"

मीनाक्षी ने दोनों हाथ गालों पर रखे। सिर झुकाये कहा, "राम जाने आप ऐसा क्यों कह रहे हैं? आपने अग्नि को साक्षी मानकर विवाह-मंडप में मेरी बांह पकड़ी है। बेचारी

---

* "वान" का मलयालम में अर्थ है—आकाश

सावित्री आपकी बेटी है। आपके चरणों के सिवा हमें और कहां शरण है? हमसे क्या पूछते हैं? आपको जो अच्छा लगे वही हमारे लिए ठीक है।

उण्णित्तान जैसे बिस्तर को संबोधित करते बोला, "वाह! तुम्हारी खूबियों का हमें पता है। थोड़ा-बहुत दूसरे भी जानते हैं। ज्यादा बताने की ज़रूरत नहीं है। स्त्रियों की जीभ से पंचामृत की मिठास जब वे चाहें तभी झरने लगता है।" पल रुक कर एक व्यथित स्वर में उन्होंने फिर कहा, "विवाह वेदी की मीनाक्षी तो अठारह वर्ष से ही कहीं खो गयी। क्या कहूं ? तिरुवनंतपुरम् नगर में जिस वनदेवी को देखा था वह ... अब ... " कहना चाहते थे 'वेश्या' पर सौभाग्य से वह शब्द मुंह से नहीं निकला।

पतिदेव की इस अतिशय निष्ठुरता से मीनाक्षी अत्यंत दुखित हो उठी। इसी बीच उण्णित्तान ने मानसिक क्लेश व क्रोध से भरे स्वर में फिर कहा, "सब कुछ तो हो गया। भगवान जाने अब कौन सी आर्थिक हानि और अपमान भाग्य में लिखा है। मैंने सोचा भी नहीं था कि ऐसी आफत आयेगी। ग्रहों की कुदृष्टि की भी एक हद होती है। जी चाहता है कहीं चला जाऊं ! चेंपकश्शेरी की संतानों का इस परिवार से क्या काम? तुम लोगों के नातों-रिश्तों से मेरा कोई मतलब नहीं। सुन रही हो न? याद रखना, जिस दिन वह त्रिविक्रम कुमार इस घर की देहली पर पांव रखेगा उसी दिन सारा दृश्य बदल जायेगा।"

इसके बाद उण्णित्तान बिस्तर पर पसर गया। अश्रुधारा बहाती हुई मीनाक्षी अम्मा अपने बिस्तर की तरफ लौट पड़ी। आड़ में खड़ा कोटंता यह सब सुन रहा था। वह बेहद खुश होकर अगले कार्यक्रम की योजना बनाने लगा। उण्णित्तान की आखिरी प्रतिज्ञा सुनकर त्रिविक्रमन को लगा कि धरती घूम रही है। वह थोड़ी देर के लिए मूर्ति की तरह स्तब्ध खड़ा रह गया। वह सिर से पांव तक पसीने से तर हो गया। पसीने की बूंदों से फर्श पर उसके पैरों के निशान पड़ गये। अपने दादा की सहायता से वह सभी कार्यों में सफल होता आ रहा था। उनके स्वर्गवास के साथ-साथ उसकी सारी कामनाएं बिखर-सी गयीं। यह सोचकर उसकी आंखें गीली हो गयीं। उसने तुरंत आंसू पोंछकर लिये और सोचा, "देखा जायेगा, देश के रक्षक देवता मेरी भी रक्षा करेंगे।"

फिर त्रिविक्रमन एक सेनापति की तरह सीना फुलाने वहां से चल पड़ा। मानो शेरे-मैसूर को मारने के लिए युद्धभूमि की ओर चल पड़ा हो।

4
कंठीरव कारागार में

अपना प्रतियोगी न होने का दावा करनेवाला पहलवान राव एक ही दिन में दो-दो बार चित हुआ। पहली बार एक साहसी उजड्ड देहाती से टकराकर और दूसरी बार कुश्ती सीखे हुए एक नवयुवक से। अंत में उसे कैदखाने का मेहमान भी बनना पड़ा।

स्वाति तिरुनाल महाराजा ने आगे चलकर "नया बंगला" बनवाने के लिए जो जगह चुनी थी, वहीं महाराजा एक दिन पीपल के पेड़ के नीचे मंत्र जपते हुए धीरे-धीरे टहल रहे थे। थोड़ी दूर पर संतरी और सेवक इस तरह खड़े थे कि उनके एकांत में बाधा न पड़े।

इसी बीच संतरियों की मनाही की परवाह किये बिना पहाड़ जैसा एक जीव आगन में कूद पड़ा! गिरते ही उसकी नाक व घुटने धरती में धंस गये। जो उसे रोक रहे थे उन्हें गाली देते और ठठाकर हंसते हुए उसने स्वयं अपनी कुशलता को सराहा।

सात फुट लंबा और उसी हिसाब से मोटा, मजबूत पुट्ठों वाला वह आदमी 'मामाजी' पुकारते हुए महाराजा के सामने जा खड़ा हुआ और अपने आगमन का उद्देश्य बताया। दक्षिण तिरुवितांकूर की बोली में उसकी बातचीत महाराजा को बहुत पसंद आयी—"कल्लरक्कल पिल्लै नामक एक गृहस्थ दीवानजी से मिले थे। बातचीत के दौरान दीवानाजी ने बताया कि यहां कोई साहसी आवारा आया है। उसे हरानेवाला न मिलने से महाराजा बहुत दुखी हैं। तब आपके सेवक अषकन ने कहा–मैं उससे लड़कर उसे चित करूंगा। वह सुन कर कल्लरक्कल पिल्लै ने मुझे दुत्कार कर भगा दिया। अपने अन्नदाता मालिक का सम्मान रखने के लिए मैं यहां आया हूं।"

अषकन पिल्लै की कहानी सुनकर महाराजा का दिल पिघल गया। उन्हें पूरा विश्वास था कि मल्लयुद्ध में एकदम अशिक्षित यह आदमी कंठीरव से टकरायेगा तो इसकी हड्डी-पसली चूर-चूर हो जायेगी। इसलिए उन्होंने उसे निरुत्साहित किया। उम्र पूछने पर उसने बताया कि पहाड़ी बाढ़ के दिनों में उसका जन्म हुआ था। अषकन पिल्लै हठ करता रहा कि उसे कंठीरव से मिला दिया जाये। जब उसे बताया गया कि राव दीवानजी की निगरानी में है, तब अषकन ने पूछा कि क्या उसे पेटी में बंद करके रखा गया है? जब वह बोला कि राव के सिर पर घूंसा मार कर उसे खत्म कर देगा तो महाराजा ने डांटा

कि ऐसा करना धोखेबाजी होगी। फिर उसने निवेदन किया कि महाराजा का खास कक्ष एक बार दिखा दिया जाये। महाराजा ने कहा कि यह नामुमकिन है।

अषकन पिल्लै ने स्पष्ट कहा, "बहानेबाजी नहीं चलेगी। मैं भी अपने बाप का बेटा हूं। यहां से जाऊंगा तो राव को हराकर ही जाऊंगा। तब तक यहीं जमीन पर बैठा रहूंगा। जो रोकने आयेगा वह अपने अंतिम संस्कार के लिए किसी को साथ लेकर आये।"

रूठा हुआ सा पैर पसारे वह वहीं बैठ गया। महाराजा अपनी हंसी रोकने में असमर्थ हो वहां से चले गये। अषकन पिल्लै गाने गाता, पेड़ों के पत्ते गिनता, उन पर बैठी चिड़ियों को पत्थर फेंककर उड़ाता बैठा रहा। राजमहल के सेवकों ने मना किया तो अषकन पिल्लै ने उन सब की हंसी उड़ायी। महाराजा के आदेश से राजमहल के सर्वाधिकारी उसे बिना तकलीफ दिये वापस भेजने के लिए स्वयं आये। उन्होंने अषकन पिल्लै को षड्रस भोजन कराया, कपड़े-लत्ते और पैसे देकर विदा कराना चाहा। मगर विदा कराने की बात आयी तो अषकन ने भेंट की चीजें लौटाते हुए कहा—"यह क्या हुजूर? अगर यह उंगली गले में डाल दूं तो जितना खाया है सब बाहर निकल आयेगा, मगर मुझे सिर के बल खड़ा कर दें तब भी मेरी राजभक्ति नहीं जायेगी।"

सर्वाधिकारी ने पूछा, "राव तुझे जान से मार डाले तो?"

अषकन पिल्लै ने उत्तर दिया, "आपको क्या ? मेरी चिता में आग लगा देना ! मेरी जन्मदात्री मां सम्मानपूर्वक मेरा अंतिम संस्कार कर लेगी।"

सर्वाधिकारी अषकन पिल्लै को बिठाकर उसके दृढ व्रत की सूचना देने महाराजा के पास गये।

महाराजा के आदेश से उसी दिन शाम को कंठीरव और अषकन पिल्लै की कुश्ती का प्रबंध किया गया। राजमहल के दक्षिण-पूर्वी भाग की खाली जमीन को कूट-पीटकर सपाट बनाया गया। दीवानजी से लेकर अन्य अधिकारियों तक सभी कुश्ती देखने आ गये। पास ही एक सुरक्षित स्थान पर महाराजा ने आसन ग्रहण किया। अषकन ने केरलीय ढंग से पहनी धोती को खुलने से रोकने के लिए कमरबंद से अच्छी तरह कस लिया। उसके शरीर पर चंदन के त्रिपुंड अंकित थे। स्थानीय उस्तादों ने संक्षेप में कुश्ती के कायदे-कानून उसे समझा दिये। शस्त्रधारी सैनिक सावधान खड़े थे, ताकि जरूरत पड़ने पर शांति स्थापित कर सकें।

अषकन पिल्लै ने चारों तरफ नजर घुमा कर देखा कि कहीं उसके स्वामी कल्लरक्कल पिल्लै तो नहीं आये हैं। उन्हें वहां न पाकर उसको मन ही मन खुशी हुई। उसने पूछा कि क्या महाराजा पधारे हैं। यह भी कहा कि महाराजा के पधारते समय बाजा बजता होगा।

कंठीरव पहलवान बड़ी शान से अखाड़े में उतरा। बैरागियों ने छ-सात ढोलों से

'ढम-ढम' का नाद गुंजाया। शहनाइयां बजीं। राव का दल हरे झंडे फहराता हिन्दुस्तानी गीत गाता अखाड़े में उतरा। राव और उसके शिष्यों का दल जब कतार में खड़े हुए तब अष्कन पिल्लै से उनका अंतर देख दर्शकों को आश्चर्य हुआ।

अष्कन पिल्लै ने ओंठ बिचकाये, उंगलियां चटकायीं, और प्रतिद्वंद्वी का उपहास करने के लिए नखरे दिखाये। उसका ध्यान महाराजा के पधारने की सूचना पर केंद्रित था। महाराजा ने दोनों पहलवानों को देखा तो करुणा से उनके नेत्र सजल हो उठे।

मल्ल कंठीरव को वीर राक्षस खरदूषण और त्रिशिरा का सम्मिलित रूप कहा जा सकता था। आबनूस सा रंग, सिर के बाल सफाचट कि प्रतियोगी उन्हें पकड़ न सके, गोल माथा, गोल आंखें, चकोरपंख की तरह संवारी गयी मूंछें, जनेऊ ,धारी लोहे की मूर्ति की सी छाती, कालिख लगी उल्टी कांसे की कड़ाही सा पेट, जरीदार अंगरखा, कमर पर चमड़े की कमरबंद, चार भनायक दांत —कुल मिलाकर वह ब्रहमराक्षस जैसा लग रहा था। राव ने कुश्ती के लिए ललकारा, पर बात अष्कन पिल्लै की समझ में नहीं आयी। वह टहलते हुए नजरों ही नजरों में उसे तौलता रहा। कसरत करते, ललकारते और ताल ठोंकते हुए राव पूरे अखाड़े में घूमता हुआ अपना रंग जमा रहा था।

अष्कन पिल्लै आगे बढ़ा। वह ऊपर देखता तालियां बजाता रहा। एकाएक कंठीरव उछला और उसने मुट्ठी बांधकर अष्कन पिल्लै के दांए-बाएं, सिर और नाभि को लक्ष्य करके घूंसा मारा। अष्कन ने मछली की तरह तड़पकर, सांप की तरह छिटककर अपने को बचा लिया। उसे न पसीना आया था और न वह हांफ रहा था। अष्कन के इस बचावी दाव ने राव और उसके साथियों को बहुत चिढ़ा दिया। उन्होंने कई भाषाओं में अष्कन को धिक्कारा।

चेलों का सुझाव मानकर राव ने दांव बदला। वह दोनों हाथ ऊपर की ओर उठाये अपनी कसी हुई कमर दिखाता खड़ा रहा और अष्कन पिल्लै से अपनी कमर पकड़ने को कहा। चालाक पहलवानों की कमर को कच्चे पहलवान कसकर पकड़ने लगते हैं तो अनुभवी पहलवान पहले सांस रोककर झुकता है, फिर एकाएक झटके से उठता है। तब कच्चा पहलवान अपने प्रतिद्वंद्वी के सिर के ऊपर से पलटी खाकर नीचे जा गिरता है और मर जाता है। महल के जो कर्मचारी यह राज जानते थे उन्होंने अष्कन को रोकने की पूरी कोशिश की मगर तब तक अषकन पिल्लै राव की कमर को हाथ से पकड़ चुका था।

राव खुश हुआ। मगर यह खुशी ज्यादा देर तक टिकी न रह सकी। अष्कन ने जमकर खड़े राव को सांस लेने तक की फुर्सत न देते हुए जोर से दोनों हाथों में भींच लिया। राव घबरा गया कि वह कहीं मर न जाये। उसने अपने हाथ नीचे करके अष्कन पिल्लै की बांहों के बीच में घुसाने की कोशिश की, मगर वहां एक बाल बराबर भी जगह नहीं मिली। राव अष्कन पिल्लै के सिर, हाथ और पीठ पीटता रहा, पर कोई लाभ न

हुआ। अजगर की कुंडली में फंसे जानवर की तरह राव की रीढ़ चरमराने लगी। राव को लग रहा था कि उसकी सांस हमेशा के लिए रुक जायेगी और छाती फट जायेगी। उसकी आंखें लाल हो उठीं। उसके हाथ आकाश और अपने शरीर को नोचने लगे। अषकन पिल्लै का शरीर भी डावांडोल होता दिखाई दिया। राव सुअर की तरह गुर्राया। उसकी नाजुक हालत देख उसके सहायक मदद देने को आगे बढ़े। सिपाहियों ने उन्हें रोका। "मुझे अब अपनी मां के पेट में लौटकर नहीं जाना है," गरजते हुए अषकन पिल्लै ने कहा। उसके सिर के ऊपर राव मेंढक की तरह छटपटा रहा था। अषकन पिल्लै ने राव को गेंद की तरह आगे की तरफ उछाल दिया। दर्शकों ने आनंद से जयजयकार किया।

अषकन पिल्लै ने धोती झाड़कर पहन ली। सिर पर अंगोछे की पगड़ी बांधी। उसके बाद इस उंद्दडता की खातिर क्षमा मांगने कल्लरक्कन पिल्लै के पास जाने को तैयार हो गया। राज-सैनिकों ने उसे पुरस्कार लेने को पुकारा। "यह क्या बला है ?" कहता हुआ वह आड़ के पास पहुंचा। तब उसको मालूम हुआ कि महाराजा वहीं विराज रहे हैं। दक्षिण की शैली में जोहार करते हुए वह आगे बढ़ा। वहां बैठे वृद्ध को देख उसको यकीन नहीं आया। उसने ध्यान से देखा। तभी अषकन पिल्लै को पता चला कि सवेरे उसने जिनसे बेअदबी का बर्ताव किया वह वृद्ध स्वयं महाराजा थे।"बापरे।"कह कर सिर पीटते हुए वह भाग निकला। तीस मील की दूरी पर अपनी बूढ़ी मां और भाइयों के पास पहुंचने के बाद ही उसके पांव थमे।

महाराजा ने निश्चय किया—किसी के आदेश या निमंत्रण के बिना ही देश की लाज रखने स्वयं आगे आने वाले 'सेवक' अषकन पिल्लै को समाज में प्रतिष्ठा मिलनी चाहिए। उन्होंने सेना और जन-प्रतिनिधियों के सामने दीवानजी को आदेश दिया कि इसकी व्यवस्था की जाये।

कुश्ती के समय एक अति वृद्ध ब्राह्मण मामा वेंकिटन दीवानजी के कंधे से सटे खड़े थे। राव के चित होने पर मामा वेंकिटन ने अषकन पिल्लै को लक्ष्य करके "मंगल होगा शीघ्र तुम्हारा वीर महात्मन" शीर्षक कथकलि गीत गाते हुए उसका नृत्याभिनय भी किया। दीवानजी जब महाराजा के पास पहुंचे तब मामा ने त्रिविक्रमन से कुछ विनोदपूर्ण बातें कीं।

महाराजा दीवानजी से कंठीरव के इरादों के बारे में पहले ही सुन चुके थे। वह एक प्रकार से दीवानजी की देखरेख में कैदी की तरह रखा गया था। राव के विजयी होने पर उसे देने के लिए पुरस्कार की भी व्यवस्था की गयी थी। महाराजा ने निश्चय किया कि दीवानजी से सलाह करके ये पुरस्कार राव को ही दे दिये जायें। महाराजा चाहते थे कि उसकी एक परीक्षा और ली जाये। पुरस्कार के रूप में एक फारसी तलवार, एक दुपट्टा और कुछ कड़े तैयार कराये गये थे। महाराजा ने राव को पेश करने का आदेश दिया।

अषकन पिल्लै की मुट्ठी से छूटते ही राव पहले की तरह फुर्तीला हो गया था। बदन पर लगी धूल-मिट्टी झाड़कर उसने कोई गरम पेय पीया, तो वह पहले का सा पहलवान लगने लगा। एक मामूली से जंगली आदमी से कुश्ती लड़ने को राजी होने की अपनी बेवकूफी पर उसे अफसोस हुआ।

जब उसे पता चला कि उससे महाराजा मिलना चाहते हैं तब वह बड़े तपाक से गरजता हुआ मंडप के भीतर पहुंचा। महाराजा ने बड़ी शांति और सौजन्य से कहा, "राव, आज की घटना का बुरा न मानना। तुम खुशी से यह मानकर वापस जाओ कि तुम्हारी बराबरी के पहलवान यहां नहीं हैं। सुविधानुसार आगे भी आना। स्वागत करेंगे। यहां का हालचाल और तैयारियां तो देख ही चुके हो ! ये सब बातें जब टीपू सुलतान से निवेदन करना तब एक बात और भी कह देना। हमारी उम्र अब मैसूर जाने लायक नहीं रही। यदि कभी सुलतान का इस तरफ आना हुआ और उन्होंने यहां पधारने की मेहरबानी की तो आपस में बातें करके समझौता करेंगे। जो भी हो, हमारे प्रति उनके मन में जितनी मित्रता होगी, उसी मात्रा में उनके प्रति हमारे मन में भी होगी। पद्मनाथजी की कृपा से हम प्रजा सहित सकुशल रहते हैं।"

जब महाराजा ये बातें कह रहे थें तब राव की भौहें टेढ़ी होती-होती फुफकारते हुए सर्पराज के फन सी हो गयीं। उसने सोचा—"अगर इस बुड्ढे को मैं जान से मार डालूं तो देश अनाथ हो जायेगा। मंत्री को चारों ओर से दुश्मन घेरे हुए हैं। मेरे जैसे गुप्तचर आसानी से जरूरी काम कर लेंगे। टीपू महाराजा की सत्ता जमाने का यही सबसे अच्छा मौका है। यहां की फौज को रोकने के लिए एक तगड़ी फौज तिरुअनंतपुरम् पहुंच चुकी है। सोची हुई बात पर अमल करेंगे। सफल होने पर टीपू महाराजा का काम आसान हो जायेगा। सफल नहीं हुए तो हमारा सिर धड़ से अलग कर दिया जायेगा। अगर यही हो तो भी यश तो मिलेगा ही। मेरे परिवार की व्यवस्था टीपू महाराजा कर ही देंगे।"

महाराजा के नजदीक रखी हुई तलवार उठाने को राव आगे बढ़ा। यह देखकर मामा वेंकिटन ने "ठहर पापी !" चिल्लाते हुए त्रिविक्रमन को राव की तरफ धकेल दिया। बाघ की तरह गोल आंखों से घूरते, अपने काले दांत दिखाते और हुंकार करके तलवार को म्यान से निकालने का उपक्रम करते राव की पीठ पर त्रिविक्रमन जा गिरा। महाराजा को बचाने आगे बढ़े दीवानजी स्तब्ध रह गये। सेनापति, सैनिक और दर्शक राव को मार डालने को तैयार होकर उसे घेरने लगे। राव के अनुचर भी हथियार निकाले भीड़ में जा घुसे। अपने वध के प्रयत्न से अविचलित महाराजा ने इस युद्ध को रोक दिया।

राव और त्रिविक्रमन की नियमानुसार कुश्ती हुई। दोनों का प्रदर्शन बड़ा शक्तिशाली था। दो-तीन पारियां चलीं कि दर्शक निश्चय ही न कर सके कि विजयी कौन है और चकित होकर बैठे रहे। दोनों चित होते-होते बच गये। मर्मविद्या जानते हुए भी त्रिविक्रमन

ने उसका प्रयोग नहीं किया और नियमानुसार ही कुश्ती लड़ी। जनता ने इसकी तारीफ की। दोनों शूरमाओं का काफी खून बहा। अंत में चित पड़े राव की बांहें त्रिविक्रमन के पांवों के नीचे आ गयीं। उसकी हथेलियां राव की छाती में धंस गयीं। गोली खाये बाघ की तरह राव दर्द के मारे चीख उठा। त्रिविक्रमन का दिल पसीज गया। उसने राव के हाथों को छोड़ दिया। राव पीठ के बल पड़ा रह गया। त्रिविक्रमन उठकर महाराजा के पास गया और उन्हें प्रणाम किया। कंठीरव राव के लिए जो वीर श्रृंखला आदि पुरस्कार मंगाकर रखे गये थे वे सब महाराजा ने त्रिविक्रमन को भेंट कर आशीर्वाद दिया। मामा वेंकिटन ने पुरस्कारों को लेकर अपनी आंखों से छुलाया और आशीर्वाद दिये—"इसी तरह अगली बार भी विजयी होना।"

दीवानजी ने कंठीरव और उसके साथियों को जेल में बंद रखने का आदेश दिया।

5

षड़यंत्रकारी दल का भेदिया कोटंता

महाराजा ने राव को कुश्ती में पछाड़ देने के उपलक्ष्य में त्रिविक्रमन को पुरस्कार दिये, उसे देखकर कोटंता आशान की छाती पर सांप लोटने लगे। उसकी आंखों के आगे अंधेरा छा गया और वह वहां से चल पड़ा। उसे यकीन हो गया कि महाराजा के प्राण बचाने के कारण त्रिविक्रमन की प्रतिष्ठा बहुत बढ़ गयी है। आशान ने देखा कि इस घटना के कारण त्रिविक्रमन के साथ सावित्री के विवाह की संभावना बढ़ी है और कोटंता को वह मुश्किल से ही मिलेगी। त्रिविक्रमन का हरण कराने पर ही यह समस्या हल हो सकती थी। कोटंता को पता था कि त्रिविक्रमन को दामाद के रूप में पाने की कोशिश में पेरिंचक्कोडन लगा हुआ था। उसे पता था कि पेरिंचक्कोडन इसके लिए कुछ मंत्र-तंत्र भी करा रहा है। उसने निश्चय किया कि जरा भी समय गंवाये बिना पेरिंचक्कोडन से मिलकर उसके प्रयासों में तेजी लानी चाहिए। इसलिए कोटंता इस दुष्कृत्य के उपयुक्त किसी भीषण स्थान की तरफ रवाना हुआ।

तिरुअनंतपुरम् नगर की वेश्याओं के साथ मेल-मिलाप रखना कोटंता आशान का मनपसंद काम था। इसलिए वह नियमित रूप से रात के वक्त इनके घरों की परिक्रमा किया करता था। अपनी एक परिक्रमा के दौरान नगर की उत्तरी सरहद की एक तंग गली में वह फंस गया।

'हुजूर कचहरी' नाम से प्रसिद्ध वर्तमान सचिवालय का मुहल्ला इस उपन्यास में वर्णित घटनाओं के दिनों में जंगल के पीछे पड़ता था। वहां सिर्फ वन-बिलाव, सियार आदि ही होते थे। जंगल के मध्य भाग में कंटीले पौधे भरे थे जिस कारण आम लोग वहां प्रवेश भी नहीं कर पाते थे। बीच-बीच में ऊंचे पेड़ोंवाले छोटे मंदिर भी थे। फिर भी दुर्दांत दस्युओं के आवास के रूप में बदनाम होने के कारण इन स्थानों की ओर आदमी नजर फेर कर भी नहीं देखते थे। मुर्दाखोर जंगली कुत्तों का भूंकना दिन-रात सुनाई देता था। लोग इसे पिशाचों का क्रंदन समझते थे। रात के समय इन मंदिरों से इधर-उधर उड़ते उल्लुओं की आवाज इस जगह को और डरावना बना देती थी।

राजमहल के बगीचे से कोटंता आशान इसी जगह की तरफ चला था।

पहले हम बता चुके हैं कि ऐसी ही एक परिक्रमा के बीच कोटंता एक गली में फंस

गया। उस दिन दो किरात जैसे व्यक्तियों ने उसे पकड़ लिया। उन्होंने उसके मुंह में वह अंगोछा ठूंस दिया जिसे वह अपने गुरुदेव के चोरी-छिपे कंधे पर डाल कर आया था। बेहोशी की हालत में वे उसे उठाकर ले गये। होश आने पर उसने एक धुंधला-सा दृश्य देखा। उसने पाया कि एक घोर वन में वह कुछ किरातों और वनचरों के राजा के सामने खड़ा है। उसने भयभीत होकर बहुत सी बातें उगल डालीं। उसने कसम खायी कि वहां देखी हुई सारी बातें वह एकदम गुप्त रखेगा। उसने यह भी मान लिया कि राजमहल की सूचनाएं समय-समय पर उन्हें देता रहेगा। इसका पुरस्कार उसने पेशगी प्राप्त कर लिया। उत्तरी जिलों से महाराजा के लौटने के दिन केशवन उण्णित्तान ने कोटंता से पूछा था, "यह पेरिंचक्कोटन कौन है रे?" उसके बाद से आशान ने इस वन की परिक्रमा स्थगित कर रखी थी। मगर कोटंता को लगा कि कंठीरव राव के जेल में बंद होने की सूचना भील राजा को देना जरूरी है।

आशान ने कदम तेज किये। वह खुश था कि कूनक तुरंत मिलेगा और कामिनी पीछे। मगर उस भीषण स्थान के पास पहुंचते-पहुंचते वह भय के मारे कांपने लगा। जंगल में जगह-जगह से धुआं उठ रहा था। आशान को अंदाजा हो गया कि वहां अनेक लोगों के लिए भोजन तैयार हो रहा है। उसे पहले से पता था कि वह महाराजा एवं दीवानजी के खिलाफ साजिश का अड्डा है। आशान यह सोचकर थर्रा उठा कि वहां बहुत-से लोग होंगे। चारों ओर खामोशी छायी थी। जंगल में उसके कदम रखते ही एक अस्पष्ट-सी आवाज सुनाई पड़ी। उसके उत्तर में कहने का 'प्रतीक शब्द' आशान को तुरत याद नहीं आया। तब जंगल के पीछे से बंदूक का घोड़ा चढ़ाने की आहट आयी। उसे फौरन प्रतीक शब्द—"पल्लिकोंडन" याद आया। उसने वह शब्द दुहराया और आगे बढ़ने की अनुमति पायी। कुछ जगहों पर प्रश्न था—"यारेंपरा"। थर-थर कांपता कोटंता एक घने वृक्ष-समूह के पास पहुंचा। तब जंगली भैंसों जैसे कुछ लोगों ने उसे पकडकर तलाशी ली कि कोई हथियार तो नहीं है उसके पास। तलाशी के बाद वहां खड़े लोगों ने आशान का प्रेम से स्वागत-सत्कार किया। उनमें से एक व्यक्ति उसे अपने किरात प्रधान के पास ले गया।

आशान ने पेड़ों की ओट में नारियल के पत्तों से छायी हुई झोंपड़ी में प्रवेश किया। उसने सोच रखा था कि वहां सांपों से भरा पोखर होगा। इसलिए कहीं सिर टकराने, झुकने, भय से कांपते दिव्य आदेश की प्रतीक्षा में खड़ा रहा। आशान ने पता कर लिया था कि उस घुप अंधेरे में भद्रकाली का दास, मंत्र-तंत्र में कुशल, भूत-प्रेतों की शक्ति से भविष्यवाणी करने वाला चोरों का राजा रहता है। वह एक गुप्त समिति का नायक है और उसने आशान को अपना मित्र मान लिया है। मगर आशान ने उसे प्रत्यक्षतः नहीं

देखा था। वहां आशान मानों मृत्यु-देवता के सामने खड़ा था। तभी हथियार उठाकर दूर रखने की आहट सुन पड़ी। इससे उसे पता लगा कि अंधेरे में बैठा आदमी सुरक्षित है।

अंधेरे की आवाज ने अपनी जबान में नये हालचाल के बारे में पूछा। आशान ने राव पहलवान के कैद होने की खबर सुनायी। आशान के गुरुदेव द्वारा उससे पेरिंचक्कोडन का परिचय पूछना, गुरुदेव और दीवानजी की अनबन, सावित्री और त्रिविक्रमन के विवाह प्रस्ताव का गुरुदेव द्वारा घोर विरोध आदि समाचार भी दिये।

आशान को रुपयों की एक थैली मिली। उसे लेकर आशान हवा की गति से भाग निकला।

आशान के जाते ही, सफेद कपड़े पहने हुए एक दीर्घकाय व्यक्ति अपने कुछ अनुयायियों के साथ माणिक्यगौंडन की दूकान की तरफ जाता दिखाई पड़ा।

वह पेरिंचकोडन था। वही परप्पांडा नाम से चोरों के राजा के रूप में, किसी को अपनी सूरत देखने की अनुमति दिये बिना, कार्य करता रहा था। थोड़ी देर पहले उसी ने कोटंता आशान से बातें की थीं।

6
कोटंता का दूतकर्म

केशवन उण्णित्तान ने जब से क्रोधपूर्वक चिलांपिनेत्तुमठम् की देहली पर त्रिविक्रमन के कदम रखने का घोर विरोध किया तब से मीनाक्षी की तबीयत और खराब रहने लगी। उसने खाट पकड़ ली। सावित्री एकांत में रहने लगी।

परंतु जिस दिन राव पहलवान से त्रिविक्रमन ने कुश्ती लड़ी उसके दूसरे दिन सवेरे कोटंता आशान की बातों ने मीनाक्षी अम्मा का मौनव्रत तोड़ दिया। आशान ने अष्कन पिल्लै और राव के मल्लयुद्ध का वर्णन करते हुए कहा, "कुंजम्माजी, धर्मयुध्द में खास-खास दाव-पेंच मना हैं। मगर कुट्टन पिल्लै (त्रिविक्रमन) ने रावजी को मर्म-विद्या से ही हराया था। राव चित हो गया। उसका मुंह खुला रह गया। वहां खड़े दर्शक रो पड़े। हमारे पुरखे जिन दिनों वलियाशन (गुरु) होते थे तब के रचे हुए ग्रंथ अब भी हमारे घरों की छतों पर मिल जायेंगे। उनमें लिखा है कि ऐसा करना धोखा है। राव महाराजा को मारने थोड़े ही जा रहा था। महाराजा जब अपने करकमलों से तलवार उठाने का कष्ट करने लगे, तब उस कष्ट से उन्हें बचाने के लिए राव ने आगे बढ़कर महाराजा की सहायता ही की थी। भला उस भीड़ में महाराजा पर हाथ उठाकर कोई अपनी मौत बुलाता? छिः! छिः! 'नायर' कुल की लाज ही गंवा दी त्रिविक्रमन ने।"

मीनाक्षी अम्मा त्रिविक्रमन को उसके बचपन से ही जानती थी। इसलिए उन्होंने आशान के एक भी शब्द पर यकीन नहीं किया। जब आशान ने कहा कि उस युवक ने पूरे 'नायर' समाज को लज्जित कर दिया तब उन्हें इस बात पर आपत्ति करना जरूरी लगा। मीनाक्षी अम्मा ने कहा, "ठहरो। किससे यह बकवास कर रहे हो? त्रिविक्रमन मेरी गोदी में पला बच्चा है। दलपति मामा ने उसे कठोर अनुशासन में पाला-पोसा है। इस पूरे क्षेत्र में विरले ही होंगे जो पिता की उदारता से अपरिचित हों। कोटंता ! तुमने चेंपकश्शेरी परिवार को क्या समझ रखा है? आगे एक भी शब्द न बोलना। अगर द्रोह की बात करोगे तो भगवान तुम्हें दंड देगा। पता नहीं, इन दिनों तुम अपनी हैसियत भूलकर इतनी मुंहजोरी क्यों कर रहे हो? मुझे तंग करने फिर इधर मत आना।"

यह सब सुनने के बाद भी आशान वहां से टस से मस न हुआ। इस पर मीनाक्षी अम्मा ने कहा, "आशानजी! अपनी कल्पना का घोड़ा दौड़ा कर औरों को परेशान न

करो। यहां से चले जाओ !"

प्रणाम की मुद्रा में हंसते हुए कोटंता ने कहा, "कुंजम्माजी ! जमाना बदल गया है। सचाई का क्या मोल? दूध भी रोज-रोज पीने से खट्टा लगने लगता है। मैं तो एक और खबर सुनाने आया था। साढ़े-साती सवार थी इसलिए सच बोल बैठा। मेरे दिन बुरे हैं। इन दिनों अगर किसी को चुटकला सुनाता हूं तो वह भी उसे नहीं भाता। फिर भी आपकी दया से दो रोटी मिल ही जाती है।"

मीनाक्षी अम्मा—"क्यों नहीं ? छोटे आशान ! तुम जहन्नुम में जाओगे। मेरी सावित्री बेटी को तुमने कोई दुधमुंही बच्ची समझ रखा है! वह तुम्हारी महिमा से थोड़ा-बहुत परिचित है।"

आशान के कहा, "मैं रात-दिन बिटिया के लिए योग्य वर की प्रभु से कामना करता रहता हूं।" इस पर मीनाक्षी अम्मा बोली, "राजा साहब की बात पक्की करके दुबारा नयी योजना बनाने का नतीजा आपको मालूम है न!"

आशान—"सुनिए कुंजम्माजी, आप के चेहरे पर वह नाम सुनकर जो घृणा उपजी थी अब भी बनी हुई है। कुंजम्मा को वे साहब स्वीकार्य नहीं हैं। बिल्कुल नहीं। आशान और कुट्टन पिल्लै का तो छत्तीस का नाता है। इस माहौल में कोटंता की तुच्छ बुद्धि के अनुसार एक छोटा-सा समझौता कर लेना जरूरी लगता है। दोनों को राजी-खुशी रखने से हम जैसे आश्रित लोगों को बड़ा चैन मिलेगा।" फिर आवाज धीमी करके बोला, "दीवान साहब का भानजा कोच्चिरयिम्मन तंपी हमारी बिटिया के लिए अत्यंत उपयुक्त है। सारा क्रोध छोड़कर सरकार गुरुदेव से निवेदन करें तो बात बन जायेगी। एक दूसरे को मिलाने का जिम्मा मेरा रहा। मेरे पेट की चिंता से आपको मुक्ति मिल जायेगी।"

मीनाक्षी अम्मा कुछ नहीं बोलीं। कोटंता ने कुछ और उपदेश देने के बाद अपनी बात यों समाप्त की—"शादी-ब्याह का मामला बहुत कुछ देखने-परखने के बाद ही तय करना होगा। बात खुलने न पावे। ब्याह होने के बाद ही सबको पता चलना चाहिए।"

इसके बाद कोटंता वहां से चला गया। मीनाक्षी अम्मा ने उसकी बातों पर बिल्कुल गौर नहीं किया।

केशवन उण्णित्तान प्रतिदिन बड़े सबेरे महाराजा से मिला करते थे। महाराजा से भेंट करने के बाद कुछ अन्य कार्य करके वे अपने घर को लौट रहे थे कि पद्मतीर्थ सरोवर की पूरबी दिशा में हाथी की पत्थर की मूर्ति की आड़ में खड़े कोटंता पर उनकी नज़र पड़ी। उन्होंने उसे इशारे से बुलाकर हाल-चाल पूछा। कुछ ऊटपटांग बातें करने के बाद आशान हाथ मलते और दुविधा का अभिनय करते हुए बोला—"कुंजम्मा ने एक उपाय सोच लिया है।"

उण्णित्तान—"कुंजम्मा की बातों में एक तो दखल न देना। दूसरे उधर का संदेशा

इधर भी मत लाना। बेचारी औरतों को परेशान करने की आदत छोड़ दो।" फिर दृढ़ स्वर में पूछा, "तुमने पता किया कि पेरिंचक्कोडन कौन है ?"

कोटंता—"करिंचक्कोरावन नाम का कोई व्यक्ति यहां नहीं है।"

उण्णित्तान—"धत् ! मूर्ख ! करिंचक्कोरावन नहीं, पेरिंचक्कोडन ! चलो छोड़ो। अब तुम्हें पता करने की जरूरत नहीं।"

कोटंता—"जी नहीं, बिल्कुल नहीं, दीवानजी का भानजा छोटा तंपी. . . ."

उण्णित्तान—"इरयिम्मन तंपी है न ? उसकी सिफारिश तुम किस सिलसिले में कर रहे हो ? उसकी जरूरत भी क्या है ? वे लोग तो आज देश में शासन कर रहे हैं। खुशामद करके उनसे कुछ लेना हो तो और बात है ! देखना हम पर कोई मुसीबत न लाना।"

कोटंता—"सावित्री बिटिया का उनके साथ विवाह करना अच्छा रहेगा।"

उण्णित्तान—"यह किसके दिमाग की उपज है ?"

आशान—"माताजी के।"

क्रोध में भर कर उण्णित्तान ने पूछा—"माताजी। किसने कहा उससे ?"

कोटंता—"सो तो नहीं पूछा।"

उण्णित्तान—"संकल्प जाने बिना चढ़ाया गया भोग भी कैसा भोग है, मूर्ख ?"

कोटंता—"दूसरे लोग अपनी हैसियत भुलाकर कुछ कर बैठें तो क्या दोष इस नाचीज का है ? दीवान साहब, "मैंने कुंजम्मा से निवेदन किया था कि उन्हें हुजूर से परामर्श कर लेना चाहिए।"

उण्णित्तान—"मुझे ये सारी बातें बिल्कुल नहीं सुननीं। तुम अभी जाओ। सीधे जाकर बबलाशेरी महाराज से मिलकर यह पता कर आना कि उनका क्या निर्णय है ?"

कोटंता ने सुझाव पेश किया कि अगर दीवानजी का भांजा पसंद न हो तो त्रिविक्रमन ही बेहतर होगा। उसने यह भी बताया कि त्रिविक्रमन महाराजा का भी प्रिय पात्र हो गया है।

उण्णित्तान—"हां, आज अन्नदाता उसके बारे में पूछ तो रहे थे।"

कोटंता—"तो महाराजा के आदेश के पहले ही उनके दिल की बात पर अमल करना होशियारी होगी।"

उण्णित्तान—"बकवास बंद करके मेरे हुक्म की तामील करो। वह लड़का देखने में भी सीधा है, आचार-व्यवहार में भी। राजा साहब अब स्नान के लिए प्रस्थान करेंगे।"

आशान फिर भी खड़ा नखरे दिखाता रहा तो उण्णित्तान क्रोध में आकर बोले—"अरे, तुम तो शकुनि बन बैठे हो ! किसी को जुआ खेलने का सुझाव देना चाहते हो तो उसे मेरे पास भेज दो ! संकोच न करना।"

आशान ने जब झिझकते हुए अस्पष्ट शब्दों में कुछ कहा तो उण्णित्तान बोले, "तू रहा

बुद्धू का बुद्धू! तू उस राजा के बारे में कुछ कह रहा है न! वे तो संपत्ति, वीरता और सौंदर्य में हमारे लिए अत्यंत लोभनीय हैं! अरे! अरे तू क्या सोचता रहा है? यह क्या कोई मामूली बात है? धन, पद, यश . . . . ."

आशान ने जब सुझाया कि उस राजा के महल की आचार-पद्धति हमसे भिन्न है तब उण्णित्तान ने कहा कि वह सब मैं जानता हूं।

आशान—"नहीं नहीं, क्या उनके पास वैसे ही और सेना है जैसे यहां अपने सुलतान के पास?"

उण्णित्तान—"धत्, मूर्ख! तू कहां का जोतिषी है कि सुलतान के आने की पक्की भविष्यवाणी करता है। बोलते समय अपनी गरदन का भी ख्याल रखा कर।"

आशान—"चेंपकश्शेरी के पिल्लै को ठुकरा देने के पहले यह तय करना चाहिए कि वह मित्र है या शत्रु। क्या हमें यह नहीं सोचना कि वह अन्नदाता का दोस्त है या दुश्मन?"

अपने चेले की होशियारी से आश्वस्त होकर उण्णित्तान ने निश्चय किया कि इसे एक अच्छे ओहदे पर पहुंचना चाहिए। उन्होंने सोचा भगवान के भजन के लिए आया अतिथि मुसलमानों का पक्षधर नहीं हो सकता। फिर बोले, "तू जा। मेरा दिमाग और आंखें अभी सही-सलामत हैं। कुछ भी हो, वह शत्रु नहीं हो सकता। जो धूर्त लोग मेरा सर्वनाश करना चाहते हैं उन्हें मेरी जानकारी में और मेरे जीते जी कुछ नहीं मिलेगा। कोई नहीं मिला तो अपने वंशधर हैं, आश्रित हैं। तंपुरन न सही, उनमें से ही कोई सावित्री को ब्याह ले जायेगा।"

कोटंता ऐसा खुश हुआ, जैसे ब्रह्माजी के निवास कमलपुष्प का सारा शहद उसके सिर पर बरस पड़ा हो! फिर भी खुर्राट कोटंता दुख का अभिनय करते हुए बोला, "यह तो बड़ी ज्यादती है, हुज़ूर। जब अपने ही बंधुजनों के बीच धनी व प्रतिष्ठित युवक हैं तब कन्या को किसी अंधे कुंए में फेंककर उसकी जिंदगी बरबाद तो नहीं ही करनी चाहिए।"

उण्णित्तान हंस पड़े। उसे ब्बलेश्वर से मिलने के लिए रवाना किया और कहा कि पेरिंचक्कोडन के बारे में अब ज्यादा परेशान होने की जरूरत नहीं।

कोटंता आशान किले के भीतर वलिय कोयिक्कल महल की तरफ बड़ी तेजी से चल पड़ा। वहां विदेशी पोशाक पहने बड़े रूखे स्वभाव वाले पहरेदार खड़े थे। अविलंब आशान को भीतर जाने की अनुमति मिल गयी।

इस महल में इट्डण्णि कंडप्पन नामक एक और व्यक्ति भी रहता था। इस गोपुरतुल्य बृहत्काय व्यक्ति को किसी ने देखा न था। यह टीपू के पहले ही यहां आ गया था। असली अजितसिंह यही था। बाहर अजितसिंह नाम से प्रसिद्ध बब्बलेश्वर इसी की

आज्ञानुसार बड़ी शान का जीवन बिता रहा था। वास्तविक अजितसिंह तिरुअनंतपुरम् नगर के कई भागों का चक्कर लगा चुका था।

अजितसिंह का हाव-भाव युक्त वार्तालाप कोटंता को बड़ा विचित्र लगा। जब उसने सावित्री और मीनाक्षी अम्मा के लावण्य की चर्चा बड़ी लोलुपता से की तब कोटंता ने कहा—"कुंजम्मा तो क्षयरोग से बिस्तर पकड़े हुए हैं।"

अजितसिंह—"क्षयरोग उस स्त्री को कृशोदरी बना देगा। बस इतना ही होगा न? मगर छोटी-सी लड़की को ब्याहना मूर्खता है। उसे राजमहल का भी शासन करना होगा और देश का भी? अगर मेरी धर्मपत्नी में इन दोनों क्षमताओं का अभाव हो तो हमारे लिए वह बोझ हो जायेगी।"

कोटंता ने सूचित किया—"उण्णित्तान आपका अंतिम निर्णय जानना चाहते हैं।"

अजितसिंह—"अरे, आशानजी! हमारा तो उण्णित्तान के साथ रिश्ता जोड़ने से ही मतलब है। तुम भी मेरे साथ आ जाओ! हम तुम्हें अधिकारी नियुक्त कर देंगे। तुम हमारे प्रतिनिधि हो जाना। समझे कुछ?"

कोटंता—"ऐसा मत कहिए। गुरुदेव जान से मार डालेंगे।"

अजितसिंह—"अरे मूर्खराज! वासुदेव के सुदर्शन चक्र को अपनी ढाल से रोकने के लिए तो हम हैं ही? अगर हठ करेंगे तो विवाहमंडप में विधिवत् विवाह कर लेंगे। हमारे देश में प्रवेश करने पर वह तुम्हारी पत्नी रहेगी।"

आशान बड़ी दुविधा में पड़ गया। उसके मन की शंका को पहचानकर अजितसिंह ने आदेश दिया—"अरे, मेरी बातें ज्यों की त्यों मानकर चलो। परप्पांडा के आदमी को इसे अस्वीकार करने का हक नहीं।"

अजितसिंह एक पल अपनी उंगलियों से बाजा बजाता रहा, फिर बोला, "देखो। हम सब कुछ ठीक कर लेंगे। समझ गये न ? अगर तुम्हें जान प्यारी हो तो उण्णित्तान को लाकर हमारे चरणों पर डाल दो।"

एक दास ने आशान को वहां से बाहर पहुंचा दिया। कोटंता को पूरा यकीन हो गया कि परप्पांडा से मेरा नाता माननेवाले अजितसिंह महाराजा के दुश्मन है।उसने यह भी जान लिया कि यह आदमी अपनी बात न माननेवाले को जैसे भी हो कुचल कर छोड़ेगा। कोटंता मन ही मन अफसोस करने लगा कि धोखेबाजी, गुरुद्रोह और लोभ उसे भारी आफतों की ओर खींच लिये जा रहे हैं। वह धीरे-धीरे आगे बढ़ा। उसके इंतजार में खड़े उण्णित्तान ने जब प्रश्न किया कि राजा का क्या जबाब है, तभी उसे याद आया कि अजितसिंह ने अपना कोई निर्णय नहीं बताया था। उसने जवाब दिया—"हुजूर आज पधारेंगे।"

आशान के चले जाने के बाद इट्डण्णि कंक्डप्पन ने अजितसिंह के पास आकर

पूछा, "तुमने जासूस को क्या जबाब दिया ?"

अजितसिंह ने दास्यभाव से उत्तर दिया—"उसे उलझन में डालकर भेजा है।"

अजितसिंह को उण्णित्तान के पास उनकी पुत्री के भावी वर के वेष में पहुंचने का आदेश मिला, क्योंकि यह निश्चित था कि उण्णित्तान चाहें तो एक हजार सिपाही और एक बड़ी धनराशी मिलेगी। उसे यह आदेश भी प्राप्त हुआ कि मिलते समय उण्णित्तान को होनेवाली आर्थिक क्षति के बारे में भी बताना। अजितसिंह ने सहमति जताते हुए बड़ी धीमी आवाज में कहा—"जी महाराज।"

7
राजद्रोह का गवाह और सहायक उण्णित्तान

सोने, चांदी और तांबे के सिक्कों की खनखनाहट के बीच उण्णित्तान राज्य के कोषाध्यक्ष के काम कर रहे थे। उसी समय अजितसिंह के एक चोबदार ने आकर उन्हें एक पत्र दिया। उस पत्र में लिखा था कि अजीतसिंह उसी रात चिलपिनेत्तु भवन आयेंगे।

उण्णित्तान शीघ्र ही अपना काम पूरा करके नांतियत्तु मठम् गये। अच्छे कामगारों को बुलवाकर दालान, देहली, तालाब की सीढ़ियां, सामने के बड़े-बड़े दरवाजे, दीवारें आदि चमकाने के काम में लगा दिया। अच्छी तरह से सफाई करायी गयी। सांझ होने पर भी नियमित पूजा-आरती के बजाय कांसे के दीपदान मंगाये और उन्हें कतार में सजाकर जलाया। बरामदों में दो तीन बड़े दीप सजाये। स्वागतकक्ष में इंद्रधनुषी रंग के बेल-बूटों से सजा कालीन बिछाया गया। उण्णित्तान ने बरामदे में खड़े होकर पूरी सजावट का निरीक्षण किया। दालान में सिर्फ कालीन बिछाना पर्याप्त न लगा। उसने एक डच-कुर्सी लाकर डाल दी, जिसका वे गोरों का स्वागत करने के लिए उपयोग करते थे। उस कुरसी पर कालिदास, माघ आदि के महाकाव्य रखे थे। उन्होंने उन ग्रन्थों को नीचे धकेल दिया। कुर्सी को तालाब पर ले जाकर धुलवाया और पोंछकर दालान में डलवाया। वह सम्राट के सिंहासन के समान चमक उठी। आकाश तारों से चमक उठा और नंतियत्तु मठम् दीपों से।

उण्णित्तान बड़ा प्रसन्न हुआ। फिर भी उसे किसी चीज की कमी अनुभव हुई। सोचने पर उसे वह कमी दीख गयी। वह स्त्रियों के निवास की तरफ गया और सावित्री को बुलवाया। उसे सिर से पांव तक ध्यान से देखा और डांटते हुए कहा, "लगता है मेरी बेटी को आज्ञाकारिता छू तक नहीं गयी है। त्रिविक्रमन के आने पर जो कपड़े तुमने पहने थे, उन्हें पहनने की आज क्यों नहीं सूझी? मेरी इच्छा से जब एक राजा यहां पधारने वाले हैं, तब तुम लोगों को मेरी बेइज्जती कराने की सूझती है। तुम भी तो अपनी मां की ही बेटी हो न? खैर, यह कुलच्छनी वेष जल्दी बदलो।"

कुंची पास खड़ी ये बातें सुन रही थी। उसने कहा, "तैयार होने की आज्ञा दिये बिना यों अभियोग लगाना तो उचित नहीं। बिटिया ने क्या हुजूर की तरह पुस्तकें पढ़ी हैं कि हर बात पहले से सोच लेतीं।"

उसकी बात उण्णित्तान को ठीक लगी। वह पत्नी के शयनकक्ष की तरफ गया। गंभीर स्वर में उसने शांतिपूर्वक कहा, "कृपा करके म्लेच्छ वस्त्र बदल लो।"

मीनाक्षी—"मैं तो अभागन हूं, जो आपकी ऐसी जली-कटी सुनने को मजबूर हूं। पर सावित्री को ये बातें पसंद नहीं आयेंगी।"

उण्णित्तान—"हां, हां, मालूम है, आप लोगों को मेरी बातें पसंद नहीं आयेंगी। मैंने आप लोगों को खुश रखने का ठेका नहीं लिया है।"

मीनाक्षी—"कैसी बात कर रहे हैं? कहीं वह किसी कुंए या तालाब में डूब मरी तो हमारी कितनी बेइज्जती होगी?"

इतना कहकर वह रुंआसे स्वर में "हे भगवान" पुकार उठी। उण्णित्तान पूर्वी बरामदे की तरफ चले गये।

रात के दस बज गये। फिर भी बब्बलेश्वर नहीं आये। उण्णित्तान ने नाश्ते के बाद से कुछ खाया-पिया न था। अतएव उसे तेज भूख व थकान लग रही थी। तिरुअनंतपुरम् नगर के निवासी निद्रालीन हो चुके थे। असमंजस में पड़ा उण्णित्तान कोटंता को एक सेवक के साथ बब्बलेश्वर के पास भेजने ही वाला था कि अहाते के फाटक पर शोर सुनाई पड़ा।

अजितसिंह आया था। उसके अनुचरों की ढाल-तलवार रोशनी में चमचमा उठीं। उण्णित्तान मन ही मन कृतकृत्य हुआ कि गृहकलह की जिम्मेदार सावित्री की एकदम उचित तरीके से विदाई की पहली मंजिल वह पार कर गया। वह अजितसिंह का स्वागत करने आगे बढ़ा। अजितसिंह दाहिने हाथ में गुप्ती लिये, बाएं हाथ के रूमाल से छाती को पंखा झलता, खड़ाऊं की खट-खट से "मैं शठ" "मैं शठ" की आवाज करता आ रहा था। उण्णित्तान ने उसे हाथ जोड़े और हल्के से सिर नवाया। अजितसिंह ने खड़ाऊं बाहर ही उतार दिये। स्वागत-कक्ष में प्रवेश करने के बाद वह विलायती कुर्सी पर नहीं बैठा। थोड़ी देर झिझकता खड़ा रहा और आंखें चारों तरफ दौड़ायीं। उसके बाद उंगलियों से ताल बजाया। कोटंता दूर खड़ा गुरुदेव का व्यवहार ध्यान से देख रहा था। थोड़ी देर में फाटक पर की रोशनी में हाथों के इशारे पाकर वह उस तरफ चला गया और अनुचरों का नेतृत्व संभाल लिया।

अजितसिंह ने संसार की उत्पत्ति के बारे में चर्चा शुरू कर दी थी। इधर वे बातचीत में मशगूल थे, उधर अपने कक्ष में बैठी सावित्री की गोदी में कुंजि ने एक वीर शृंखला लाकर डाल दी। वह वीर शृंखला कुश्ती में कंठीरव को चित करने के उपलक्ष्य में महाराजा की तरफ से त्रिविक्रमन को पुरस्कार में मिली थी। त्रिविक्रमन को वीर श्रृंखला मिलने की बात सावित्री, कुंचि से पहले ही सुन चुकी थी। इसलिए उसे पूछने की जरूरत न थी। सावित्री ने प्रश्न किया, "वे कहां हैं?" कुंजि ने बताया—"पच्छिम के अहाते में इंतजार

कर रहे हैं।" सावित्री उठी और एक पल सोच में पड़ी रही—"अजब संयोग है! दोनों एक ही समय पधारे हैं। वे कैसे जान गये कि राजा साहब यहां आये है? एकदम से निकल पड़े! झगड़ा-टंटा हो सकता है, शायद खून-खच्चर भी हो जाये। इससे मेरे सज्जन पिता की बेइज्जती होगी। फिर हमारा जीना ही व्यर्थ होगा।"

यों सोचती हुई वह गंभीरता से चल पड़ी।

त्रिविक्रमन भी मरने-मारने को तैयार होकर आया था। उसके तेवर देखकर सावित्री ने गंभीरता से पूछा, "इसका मतलब क्या है, चेट्टा ?"

त्रिविक्रमन—"वही मैं भी पूछना चाहता हूं। तिरुअनंतपुरम लौटने पर मैंने कई तरह की कहानियां सुनीं। पर मैंने किसी पर विश्वास नहीं किया। सोचा कि सावित्री मेरी ही है? उस दिन मिलने आया तो तुमने चकमा देकर लौटा दिया. . . .।"

सावित्री—"क्या कह रहे हो, चेट्टा? यह शब्द तुमने कहां से सीखा?"

जवाब न सूझने पर भी क्रोध से कांपते हुए त्रिविक्रमन ने कहा, "मैं उसका सिर धड़ से अलग कर दूंगा। अवश्य करूंगा। देखूं मुझे कौन रोकता है? मुझे तो आने की अनुमति तक नहीं और उससे पधारने की प्रार्थना की जा रही है।"

सावित्री—"तुम मुझे मार ही डालो तो बहुत अच्छा हो। यह न समझना कि बाद में होनेवाली बेइज्जती देखने के लिए मैं और मां जिंदा रहेंगी। यह कैसी हठ है? वीर पुरुषों में कुछ तो गंभीरता होनी चाहिए।"

त्रिविक्रमन—"क्या करुं? जाति-च्युत होकर मैं बहुत दुखी हूं, मुझे गाली तो मत दो। वैसे भी सावित्री में करुणा नामक चीज नहीं है।"

सावित्री—"चेट्टन में जरा धीरज नहीं। लोगों को पहचानने के शक्ति भी नहीं। बचपन के साथी चेट्टन अब बिलकुल बदल गये हैं। जाति से निकाल दिया? किसने? यह सब छोड़िए, यहां से चले जाइए। वीर शृंखला मेरे पास ही रहेगी। मेरे प्यारे चेट्टा! अब चले जाइए। मेरी बात मानिए!"

त्रिविक्रमन का धैर्य समाप्त हो गया था। उसने कहा, "तुम्हें साथ लेकर जाऊंगा। अगर तुम मेरी हो तो अभी मेरे साथ चलो! पता नहीं मैं अपनी सावित्री को फिर कब देख पाऊंगा? आज-कल में युद्धभूमि के लिए प्रस्थान करना पड़ेगा। यह मनहूस, चालाक राजा यहीं पड़ा रहेगा।"

सावित्री—"जाइए, विजयी होकर लौटिए। यह यहां पड़ा रहे। आप का क्या जाता है?"

त्रिविक्रमन ने रुंधे गले से पूछा, "और न लौट सकूं तो?"

सावित्री—"दोनों हालात में मैं आपके साथ हूं। अब जाइए। मेरे माता-पिता को आपके आने की खबर नहीं मिलनी चाहिए।"

त्रिविक्रमन—"तुम्हारे पिता तुम्हें मजबूर करें तो ?"

सावित्री—"वचन देती हूं जिंदा रहते मैं और मरने पर मेरी आत्मा आपके साथ रहेगी। भगवान साक्षी है ! अब जाइए।"

त्रिविक्रमन ने अपने हाथ आगे बढ़ाए। सावित्री ने दोनों चूड़ी भरी कलाइयां आगे कर दीं। दूसरे ही पल दोनों दृढ़ आलिंगन में बंध गये।

अजितसिंह आधी रात को अपना एक काम पूरा करने के इरादे से ही आया था। इसलिए उसने उण्णित्तान के साथ अपना वार्तालाप तब तक जारी रखा। वह कार्य करने का वक्त आ गया तो वह विलायती कुर्सी से उछल पड़ा और गुप्त परामर्श के बहाने, उण्णित्तान का हाथ अपने हाथ में लिये महाकवियों की रचनाओं को रौंदता हुआ दो दालान पार करके दीपज्योति से ज्योतिर्मय उस कक्ष में पहुंचा, जहां सावित्री बैठी थी। सावित्री अपनी तरफ अजितसिंह की कामलोलुप चितवनों का जवाब तीखी नजरों से देकर, गंभीर आदर-विनय के साथ वहां से चली गयी। कमरे के भीतर उठा-पटक और शोरगुल से कुंजि के मीठे सपने टूट गये। उसने चिल्ला कर चारों ओर खलबली मचा दी। तभी अचानक उसके कपड़ों में आग लग गयी। उसे बुझाने की कोशिश में कमरे की बत्तियां बुझ गयीं। उण्णित्तान के आदेश से फिर से दीप जलाये गये। उस समय उण्णित्तान ने अजितसिंह को जिस हाव-भाव में देखा वह पहले से बिलकुल भिन्न था। यह अंतर उण्णित्तान को अनुभव तो जरूर हुआ तो भी आदमी का जो परिवर्तन हुआ उसे उन्होंने नहीं पहचाना।

अजितसिंह सावित्री के बिस्तर पर बैठ गया। सावित्री के साथ उसकी बातचीत किसी के कान में न पड़े इसलिए उसने उण्णित्तान को सावधान किया कि वे पता लगायें कहीं कोई आसपास खड़ा तो नहीं। जब वे यह देख कर लौटे तो उसने पूछा कि कोटंता आशान और उसके साथी क्या कर रहे हैं ? उण्णित्तान ने जब निवेदन किया कि वे लोग दिखाई नहीं दे रहे हैं तब अजितसिंह ने प्रसन्नता प्रकट की। उण्णित्तान ने न इसका मतलब समझा और न ही इस पर ध्यान दिया। अजितसिंह ने कहा, "मामाजी, हमारा सौभाग्य हमें यहां ले आया। सावित्री को हमने मन से वरण कर लिया है। अब आगे जो औपचारिकताएं हैं उन्हें शीघ्र ही पूरा करें। अपने महल में पहुंचने के बाद उसकी देखभाल हम अच्छी तरह से करेंगे। हम ऐसे लाड़-प्यार से उसे रखेंगे कि वह पिताजी से मिलने की अभिलाषा तक नहीं करेगी।" फिर थोड़ा रुककर पूछा—"आप के दीवानजी, श्री केशवन को ब्याह पर निमंत्रित करना चाहिए न ?"

उण्णित्तान ने मन ही मन विवाह का मुहूर्त निश्चित कर लिया। वे बोले, "हम लोगों का रिश्ता इतना घनिष्ठ तो नहीं कि निमंत्रण अनिवार्य है। विवाह चिलंपिनषियं में करने का विचार है। इसलिए इस समय इतनी दूर उन्हें ले जाने का ख्याल छोड़ सकते हैं।"

अजितसिंह—"मैंने चिलंपिनेत्तु की संपत्ति के बारे में सुना है। वहां रहनेवाले बुजुर्ग. . . ."

उण्णित्तान—"मैं ही इस समय उस परिवार का प्रधान हूं।"

अजितसिंह—"पहले के प्रधान . . . ?"

उण्णित्तान को लगा कि किसी ने उनकी छाती में बरछी चुभा दी है। कुछ दिन पहले प्राप्त चिट्ठी की याद करके उनका चेहरा सफेद पड़ गया।

अजितसिंह ने सोचा—"चलो आवाज तो धीमी पड़ी। अभी सिर्फ मोड़ना चाहिए, तोड़ना नहीं।"

उसने चारों ओर की आहट पर कान लगाये। साथ ही बातचीत भी जारी रखी। उसने केशवन पिल्लै के उद्देश्यों को देश के लिए हानिकारक बताया। उसने कहा, "उसने आर्काट के नवाब और अंग्रेजों से समझौता कर रखा है। मौका पाकर टीपू से भी समझौता करके राज्य को गिरवी रख देगा।" दीवानजी के विषय में इन विचारों से उण्णित्तान आम तौर पर सहमत थे, फिर भी उन्होंने दावा किया कि दीवानजी राजनीतिक मामलों में बड़े कुशल हैं और बड़े राजभक्त भी।

टीपू की फौज के बड़े आकार और संहारक शक्ति का वर्णन करने के बाद अजितसिंह ने महाराजा की सहायता करने के वास्ते यहां भी एक फौज जुटाने का सुझाव दिया। जब उसने कहा कि वह अपने देश से गुप्त रूप से दस हजार सैनिक ले आनेवाला है, तब उण्णित्तान ने अपनी देशभक्ति के कारण उसकी सराहना की। अजितसिंह ने परामर्श दिया, "उस वक्त यहां भी कुछ करना होगा।"

उण्णित्तान—"अन्नदाता के लिए मैं कुछ भी उठा न रखूंगा।"

अजीतसिंह—"केवल बातों से नहीं आदमी और धन लगाना पड़ेगा। युद्ध के नेतृत्व के लिए आपका यह दामाद तो है ही।"

उण्णित्तान—"आदेश का पालन जरूर करूंगा। मंत्री, दीवानजी और सेनापति जब जरूरी प्रबंध कर रहे हैं, तब बीच में पड़कर अपनी बेवकूफी से कोई आफत न मोल ले लूं इस ख्याल से मौन हूं।"

अजितसिंह—"आदेश ? कैसा आदेश चाहिए ? क्या हमारा आदेश आदेश नहीं ? यह शोर कैसा है ? क्या टीपू सुलतान की फौजें भीतर आ गयीं ?"

नंतियतु मठम् की उत्तरी दिशा में दो-तीन अहातों के बाद जेलखाने में भीषण शोर सुनाई पड़ा। उण्णित्तान ने मामले का पता करने के लिए नौकरों को बुलाया। अजितसिंह ने यह तर्क देकर मना कर दिया कि कोई मामूली बात होगी और तकलीफ करने की जरूरत नहीं है।

जेल के आसपास शोरगुल बढ़ता गया। अजितसिंह उस समस्या का सामना करने

के बहाने खुली गुप्ती हाथ में लेकर जल्दी से प्रवेशद्वार से दालान में जा पहुंचा। सामनेवाले प्रांगण में घर के सेवक और अजितसिंह के अनुचर इकट्ठे खड़े थे। संग में कोटंता आशान भी ठिठुरता-कांपता खड़ा था। उण्णित्तान कोलाहल का कारण जानने के लिए फिर से सेवकों को भेजने लगा, पर शोरगुल एकाएक खत्म हो गया। अजितसिंह विदाई की आज्ञा लेने के बहाने उण्णित्तान का हाथ अपने हाथ मे लेकर चलने लगा। उण्णित्तान को वह अपने आवास तक ले गया। उसके अनुचर पीछे लगे थे। इस बार उसके साथ प्रस्थान करने वाले अनुचरों में एक व्यक्ति अधिक था।

अजितसिंह की यात्रा का ध्येय जेल से कंठीरव को छुड़ाना था। वह कार्य सिद्ध हो चुका था। इस प्रकार उण्णित्तान अनजाने ही राजद्रोह के अपराध का गवाह और सहायक बन गया था।

8

युद्ध सिर पर

महाराजा रामवर्मा और दीवान केशव पिल्लै के एक मन होकर प्रयत्न करने से वंचिराज्य (त्रावंकोर) का शासन शांतिपूर्वक चल रहा था। महाराजा नियोजक थे तो दीवानजी कार्यकारी तंत्र के पर्यायवाची थे। बाहर से जबरदस्त हमला होने की संभावना देखकर नरेश ने मंत्री को अपनी सात्विक सत्ता प्रदान की। मंत्री ने इस प्रकार से प्राप्त अधिकार का उपयोग अपने कर्त्तव्य के कुशल निर्वाह के लिए किया। महाराजा के प्रति मंत्री की इस स्वामिभक्ति ने टीपू का क्रोध बढ़ा दिया। महाराजा ने उत्तर भारत की परंपरा के अनुसार केशव पिल्लै को 'दीवान' की उपाधि दी तो टीपू की ईर्ष्या दोगुनी हो गयी। टीपू के कोप भाजन वंचिराज्य की सैनिक शक्ति भीतर से तोड़ने के लिए टीपू ने गुप्तचर नियुक्त किये।

अजितसिंह द्वारा दामाद की भूमिका में नंतियत्तुमठम् पहुंचकर कंठीरव राव को जेल से छुड़ाना इसी गुप्तचरी का एक उदाहरण था। नगरवासियों ने इतना तो समझा कि कोई हंगामा हुआ है, परंतु महाराजा, दीवानजी, उन के अंगरक्षक और जेल के अधिकारी ही इसका मर्म जान सके। दूसरे दिन सवेरे ही सहायता देने के बहाने उपमंत्री, सेनानायक और प्रमुख सेवक दीवानजी के प्रशासकीय भवन में पहुंचे।

दीवान केशव पिल्लै का अपना शानदार भवन श्रीवराहम् और मण्क्काड के बीच में था। फिर भी वे किले के भीतर ही रहते थे और वहीं से शासकीय कार्य का सूत्र संचालन करते थे। यह भवन राजमहल की पूर्वी दिशा में राजपथ के दक्षिणी छोर पर था। वह नंतियत्तुमठम् जैसा ही गंभीर था। मुख्य फाटक से पूर्वी भाग में प्रवेश करने पर पहले वार्ताकक्ष दिखाई पड़ता था। इसमें पश्चिमी ढंग की कुर्सियां और मेजें सजी थीं। दीवानजी का कार्यलय उत्तर-पूर्वी दिशा में था। इसमें आबनूस की बनी खाट पर रेशमी तोशक, बड़ा-सा रेशमी तकिया और उससे लगा मसनद रखे थे। उसके उत्तर-पूर्वी भाग में लिखने की चौकी पड़ी थी। दवात, कलम, कांटा आदि लेखन-सामग्री इस चौकी पर दिखायी दे रही थी। वार्ताकक्ष के उत्तरी भाग में दीवानजी का विश्राम-कक्ष था, जिसका उत्तरी कक्ष उनका सोने का कमरा था। सोने के कमरे के पूरब की तरफ जो भवन था उसमें अतंःगृह, रसोईघर आदि थे। स्वागत-दीर्घा के पूरब व दक्खिन के भवनों का उपयोग मुख्य कार्मिक और मुनीम लोग करते थे।

बड़े कक्ष में मुख्य आसन पर दीवानजी बैठे थे। नीचे चटाई बिछाकर उपमंत्रीगण, स्थानीय सेनानायक और दीवानजी से मिलने आये जननेतागण बैठे थे। जनता की तैयारी, धनसंग्रह, शस्त्रसंग्रह आदि पर गंभीर एवं तीव्र विचार-विमर्श चल रहा था। भविष्य के कार्यों के विषय में जब आदेश निकालते थे तब संबंधित अधिकारी अपने-अपने विभाग के मुख्य लिपिकों को बुलवाकर पत्र तैयार करवाते थे। कभी तो दीवानजी खुद पत्र लिखते थे। कभी वे लिपिकों को एक ही पंक्ति में खड़ा करके हर एक को अलग-अलग बातें बड़ी कुशलतापूर्वक समझाते और लिखाते । बीच-बीच में प्रमुख नागरिक, व्यापारी, भूस्वामी आदि को विश्रामकक्ष में ले जाकर धनसंग्रह के उपाय बतलाते। देश के छोटे-बड़े भूस्वामी-अखाड़ों के प्रधान आदि से धन व सैनिक देने की प्रतिज्ञा कराते और उन्हें सराहते व उपहार देते। मद्रास व बंबई के प्रशासकों के लिए पत्र व रिपोर्ट वे खुद अपने हाथों लिखते। उन्हें गुप्तचरों के जरिये यथास्थान भेजा जाता।

कंठीरव राव के छुड़ाये जाने के दूसरे दिन उपस्थित उपमंत्रीगण ने इसका रहस्य जानना चाहा था तो भी उन्हें आगे के कर्तव्यों की ही जानकारी दी गयी। दीवानजी ने नंतियत्तु मठम् की वारदातों की पूरी खबर उसका चक्कर लगाते त्रिविक्रमन से प्राप्त कर ली थी।

अनवरत कष्ट-सहन और परिश्रम से केशव पिल्लै की सूरत ही बदल गयी थी। केशवन उण्णित्तान, हृष्टपुष्ट और सुंदर थे। उनके सिर पर मोटी चोटी थी। मगर केशव पिल्लै बहुत दुबले हो गये थे। चौड़े कंधों के बीच छाती की हड्डियां दीखने लगी थीं। छाती सिकुड़ने लगी थी। गाल पिचक गये थे। सिर के बाल मुंह पर लटके रहते थे। लंबी नाक अब और नुकीली लग रही थी। सिर झुका कर लोगों का सम्मान व अभिनंदन प्राप्त कर रहे थे। सिर के बीच का भाग करीब-करीब गंजा हो चुका था। गंजे भाग के चारों ओर दो-चार बाल खड़े थे। स्वास्थ्य इतना गिरा रहने पर भी उनकी कार्यकुशलता एवं प्रतिभा बढ़ती ही गयी थी। वे सहयोगियों से खूब काम लेते। किसी भी विरोध का डटकर सामना करते। देश की गुप्त बातें जानने की कोशिश करनेवालों को वे सिर्फ एक "हूं" से रोक देते। संक्षेप में मंत्रिमंडल के ये सूर्य आलसियों के लिए यमराज, कर्मठों के लिए गहरे मित्र और कुटिलों के लिए शूलपाणि हो रहे थे।

उस दिन काफी रात ढलने के बाद भी दीवान केशव पिल्लै अपनी चौकी पर बैठे थे। वे गुप्तचरों के प्रधान कुंचैकुट्टि पिल्लै की प्रतीक्षा कर रहे थे। कुंचैकुट्टि पिल्लै के नेतृत्व में कई गुप्तचरों को मैसूर भेजा गया था। कुंचैकुट्टि पिल्लै बड़े कुशल गुप्तचर थे। अनेक भाषाएं बोलते थे और रूप बदलने में माहिर थे। वे कंठीरव मल्ल से टक्कर लेने की शारीरिक सामर्थ्य रखते थे। गुप्तचरी मे तो वे बेजोड़ थे ही, वे दीवानजी के विश्वासपात्र मित्र एवं सहकर्मी थे। कुंचैकुट्टी पिल्लै ने एक दूत के जरिये दीवानजी को

पत्र भेजा कि टीपू कोयंबतूर पहुंचकर, सह्याद्रि पार करके तिरुवितांकूर पर धावा बोलने वाला है। किसी ने रास्ते में दूत का पत्र छीन लिया और उसे मार डाला। कुंचैकुट्टी पिल्लै ने अपने हाथों से वह पत्र लिखा था। बाद में वह पत्र किसी ने दीवानजी के पलंग पर डाल दिया था। दीवानजी समझ गये कि यह काम भी कुंचैकुट्टि पिल्लै का ही है। केशव पिल्लै ने सिर्फ पत्र के सारांश से महाराजा को अवगत कराया। तुरंत दक्षिण की फौज की एक टुकड़ी उत्तरी दिशा में भेजी गयी। वे शीघ्र से शीघ्र कुंचैक्कुट्टि पिल्लै से मिलना चाहते थे, क्योंकि उन्हें खुद तुरंत उत्तरी भाग में जाना था। महाराजा की सहायता के लिए योग्य व्यक्ति का प्रबंध किये बिना वे तिरुअनंतपुरम् नहीं छोड़ सकते थे।

इसी बीच सावित्री उनसे अपनी समस्या बताने आयी। केशव पिल्लै ने उसे समझा-बुझाकर रवाना कर दिया।

उनके मन में इक्कीस वर्ष पूर्व की घटनाएं भीड़ करने लगीं। मगर हथियारों की झनझनाहट और घोड़े की टापों की आहट ने उनकी विचारधारा को एकाएक रोक दिया। किसी घोड़े की टापों की आहट पास आती सुनाई पड़ी। एक घोड़ा तेज सांस लेते, मुंह से झाग निकालते हथसाल में आकर खड़ा हो गया। पहरेदार ने घुड़सवार से जीन ले ली। गेरूए कपड़े पहने एक आदमी नीचे कूद पड़ा। दीवानजी ने उसे गले लगा लिया। वह गुप्तचरों का प्रधान कुंचैक्कुट्टि पिल्लै था। उसने टीपू के हमले की खबरें सुनायीं।

दीवान—"रास्ता कौन सा है?"

कुंचैक्कुट्टि—"उत्तरी।"

दीवान—"फौज कितनी है?"

कुंचैक्कुट्टि—"सैंतालीस हाथी, उनहत्तर ऊंट, छप्पन तोपें, चार हजार घुड़सवार, तैंतीस हजार सिल्लेदार, साठ हज़ार विविध शस्त्रधारी। इनके दो तिहाई साधारण सैनिक और दूसरे लोग।"

कुंचैक्कुट्टि पिल्लै ने प्रमुख सेनापतियों के नाम तक बताये। दीवानजी फौरन महाराजा को खबर देने चले गये। उन्होंनें प्रधान गुप्तचर को अपने साथ भोजन के लिए नहीं कहा, न खुद ही कुछ खाया।

उसी रात फौज की कूच के लिए फौरी आदेश दिये गये। रियासत के मुख्य भाग और दक्षिण भाग में पड़ी हुई फौजों को नेडंकोट्टा की सुरक्षा करने और परवूर की पलटन से जा मिलने का हुक्म मिला। रसद व कुमुक इकट्ठा करने और बांटने का जिम्मा केशवन उण्णित्तान को सौंपा गया। उसके लिए महाराजा की तरफ से आदेशपत्र तैयार करके दे दिया गया। दूसरे दिन सवेरे महाराजा की ओर से तिरुअनंतपुरम् में ढिंढोरा पीटकर घोषणा की गयी कि टीपू सुलतान उत्तर की दिशा से तिरुवितांकूर पर हमला करने एक भारी फौज लिये आ रहा है। आक्रमण को रोकने की पूरी तैयारी की गयी है। जनता से

पूरी सहायता प्रार्थित है। शत्रुओं के गुप्तचरों से सावधान रहना होगा। अपराधियों को कठोर दंड दिया जायेगा। ये सभी आदेश राजघोषणा में स्पष्ट रूप से बताये गये थे।

9
मामा के जिम्मे

गंभीर विचार-विमर्श और जरूरी काम निपटाने के बाद दीवानजी थोड़ा फुर्सत पा सके तो सावित्री वहां आ पहुंची। उसे पूरा यकीन था कि वह किसी भी समय उनके पास जा सकती है। इसलिए अनुमति लिये बिना ही उसने अंदर प्रवेश किया।

दीवानजी का इरादा था कि कुलगुरु द्वारा सौंपी गयी इस सिंह-शावक को पहले कुछ भरमाना चाहिए। वे मसनद से पीठ टेके अनजाने बने, गंभीर हो बैठे रहे। सावित्री जरीदार कपड़े पहने, जड़ाऊ हार और कंगनों से अपने को सजा कर आयी थी। जब वह उनके सामने मुस्काराती हाथ जोड़ कर झुकी तब घने केशपाश ने उसके मुखमंडल को ढक लिया। जब वह अपने केशों को पीछे की ओर हटाने लगी तब उसकी बांहें दीवानजी के दुबले-पतले हाथों में थीं। वह दुपट्टे का छोर अपनी उंगलियों में थामे सिर झुकाये, धीरे-धीरे सिर मोड़ती हंसती खड़ी हो गयी। दीवानजी ने उसे अपनी बेटी की तरह स्नेह से पास बिठाया और अपने पूर्ण हृदयकलश से उस स्वर्णकमल का यथेष्ट अभिषेक किया।

कुशल- वार्ता के बाद दीवानजी ने सावित्री के चेहरे पर गहरी नजर डालते हुए पूछा, "अरे! कष्क्कूट्टम की छोटी कुंजम्मा ने आने का कारण ही नहीं बताया। मामा के पास सौ काम पड़े हैं। क्या बात है? जल्दी बताओ और भागो। पिताजी शायद रात को ही लौटेंगे।"

सावित्री—"मैं तो यों ही आ गयी। पर पिताजी के जाने की बात मामाजी को कैसे मालूम?"

दीवानजी—"सरकारी मामलों का पता औरतों को नहीं रहता। अनुमति के बिना सरकारी अधिकारी अपने कार्यस्थल छोड़ ही नहीं सकते। यों ही आयी हो तो यों ही जाना भी पड़ेगा। शायद बाप को हराने के लिए बेटी सिफारिश कराना चाहती है। वह सब नहीं चलेगा। कुछ ही दिनों में वे किसी के ससुर या ऐसा ही कुछ होने जा रहे हैं। ऐसे माहौल में कुंजम्मा उन्हें चित करने की कोशिश करे तो मामाजी बुरे फसेंगे। इस शरारत की पुड़िया की खातिर मामाजी पहले ही काफी भुगत चुके हैं और भुगत रहे हैं।"

सावित्री ने कहा, "झूठे किस्से सुनाकर मुझे टालिए मत।"

पिछली रात को कंठीरव मल्ल के जेल से भाग जाने की घटना में उण्णित्तान के

योगदान की अधिकारी लोग तहकीकात कर रहे थे। दीवानजी ने बात गुप्त रखते हुए कहा, "अब किसी से लड़ने-झगड़ने की फुरसत मामा के पास नहीं है। खासकर तब जबकि टीपू इधर आने वाला है। ऐसी हालत में नन्हीं सावित्रियों को घर के भीतर बड़े अदब से रहना चाहिए। सुलतान रोज सबेरे और शाम को बारह-बारह छोटी बीवियों को काटकर खा जाता है। इसलिए मेरी भांजी का भला इसी में है कि वह किसी क्षत्रिय का वरण कर ले।"

इतना सुनते ही सावित्री ने दीवानजी की पीठ में चुटकी काटी। वे "हाय !" करते हुए बोले, "मार न डालना मुझे ! महाराजा तुम्हारा सिर धड़ से अलग करवा देंगे। मामा को भी मोर्चे पर जाने का हुक्म मिला है। ऐसे में अगर मामा का अंग-भंग कर दोगी तो वह राजद्रोह माना जायेगा।"

सावित्री—"हां ! हां मालूम है। लगता है पिताजी की बात पर मामाजी नाराज हैं। मुझे मालूम है कि मामाजी जब कुछ कहते हैं तो पिताजी मुंह फेर लेते हैं।"

दीवानजी—"पिताजी चाहे बात न करें, पर मामाजी उनसे झगड़ेंगे नहीं। बुलावा न आवे, तो भी ब्याह के दिन पहली कतार में खाने को हाजिर रहूंगा। अब तुम जा सकती हो। मुझे अनुमति मिल गयी है। निमंत्रण भेजने की भी जरूरत नहीं।"

आंखें आधी बंद किये, तमतमाया चेहरा लिये, सिर झुकाये बैठी सावित्री ने कहा, "मैं कहीं भाग जाऊंगी। मुझे पिताजी, मामाजी, किसी की जरूरत नहीं।"

दीवानजी—"अपनी सावित्री बिटिया को मैं कुछ-कुछ जानता हूं। मान लो, सावित्री भी मामा को जानती है। फिर भी मामा को पता है कि इस छोटे से प्यारे दिल में कौन सी बात चल रही है। किसी शुभ दिन में एक दुलहन, चेंपकश्शेरी में नहीं, एक नौजवान के पिता के मांकोयेक्कल भवन में ठीक पहुंच जायेगी।"

सावित्री ने शरमाकर अपने हाथ से दीवानजी का मुंह ढक लिया। उनकी पीठ पर धमाधम कई घूंसे लगा दिये।

दीवानजी ने उसके कान में कहा, "महाराजा ने एक छोटे पहलवान को जो वीर शृंखला दी थी उसे कोई चुराने न पावे। होशियार रहना। चोर घूम रहे हैं।"

मैं यह नहीं पूछता कि उस छोटे पहलवान ने बिना पिटे कैसे वीर शृंखला वहां पहुंचा दी। खैर, हमें तो अपनी बेटी की जान की सुरक्षा करनेवाला दामाद चाहिए। वह घुड़सवार सिपाही तो दुश्मन की फौज के सामने झपटकर जायेगा और गोली खायेगा। पर बब्बलश्शेरी के राजा साहेब तो बड़ी सावधानी से हुक्म देकर वापस आ जायेंगे। यही सब सोचकर पिताजी यह संबंध जोड़ रहे हैं।"

सावित्री—"ऐसे कायर को मामाजी ही रखें, मुझे नही चाहिए।"

दीवानजी—"यह तो बहुत बुरी बात है। क्या मुझे साड़ी पहनकर उस बब्बलू के अंतःपुर में रहना पड़ेगा ?"

सावित्री दुखी स्वर में बोली, "मामाजी ! अगर तुम मेरी जान बचाना चाहते हो तो..."

दीवानजी—"तुम्हारे पिताजी और मैं, दोनों परम मित्र हैं। उनके द्वारा तय की गयी बात में अगर मैं दखल दूं तो लोग मुझे दोष देंगे।"

आंसू बहाती हुई सावित्री ने कहा, "पिताजी तो मां की भी जान लेने पर तुले हैं।"

यह सुनकर दीवानजी सिहर उठे। उनको लगा कि अब कन्या से हंसी-मजाक करने का वक्त नहीं रहा। वे बड़े प्यार से उसके माथे पर झूल आयी लटों को संवारने लगे। फिर उसकी हथेली अपने दोनों हाथों में लेकर कहा, "बाप, मां और बेटी तीनों एक ही तरह के हो जायें तो मामाजी क्या करें? फिर भी मामाजी के जिंदा रहते दलपति गुरुदेव की सावित्री बिटिया को डरने की कोई जरूरत नहीं। अब कहीं जाकर मां से कह न देना कि मैंने ऐसा कहा है। सेना के विजयी होकर लौटने पर मैं अपने वीर शृंखलावाले युवक को उधर ले आऊंगा। उस दिन भी अगर भाग जाने का उपक्रम न करे तो मेरी नन्हीं भांजी की नाक चपटी हो जायेगी।"

सावित्री बोली, "मुझे कोई नहीं चाहिए।" फिर भी दीवानजी ने देखा कि उसकी बांहें उनके गले में थीं और उसका मुखड़ा चमक रहा था।

उन्होंने कहा, "अच्छा!" अगर तुम्हें कोई नहीं चाहिए तो गेरुए कपड़े पहन कर संन्यास धारण कर लेना। मगर त्रिविक्रमन सहमत नहीं होगा। यों उसके लिए उर्वशी-सी सुंदर कन्याएं सुलभ हैं। उनमें से एक...

सावित्री गंभीर और रूठा चेहरा लिए विदा होने लगी तो दीवानजी ने उसे रोकते हुए कहा, "पिताजी को पता लगे कि तुम यहां आयी थीं तो तलवार निकाल लेंगे। तब तुम यह कहकर अपने को बचा लेना कि मामाजी ने मोर्चे पर जाने के पहले एक बार देखने की इच्छा प्रकट की थी बाकि सब मेरे जिम्मे। मतलब, हमारे छोटे पहलवान और उसकी पुरानी घुड़सवार कन्या ने जरूरी करारनामा कर ही लिया है तो....।"

दीवानजी ने उसका हाथ अपने हाथों में लेकर उसे कुछ समझाया। फिर अपनी पालकी में उसे घर भेज दिया। सावित्री घर लौटी तो उसने महसूस किया उसके सिर से एक बड़ी बला टल गयी है।

10
उण्णित्तान को दीवानजी का आदेश

उण्णित्तान ने तय किया कि सावित्री और अजितसिंह का ब्याह एक पखवाड़े के भीतर संपन्न करके दीवानजी और उनके पक्षधरों को नीचा दिखाना चाहिए। विवाह का प्रबंध करने के लिए अनुमति लेकर वे चिलांपिनेत्तु भवन गये। दूसरे दिन सवेरे-सवेरे बिस्तर से उठकर वे बाहर आये तो राजा का आदेश लिये एक सेवक उनकी प्रतीक्षा कर रहा था। उस आदेश में युद्ध-संबंधी व्यवस्था के नये दायित्वों के विषय में महाराजा की आज्ञाएं थीं। उण्णित्तान तुरंत तिरुअनंतपुरम लौटे।

राजधानी वापस आकर उण्णित्तान दीवानजी से मिलने गये। दीवानजी तिरुवितांकूर की उत्तरी सीमा पर भेजे जाने के लिए तैयार तोपों का निरीक्षण कर रहे थे। औरों के सामने बातें करने से बचने के वास्ते दीवानजी स्वागतकक्ष की ओर चल पड़े। वहां पर केशव पिल्लै और केशवन उण्णित्तान के बीच जो संवाद चला वह बड़ा तीखा और कटु और शिकायतों व तानों से भरा था।

उण्णित्तान—"यह कैसा चमत्कार कर रहे हैं आप ? क्या अन्नदाता ने आपको मनमानी करने के लिए इस उच्चतम पद पर बिठाया है ? अपने मातहतों के कुशल-मंगल और सुख-सुविधाओं का ख्याल रखना आपका ही तो काम है ? अगर नौबत यह आ जाये कि हर बात के लिए हमें अन्नदाता के दर्शन करने पड़ें तो आपको इतना मोटा वेतन देकर क्यों रखा गया है ?"

दीवानजी—"महाराजा को पूरा विश्वास है कि आप उनके भक्त हैं, विश्वसनीय हैं, उदार और सौम्य हैं, लोकप्रिय हैं। अगर उनके विचार में कोई भूल हो गयी हो तो मैं उनसे जैसा उचित समझूंगा निवेदन कर लूंगा। यदि मेरी नियुक्ति गलत हो गयी हो तो आप जैसे लोगों को महाराजा से निवेदन करना चाहिए।"

उनकी बातचीत में आपसी दोषारोपण, क्रोध और कठोरता बढ़ते गये। उण्णित्तान ने बातों के दौरान कहा, "अगर मैं यह कोषाध्यक्ष का पद ठुकरा दूं तो ?"

दीवानजी—"महाराजा का आज का आदेश क्या आपकी नजर मे नहीं पड़ा ? शत्रु से लड़ने के लिए प्रजा से सहायता मांगी गयी है। यह आदेश आप पर भी लागू होता है।"

उण्णित्तान—"मैं कुछ नहीं कर सकता। वानप्रस्थ आश्रम भी तो एक चीज है।"

दीवान—"वह भी तो पहले की तरह मरुत्वान पहाड़ पर ही हो सकता है। वह जगह अब भी खाली है। उण्णित्तान के पद की असली गरिमा को उण्णित्तान ही नहीं पहचानते। राजद्रोह का दंड है तलवार से सिर को धड़ से अलग करना। यदि कोई उस अपराध का पात्र हो तो... बाकी आप खुद समझदार हैं।"

उण्णित्तान—"आगे कुछ कहने की जरूरत नहीं है। आप मालिक हैं। कोई रियायत भी मैं नहीं मांगता। मुझे सजा स्वीकार है। हम आपकी आभिलाषाओं के पथ में कांटे नहीं बोना चाहते।" और अंत में रुंआसी आवाज में कहा, "ऐसी जिंदगी से तो मृत्यु कहीं ज्यादा सुखदायी है। इस पुण्यभूमि पर आपके चरण पड़ने के बाद से ही म्लेच्छों की शक्ति बढ़ती गयी है।"

दीवानजी—"जहां तक मुझे स्मरण है हम दोनों के चरण एक ही समय इस जमीन पर पड़े थे।"

उण्णित्तान—"मेरे चरण पड़ने से कोई स्थान अपवित्र नहीं हुआ है।"

दीवानजी—"क्या उस संपत्ति के बल पर यह कह रहे हैं, जिसे कुबेर की तरह इस समय आप भोग रहे हैं? मेरे विषय में विरासत का खाता खाली हो सकता है। आप के धनवैभव की नींव.... ओह! शायद मैं अपनी हैसियत भूलता जा रहा हूं।" एक पल के बाद जिस चौकी पर बैठे थे जैसे उसे संबोधित करते हुए पूछा, "क्या आज शाम तक आप प्रस्थान कर रहे हैं? बच्चों की तरह झगड़ने या रूठ कर मुंह फुलाने का यह समय नहीं है। हमें महाराजा की आज्ञा का पालन करना है।"

उण्णित्तान—"यह सोचकर मत फूल जाइयेगा कि आपने मुझे हरा दिया। मैं तो बिस्तर बांध ही चुका हूं। पर आपकी धमकी से नहीं। मैंने भी यही सीखा है कि महाराजा के श्रीचरणों में ही राज्यलक्ष्मी का निवास है।"

उण्णित्तान के कुछ पक्षधरों ने उनकी यात्रा रोकने का प्रयत्न तो जरूर किया, पर सब बेकार गया। तब दीवानजी को उण्णित्तान का पत्र मिला कि वे अपने बदले में नियुक्त अधिकारी को कार्यभार सौंपकर रियासत के उत्तरी खंड की तरफ जा रहे हैं। जाने के पहले उण्णित्तान ने मां और बेटी के अलग-अलग रहने की व्यवस्था की। मीनाक्षी को चिलांपिनेत्तु भवन में रखा और कोट्टारक्करा के नंतियत्तु भवन में सावित्री के रहने का प्रबंध किया। दीवानजी को पता चला तो उन्होंने कोट्टारक्करा में सावित्री की सुरक्षा के विशेष प्रबंध किये।

11

दो खास मुलाकातें

जिस दिन उण्णित्तान ने दीवानजी से मुलाकात की थी उसी दिन उण्णित्तान को मोर्चे पर कूच करने से रोकने के इरादे से दो और मुलाकातें हुईं। उण्णित्तानजी की व्यंग भरी बातों से दीवानजी के मन को जो ठेस लगी थी, उसका असर कुछ-कुछ दूर हो ही रहा था कि तिरुवनंतपुरम् के हीरों व रेशमी कपड़ों के व्यापारी माणिक्यगौंडन के अनुचरों ने उनसे मिलने की अनुमति मांगी। उन्हें दीर्घा के भीतर प्रवेश न करने देने के इरादे से दीवानजी प्रवेशद्वार पर ही उनसे मिले।

दीवानजी को पता था कि गौंडन का दल षडयंत्रकारी है। उन पर निगरानी भी रखी जा रही थी। दीवानजी के पहुंचने के पहले ही त्रिविक्रमन और गेरुए कपड़े उतारकर सरकारी अधिकारी के कपड़ों में कुंचैक्कुट्टि पिल्लै भी हाजिर थे। व्यापारी लोग माल भी ले आये थे। फाटक की दोनों तरफ सजी दूकानों पर कालीन और रेशमी कपड़ों के गट्ठर, पेटी में हीरे व बिल्लौर के सामान रखे थे। निठल्ले लोग, लड़के और पहरे से मुक्त सिपाही व्यापारियों का माल देखने इकट्ठे हो गये थे।

दीवानजी जब फाटक पर पहुंचे तो व्यापारियों ने शिकायत की कि चिलांपिनेत्तु उण्णित्तानजी ने उनसे पांच हजार वराहन मूल्य का माल खरीदा है और मूल्य चुकाये बिना धोखा देकर वे रणभूमि में जाने की तैयारी कर रहे हैं। उन्हें रुकवाइए। इसी समय बड़ा जौहरी माणिक्यगौंडन व्यापारियों को हटाते हुए दीवानजी के पास आया। उसने दीवानजी की सेवा में कुछ विशिष्ट गहने और हीरे पेश किये। दीवानजी ने उनमें से एक हीरे की अंगूठी चुन ली और कीमत दिला दी।

गौंडन को देखकर और उसकी आवाज सुनकर दीवानजी को चिलांपिनेत्तु चंद्रक्कारन स्मरण आये। वर्षों तक कई स्थानों की यात्रा करने से चंद्रक्कारन की भाषा और व्यवहार में परिवर्तन आया था। ढलती आयु और खानपान में परिवर्तन से शरीर भी कुछ मोटा हो चला था। चोट लगने से नाक की शक्ल बदल गयी थी। सिर गंजा हो गया था और उसने गोलाकार दाढ़ी रख ली थी। गौंडन को पूरा यकीन था कि अब दीवानजी उझे पहचान नहीं पायेंगे, किंतु वर्षों पहले सुनी हुई आवाज याद आने के कारण दीवानजी ने ठीक अनुमान लगाया था।

व्यापारियों ने हठपूर्वक मांग की कि उनकी समस्या का समाधान किया जाये। उन्होंने कई जबानों में सरकार की आलोचना भी की। तमाशाइयों के शोरगुल ने वातावरण को मुखरित कर दिया था। कुंचैक्कुट्टि पिल्लै ने हर दल को उसकी भाषा में समझा-बुझाकर चले जाने का आदेश दिया। उन्होंने यह भी समझा दिया कि युद्ध-संबंधी राजाज्ञा का कितना व्यापक अर्थ होता है! वे जोर-जोर से चीखते-चिल्लाते चले गये। वृद्ध गौंडन चारों ओर गौर करता धीमे कदमों चल पड़ा। जब वह किले का उत्तरी फाटक पार कर गया तब उसने देखा, एक भिखारी उसके पीछे-पीछे चला आ रहा है।

संध्या के बाद इट्टुण्णिकंडप्पन कार्यक्कार अनुमति लेकर दीवानजी से मिलने आये। दीवानजी राजपरिवार के सदस्यों या समान पद के लोगों के सिवा और किसी के आने पर उठते नहीं थे। मगर कार्यक्कार को देखकर कुछ गंभीरता से मुस्कराते हुए वे उठ खड़े हुए। इट्टुण्णिकंडप्पन ने विनय का अभिनय करते हुए कहा, "राजा अजितसिंह ने जिस कन्या से विवाह करने का निश्चय किया है उसके पिता को ईबनिश तिरुअनंतपनरम् से जो दूर भेज दिया गया है इसकी खबर राजा को देने का मैंने निश्चय किया है।"

दीवानजी ने कार्यक्कार से कहा, "खबरदार! ध्यान रहे कि आप तिरुवितांकूर रियासत की जमीन पर खड़े हैं।" दीवानजी ने जब यह कहा कि क्या असली राजा अजितसिंह ही ये बातें नहीं कह रहे हैं तब इट्टुण्णिक्कंडप्पन कुछ सकपकाये। दीवानजी ने उन्हें चेतावनी दी—"अजितसिंह बारंबार जिस 'केशवन' का नाम रटता रहता है उसी केशवन का संदेश उसे पहुंचा दें कि अगर राजमहल के भीतर उसने फिर कदम रखा तो उसके पैरों को हमेशा के लिए बेकार कर दिया जायेगा।"

इट्टुण्णिक्कंडप्पन ने पूछा, "इसका मतलब?"

दीवानजी—"मैं अपने अन्नदाता की राजधानी में कोई बलवा नहीं होने दूंगा। अपयश का खतरा उठाकर भी मैं बड़ी सावधानी से कार्य कर रहा हूं। कार्यक्कार इस नीति से अपरिचित तो नहीं हैं। इसलिए यहां से विदा लेने में ही आप की भलाई है।"

कार्यक्कार कुछ सोचते खड़े रहे। दीवानजी भी आदरपूर्वक मौन खड़े थे। दोनों मुखाकृति से ही एक-दूसरे के मन की बातें ताड़ गये और मुस्कुरा उठे।

इट्टुण्णिकंडप्पन—"फिर शायद आलुवा नदी के किनारे लड़ाई के मैदान में भेंट हो।"

दीवानजी—"उचित आदर-सम्मान-सहित।"

कार्यक्कार ने सिर झुकाया और चले गये।

इट्टुण्णिकार्यक्कार और उनके दल ने नकली वेष बना लिया और अपना पीछा करनेवाले सिपाहियों को हरा कर उसी रात गायब हो गये। उसी रात को राजाज्ञा प्रचारित

हुई कि किसी भी राजकीय भवन में बब्बलेश्वर के प्रवेश की कड़ी मनाही है। फिलहाल वे नंतियंतु परिवार के एक उपभवन में रहने लगे।

गौंडन के पीछे जानेवाला भिखारी कुंचैक्कुट्टि पिल्लै था। इट्टुण्णिक्कंडप्पन के चले जाने के थोड़ी देर बाद वह दीवानजी के पास लौट आया। दीवानजी ने पूछा, "इतना समय क्यों लगा ?" पिल्लै ने कहा, "पुराना आदमी नहीं है ? नाक टूट गयी है। फिर भी गंध परखने के लिए सौ नाकें हैं। उस खुर्राट ने मुझे बहुत चकमा दिया। मेरा संदेह ठीक निकला कि वह गुप्तचर है। माणिक्यगौंडन नाम झूठा है। इस व्यक्ति से सावधान रहना।"

दीवानजी ने कहा, "कैसी आफत आ पड़ी है ! अन्नदाता से निवेदन करना नहीं चाहता। पर सूचित किये बिना भी काम नहीं चलेगा। वाह रे माणिकागौंडन ! कुछ लोगों की कहानियां और बातें क्या पता कहां से कहां पहुंच जायें ? टीपू सुलतान खुशकिस्मत हैं।"

दीवानजी ने आदेश दिया कि गौंडन किसी भी हालत में बाहर जाने न पावे। कुंचैक्कुट्टि पिल्लै को कुछ चुने हुए कर्मचारियों पर कड़ी निगाह रखनी पड़ेगी तथा महाराजा की सुरक्षा का दायित्व भी उठाना पड़ेगा।

12
दीवानजी और पेरिंचक्कोडन

उसी दिन की बात है। दीवानजी सोने से पहले पद्मासन पर बैठे ध्यानलीन थे। दाढ़ी-मूंछवाला एक दानवाकार व्यक्ति धीरे-धीरे उनके पास आया। दीवानजी पलंग से उठे और सादर खड़े हो पुकारा—"कोई है? भैयाजी के लिए एक चटाई लायी जाये।"

आगंतुक ने कहा—"नहीं नहीं! मैं खड़ा ही रहूंगा। दीवानजी के सामने बैठने की लियाकत इस उजड्ड में नहीं है।"

दीवानजी—"फिर भी अच्छा हुआ जो भैयाजी पधारे। कुछ संदेश देने का मौका तो मिला।"

आगंतुक—"देखो। उम्र में बड़ा मैं हूं। इसलिए जो बताना है, सो कायदे से बता दूंगा। मेरा लाड़ला सिपाही व रसद के लिए बहुत चिंतित है न? तुम्हारे प्रभु भी तारे गिन रहे हैं। हमारा खून का रिश्ता है। मेरी बातों पर यकीन करो। तुमने मुझे घर से बाहर निकलवाया। बड़ा कष्ट दिया। वह सब भुलाकर यह कुंचुमयिट्टि पिल्लै दो-तीन लगाने को तैयार है। टीपू की तोप का सामना करनेवाले दो तीन हजार सिपाही भी देगा। तुम्हें गोदी में बिठाकर खिलानेवाला यह पेरिंचक्कोडन वचन देता है।"

दीवानजी—"दो-तीन से मतलब शायद दो-तीन लाख से है। श्री पद्मनाथस्वामी की उपहार-पेटी में वह राशि डाल दें, तो अन्नदाता कई अपराध क्षमा कर देंगे।"

दीवानजी के ये शब्द सुनते ही पेरिंचक्कोडन चिढ़ गया और बोला, "माफ-वाफ करने को क्या रखा है। अपने मंत्री पद की चाल मेरे ऊपर न चलना। मेरा छोटा साला बड़ा जरूर है। अरे ! एक छोरी एक जवान के इंतजार में बैठी है। तुम्हारी सेवा करनेवाले त्रिविक्रमन को वह दे दो और पुरानी भूलों का प्रायश्चित हो जाये। अपना घराना भूलकर मुंह मत फेरना। मेरे पिता ने तुम्हारे प्रति जो अन्याय किया उसका बदला बेटे से मत लो। ऊपरवाले ने तुम्हें यह हैसियत दी है। प्रभु ने मुझे भी एक जंगली रास्ता दिखा दिया है। मैं ज्यादा नहीं मांगता। अगर छोरी सोने की चिड़िया न हो तो बात मत करो। खुद देख लो और अगर पसंद न आये तो सिर कटवा लेना।"

दीवानजी—"भैयाजी मैंने भी कुछ बातें समझ रखी हैं। फिर भी जिसकी रोटी खायी

उसे भूलकर मौन बैठा हूं। हम दोनों के रास्ते अलग-अलग हैं। खैर! जानबूझकर अपने सिर पर खून की प्यासी तलवार गिरने न देना।"

पेरिंचक्कोडन—"तुम्हें कुछ पता चला? मैसूर से चिट्ठी लेकर आये आदमी को किसने मारा? उसका लाया खत किसने लाकर यहां डाला? यही तुम्हारी होशियारी है न? आज इस घर के अंदर बैठकर अकड़ने वाला तुम्हारा सिर पता नहीं किस दिन खलास हो जाये।"

दीवानजी को पेरिंचक्कोडन की दुष्ट बुद्धि पर अफसोस हुआ। उन्हें लगा कि उसे सदुपदेश से नेक रास्ते पर लाना चाहिए। निदान उन्होंने कहा—"अन्नदाता के पैरों पड़कर श्रीपद्मनाथ को देय राशि प्रभु के चरणों पर चढ़ा दें तो . . . .।"

पेरिंचक्कोडन—"देखो! मेरी आँख में धूल झोंकने की कोशिश न करना। तुम्हारे सिवा कौन से अन्नदाता हैं? कौन से प्रभु है?"

दीवानजी—"जरा संभलकर बात करो। कई लोगों को ऐसी गलतफहमी है। अगर भरपेट खाकर अन्नदाता के सम्मुख जाते हैं तो लौटते हैं पसीना-पसीना होकर। बाहर निकलकर कुछ लोग मूंछों पर ताव देते हैं, अकड़ते हैं। सच जानना हो तो साथ चलो। अगर अन्नदाता पेरिंचक्कोड भवन के पूजा-घर में विराजमान मूर्ति और वहां बसी हुई यक्षी का असली नाम न बता दें तो मैं यह पद छोडकर भैयाजी की शागिर्दी कर लूंगा।"

पेरिंचक्कोडन—"तो उस परप्पांडा का पता अभी तक क्यों नहीं लगा?"

दीवान—"ठीक है भैयाजी! पर मुझे चकमा देने की कोशिश न करना। मैंने भी देश-परदेश का चक्कर लगाया है। थोड़ी-सी तिकड़मबाजी मुझे भी आती है। क्या अन्नदाता के श्रीमुख से परप्पांडा की असली पहचान निकलवानी है? अन्नदाता के चरणों का यह दास बता सकता है कि पलक झपकते मैं उसे फांसी के तख्ते पर झुला दूंगा।"

पेरिंचक्कोडन की काया एकाएक कुछ लंबी हो उठी। वह कमर से कटार निकाल कर आगे की ओर उछला। दीवानजी ने तकिये के नीचे रखा तमंचा हाथ में ले लिया। यह देख कर भी ऊपर उठा कदम जमीन पर गड़ाते हुए उसने कहा, "यह भी हो जाये। बच्चे भूखे नहीं मरेंगे। पेरिंचक्कोडन ने उसकी व्यवस्था कर रखी है।"

अपना सारा मर्म दीवानजी को विदित होने की बात सोचकर पेरिंचक्कोडन ने दीवानजी की छाती को लक्ष्य करके कटार चलायी और गरजा—"तो आज दोनों की एक पारी हो जाये। मगर त्रिविक्रमन की तलवार के एक ही वार से पेरिंचक्कोडन की कटार उसके हाथ से छूटकर दूर जा गिरी। देखा तो खिड़कियों से बंदूकें उसकी ओर बढ़ रही थीं।" "अपना सिर खलास समझना" कहते हुए वह उलटे पांव लौट पड़ा।

दीवानजी ने कुमारन तंपी से कहा, "भीतर आने को अनुमति देकर बड़ा अनर्थ किया

तुमने। फिर भी दो बातें तो विदित हो ही गयीं। जो बातें किसी को पता न थीं उनका भी कुछ तो रहस्य मिला। बड़ी किस्मत की बात है।"

दीवानजी पद्मासन में फिर से ध्यानलीन हो गये।

13
पेरिंचक्कोड भवन

पेरिंचक्कोड कुंचुमायिट्टि पिल्लै दीवान केशव पिल्लै के मामा का बेटा है। इसी मामा ने केशव और उसकी मां को घर से निकाला था। बरसों तक उस साध्वी को दूसरों की मुहताज रहना पड़ा। कई फुटकर काम करने के बाद राजमहल का लिपिक बनने के पश्चात ही केशवन गांव आया। अपना घर हाथ आने पर मां के रहने की व्यवस्था की। अपना सत्यानाश करानेवाले मामा को घर से निकाल दिया। साथ में कुंचुमायिट्टि भी बाहर हो गया था।

कुंचुमायिट्टि देश-परदेश घूमा। अपना घर बनाने लायक पैसे कमाने के बाद ही वह घर लौटा। उसने गांव लौटने पर भीड़भाड़ से दूर एक शांत स्थान पर गृहनिर्माण कराना चाहा। इसके लिए उसने दो छोटी पहाड़ियों के बीच की जमीन चुनी। परंपरागत स्थापत्य नियमों के अधीन अपनी पद-प्रतिष्ठा के अनुसार भवन का निर्माण कराया। यह दक्षिण ट्रावंकोर के विशाल भवनों में अन्यतम था। यहां पेरिंचक्कोडन की बहनें रहती थीं।

इस भवन के दक्खिनी भाग में बने हुए घर में पेरिंचक्कोडन अपनी पत्नी और पुत्री के साथ रहता था। यहां उन दो स्त्रियों के अलावा एक गूंगी और बहरी नौकरानी भी थी। घने-कांटेदार पेड़ों और लताओं से घिरे रहने के कारण इस स्थान तक पहुंचना बड़ा मुश्किल था। कांटेदार पौधों से भरे टेढ़े-मेढ़े रास्ते से चलना पड़ता था। भवन अहाते के भीतर था जिसकी दीवारों पर कांच के टुकड़े लगे थे। जिस खंड में स्त्रियां रहती थीं, उसका द्वार प्रायः बंद रहता था। भवन के दक्खिनी छोर पर, दुर्गम जगह पर जो मकान था वह पेरिंचक्कोडन की कुलदेवी दुर्गा का पूजाघर था। इसके सामने दो गदाधारी भीषण मूर्तियां खड़ी थीं। पूजाघर के भीतर घना अंधेरा था। बत्ती तक नहीं जलायी जाती थी। सूरज की एक छोटी सी किरण को भी भीतर जाने का हक नहीं था। इस मंदिर की दुर्गा को भक्तों की तरफ से भोग में उपहार प्राप्त होते थे। भीतर से दिव्यवाणी भी सुनाई देती थी। पेरिंचक्कोडन ही रेशमी वस्त्र पहने और भस्म धारण किये तलवार एक हाथ में लिये देवी के सामने नृत्य करता था और प्रसाद भी देता था। ढोल और शंख बजाता था। मगर किसी ने अब तक मंदिर के भीतर की मूर्ति को नहीं देखा है। मंदिर के प्रांगण में

खड़े बड़े-बड़े वृक्षों की भारी शाखाओं के बीच छिपे हुए लोग और वन में चोरी छिपे चलनेवाले लोग उस गुप्त स्थान की सुरक्षा करते थे।

इस अड्डे से मिला हुआ करीब दो मील विस्तृत वन एक राजपथ पर खत्म होता था। उस राजपथ से सटे टीले के नीचे पत्थरों का एक मंदिर था। यहां कुछ चट्टानें और एक तालाब था। वह परप्पांडा नामक चोर सरदार का कालकूट मंदिर था। इसके नजदीक बना हुआ गहरा खड्डु मानवमांस की लोभी भीषण दुर्देवी का प्रांगण था। सुना था कि इस मंदिर का बड़ा महंत स्वयं परप्पांडा था।

परया और मलवेय जाति के सैनिक पेरिंचक्कोडन के निवास की कड़ी सुरक्षा करते थे। चूंकि पेरिंचक्कोडन तिरुवनंतपुरम् में था और सुना गया था कि उसके लौटने में कुछ समय लगेगा, इसलिए पहरे का इंतजाम कुछ ढीला था। पेरिंचक्कोडन के महल का दरवाजा प्रवेशार्थ खुला था। भीतर घना लताकुंज था। उससे सटे हुए सहन में जलते दीपदान के पास एक वनदेवी दिखाई दे रही थी। उसकी दिव्य सुषमा मेनका की कन्या शकुंतला को भी मात कर रही थी। आभूषणों से अलंकृत होने के बावजूद उसमें एक आश्रम-कन्या जैसी सादगी निखर उठी है। उसका नाम था देवकी।

देवकी ने 'अम्मा' कहकर आवाज दी तो मेनका जैसी एक औरत आंगन में निकल आयी। उसने साड़ी का कछोर कस कर पीछे खोंसा हुआ था। बायीं तरफ छोटी गेंद-सा जूड़ा बनाया था। कानों की बालियां चलते समय झूल रही थीं। चंदन का टीका माथे पर शोभित था। दोनों कलाइयों में एकाधिक कंगन पहनने के निशान थे। वह पेरिंचक्कोडन की पत्नी थी, जिसे वह लक्ष्मी पुकारता था। कठोर व निष्ठुर होते हुए भी पेरिंचक्कोडन अपनी पत्नी और पुत्री को बेहद प्यार करता था।

लक्ष्मी का प्रथम नाम नंगया था। वह नागंतलि परिवार के नारायणन नपूतिरि की पत्नी थी। किसी की साजिश के कारण वह समाज से भ्रष्ट हो गयी। भीख मांगने तक को असमर्थ वह नारी भूखी-प्यासी जिधर दो पांव ले गये उधर ही चलती गयी। चलते-चलते एक किले के पास एक वृक्ष के नीचे पहुंची तो मूर्छित होकर गिर पड़ी। वनपथ से जाते पेरिंचक्कोडन की संयोग से इस मृतप्राय सुंदरी पर नजर पड़ी। कहीं से थोड़ा सा मांड़ लाकर पिलाने पर उस स्त्री की मूर्च्छा दूर हुई। वह पेरिंचक्कोडन की सहायता स्वीकार कर पेरिंचक्कोडन-परिवार में पहुंची। नौवें चांद्र मास में उसने एक सुंदर बच्ची को जन्म दिया। मां की इच्छानुसार पेरिंचक्कोडन ने बच्ची का नाम देवकी रखा। वह उसे प्यार से देवू पुकारता था। पेरिंचक्कोडन की इच्छा थी कि देवकी का ब्याह एक सुयोग्य, अभिजात और प्रतापी युवक से कराया जाये। वह त्रिविक्रमन को दामाद बनाने के लिए कुछ दिनों से तरह-तरह के प्रयत्न करता आ रहा था। पेरिंचक्कोडन को डर था कि धनी

होने के बावजूद उजडु कल्लरक्कल पिल्लै अपनी बेटी को हरण कर लेगा। अतएव उसने त्रिविक्रमन को पाने की कोशिश में और तेजी की।

मां बीमार नौकरानी की सेवा में लगी थी। बेटी की पुकार सुनकर मां ने पूछा कि अकेली होने से तो वह नहीं डर गयी? बेटी ने बताया कि उस वन में किसी के संग के बिना अकेले रहना कठिन है और उसे परप्पांडा का डर हमेशा बना रहता है। मां ने ढांढ़स बंधाया कि परप्पांडा से डरने की कोई जरुरत नहीं। माँ ने जब कल्लरक्कल पिल्लै की बात पूछी तब देवकी ने कहा कि जंगल में संयोग से एक बार कल्लरक्कल पिल्लै दिखाई पड़ा था। उसने यह भी पूछा था कि उसकी मां जब पेरिंचक्कोडन से दाम्पत्य संबंध बनाये हुए है तब वह क्यों कल्लरक्कल पिल्लै को स्वीकार नहीं करती।

मां और बेटी की बातचीत चल ही रही थी कि बाहर से कुछ रोने-चिल्लाने की आवाज व हल्ल-गुल्ला सुनाई पड़ा। स्त्रियों से सोचा कि तिरुअनंतपुरम् से लौटा पेरिंचक्कोडन परयर आदि को दंड दे रहा है। लक्ष्मी अम्मा ने यह सोचकर कि पति पर कहीं कोई आफत न टूट पड़ी हो, खुद जाकर दरवाजा खोला। मां से कसकर लिपटी देवकी खड़ी कांप रही थी।

दीवानजी को जब पता चला कि पेरिंचक्कोडन तिरुअनंतपुरम् में है तब उन्होंने उसी रात कुंचैक्कुट्टि पिल्लै को पेरिंचक्कोड भवन की यथार्थ दशा जानने के लिए भेजा। वह तुरंत पद्मनाथपुरम् पहुंचा। वहां डेरा डाले फौज को साथ लेकर वह पेरिंचक्कोडन के महल की तलाशी लेने लगा। दो अत्यंत खूबसूरत औरतों को देख कर सिपाहियों ने अपना साहसिक अभियान रोक दिया। दोनों स्त्रियां बगल के कक्ष में द्वार बंद करके ईश्वर से प्रार्थना करती खड़ी थीं। एक सिपाही ने कुंचैक्कुट्टि पिल्लै को उन स्त्रियों की खबर दी। पूजाघर की कार्रवाई कुछ ईमानदार सेवकों को सौंपकर कुंचैक्कुट्टि पिल्लै उस कक्ष के पास गया जिसमें वे स्त्रियां थीं। उसने उन्हें कक्ष से बाहर आने का आदेश दिया। लक्ष्मी अम्मा ने जवाब दिया कि "वे यहां नहीं हैं।" स्त्री की आवाज सुनकर झिझकते हुए भी उसने सिपाहियों को हुक्म दिया—"भीतर प्रवेश करो और दरवाजा तोड़कर तलाशी लो।"

करुण स्वर में लक्ष्मी अम्मा ने फिर कहा, "यहां केवल स्त्रियां हैं। श्री देवी भगवती की कसम।" यह सुनकर कुंचैक्कुटटि पिल्लै को लगा कि दीवानजी का संदेह ठीक निकला। धमकी देने पर लक्ष्मी अम्मा द्वार खोलकर बाहर आयी। देवकी भी सहन में आ गयी। दोनों एक-दूसरे से सटी आंसू बहाने लगीं। दीपक की रोशनी में एक ओर सिर दिखाई दिया तो कुंचैक्कुट्टि पिल्लै ने सिपाहियों को दूर रहने का आदेश दिया।

अब जो आया वह अष्कन पिल्लै था। उसने कुंचैक्कुट्टि पिल्लै को कल्लरक्कल पिल्लै की प्रेमिका के घर में जबर्दस्ती प्रवेश करने के अपराध के लिए अपनी बोली में

लानत मलामत की। कार्यक्कार ने उसी की बोली में उत्तर दिया। अषकन पिल्लै खुश हुआ कि उसे किसी ने कल्लरक्कल पिल्लै का मंत्री माना। इतने में कल्लरक्कल पिल्लै खुद वहां आ गया। लक्ष्मी अम्मा नौकरानी की देखभाल करने चली गयी। कुंचैक्कुट्टि पिल्लै ने देवकी और कल्लरक्कल पिल्लै के परस्पर दृष्टिपात से समझ लिया कि दोनों एक-दूसरे से प्रेम करते हैं।

पेरिंचक्कोडन की संपत्ति जब्त करके सरकारी खजाने में जमाकर दी गयी। कुंचैक्कुट्टि पिल्लै इसकी गवाही कल्लरक्कल पिल्लै से कराके तिरुअनंतपुरम् चला गया। पेरिंचक्कोडन के पास एक बड़ी गुप्त निधि थी। सरकार ने उस निधि को टीपू के साथ युद्ध के खर्चे के लिए अपने कब्जे में ले लिया।

14
क्षुद्र काली की बानी

माणिक्यगौंडन को तिरूवितांकूर आये दो वर्ष हो रहे थे। हाथ खोलकर पैसे खर्च करके उसने पूरे राज्य में अपना काम करनेवाले लोगों का एक जाल बिछा दिया था।

पेरिंचक्कोडन, अजितसिंह और कंठीरव, गौंडन के आदेशनुसार कार्य करते थे। इनमें किसी को गौंडन ने खुद नही देखा था। गौंडन और इट्टुण्णिकंडप्पन ही एक- दूसरे के साथ ताल-मेल करके काम करते थे। पेरिंचक्कोडन ने गौंडन की कुटिल बुद्धि की थाह पर ली थी। इसलिए उसने मान लिया था कि परप्पांडा की परया फौज वह उसकी मातहती में दें देंगे। पर गौंडन की परप्पांडा से एक बार भेंट भी न हुई थी।

गौंडन ने अनेक गृहस्वामियों और छोटे-बड़े धनियों को अपने पक्ष में कर लिया था। उसने नंतियंतु उण्णित्तान को राजद्रोही बनाना चाहा। इसी मतलब से उन्हें एक पत्र भी भेजा। मगर दुबारा पत्र भेजने की कोशिश नहीं की।

गौंडन ने टीपू से वादा किया था कि वह महाराजा और मंत्री का वध कर डालेगा। टीपू की फौज तिरूवितांकूर की तरफ कूच कर गयी थी। उसका मुकाबला करने तिरूवितांकूर की फौज भी राज्य की उत्तरी सरहद की ओर प्रस्थान कर गयी थी। गौंडन को याद आया कि दीवानजी के लड़ाई के मैदान में आने के पहले अगर उनका वध न कर दूं तो टीपू मेरा गला कटवा देंगे।

गौंडन ने अपनी व्यापारशाला के मुख्य कक्ष में प्रमुख विद्रोही लोगों की एक बैठक बुलायी ताकि अगला कदम तय किया जा सके। यह घटना राज्य द्वारा पेरिंचक्कोडन के घर की संपत्ति को जब्त कर लेने के चार दिन बाद की थी। परामर्श सम्मेलन में पेरिंचक्कोड भी हाजिर था, मगर उसे पता न था कि पेरिंचक्कोड भवन और उससे जुड़ी संपत्ति पर सरकार ने कब्जा कर लिया है। सम्मेलन का अध्यक्ष गौंडन था। बड़े गुप्त रूप से विचार-विनिमय हुआ। चारों ओर सख्त पहरा था। पेरिंचक्कोडन और अजितसिंह के सैनिक पहरे पर तैनात थे। दो हथियारबंद सिपाही स्वामी का आदेश पूरा करने के लिए तैयार द्वार पर खड़े थे।

अजितसिंह के आने में कुछ विलंब हुआ। गौंडन ने उसे इस पर आड़े हाथों लिया। उसके बाद उसने कहा कि कमरुद्दीन के नेतृत्व में निकली टीपू की सेना का पूरा ब्यौरा

दिया जाये। अजितसिंह के लिए यह संभव न था। महाराजा की फौज का ब्यौरा मांगा गया तो अजितसिंह वह भी न दे सका।

तब गौंडन ने तिरुवितांकूर फौज का पूरा-पूरा ब्यौरा खुद सुनाया। पेरिंचक्कोडन ने गौंडन को गुप्तचरी की उसकी कुशलता पर बधाई दी।

गौंडन ने प्रस्ताव किया कि टीपू की इच्छा के अनुसार दीवान का वध करने का कार्य अजितसिंह को अमल में लाना चाहिए। अजितसिंह ने उत्तर दिया कि दीवानजी के भवन में और उसके आस-पास चारों तरफ सिपाहियों का सख्त पहरा है। इसलिए वह काम नहीं कर सकेगा। तब गौंडन ने कहा, "उत्तर की तरफ यात्रा के दौरान दीवानजी धन-संग्रह के लिए दो-तीन दिन आलप्पुषा में ठहरने वाले हैं। उस समय उतनी सख़्त सुरक्षा नहीं होगी। दीवानजी के वध के लिए वह अच्छा मौका रहेगा।

गौंडन ने एक विशेष उद्देश्य से ही दीवानजी के वध का दायित्व अजितसिंह को सौंपा था। गौंडन को मालूम था कि उण्णित्तान की सुपुत्री सावित्री का ब्याह अजितसिंह से कराना अपमानजनक होगा। पेरिंचक्कोडन ने गौंडन के प्रस्ताव का घोर विरोध किया। उसकी कल्पना थी कि त्रिविक्रमन को मंच से हटा देने पर ही उससे देवकी का ब्याह कराया जा सकेगा। इधर अजितसिंह सावित्री से ब्याह करने के वचन से मुक्त होने के उपाय सोच रहा था। कारण यह कि अजितसिंह ने अच्छी तरह समझ लिया कि था कि उण्णित्तान को राजद्रोही बना पाना असंभव है। अतएव आलप्पुषा जाकर दीवानजी का वध करने का कार्य अजितसिंह ने अपने ऊपर ले लिया। उसने सोचा कि सावित्री से ब्याह करने की मुसीबत से छुटकारा पाने का यही एक उपाय है। उसने यह भी मन ही मन सोचा कि अगर किसी कारण वह दीवान का वध न कर सका तो कोई बहाना बना देगा।

अजितसिंह का रुख पेरिंचक्कोडन को पसंद नहीं आया। वह अजितसिंह का मतलब ताड़ गया था। वे दोनों एक- दूसरे से गुस्से में बातें करने लगे। इस पर गौंडन ने प्रस्ताव रखा कि कंठीरव राव दीवानजी की हत्या का भार ले। कंठीरव का कुछ और इरादा था। इसलिए उसने भी इस दायित्व से अपनी गर्दन छुड़ा ली। राव का उद्देश्य था महाराजा का वध करके टीपू का विशेष स्नेहभाजन बन सके।

अजितसिंह आलप्पुषा की यात्रा के लिए उठ खड़ा हुआ। कंठीरव भी कार्यक्रम समाप्त समझ कर उठने लगा। पेरिंचक्कोडन गुस्से से लाल हो उठा और बोला, "सुनो सेठजी! इस कबाड़ी की सौदेबाजी के लिए पेरिंचक्कोडन यहां नहीं आया है। कोई काम अपने ऊपर लेकर उसे पूरा न करनेवाला क्या असल बाप का बेटा कहलाता है? आप लोगों ने उण्णित्तानजी को क्या समझ रखा है? क्या वे बच्चे हैं? उनके पास धन भी

काफी है। बड़े-बड़े विद्वानों के भी आचार्य हैं। हमारे बीच उम्र में सबसे बड़े आप ही हैं। इसका इन्साफ कीजिए।"

उण्णित्तान की प्रशंसा गौंडन को पसंद आयी। उसे लगा कि सीधे टीपू से हुक्म लेकर आये राव और अजितसिंह को ठुकराकर एक नये रिश्तेदार का पक्ष लेना उचित नहीं। गौंडन को याद आया कि उसने टीपू को वचन दिया था कि पेरिंचक्कोडन के प्रभाव के बल पर परप्पांडा के तस्कर दल के हाथों वह तिरुवितांकूर के अनेक सैनिकों को जान से मरवा सकेगा। बड़ी सावधानी से वह सोचने लगा कि यह कैसे संभव होगा। इतने में अजितसिंह उठ्ठकर वहां से चलने लगा। पेरिंचक्कोडन ने उसे रोका। फिर वह अजितसिंह और टीपू को गाली देता गुस्से में जाने लगा। गौंडन ने पेरिंचक्कोडन की पीठ सहलाकर उसे मनाया।

पेरिंचक्कोडन ने खुद इसका उपाय सुझाया। उसने सम्मति दी कि वंचिचूर जंगल के परप्पांडा से भविष्यवाणी करवा कर उसके अनुसार काम किया जाये। इस पर सब सहमत हुए। भविष्यवाणी सुनने पेरिंचक्कोडन नहीं गया। उसने इसकी सफाई देते हुए कहा, "मैं जिस पवित्र महाकाली का भक्त हूं उसके सामने क्षुद्रकाली बानी नहीं सुनायेगी।" जब पेरिंचक्कोडन वहां से चला गया तब परामर्श-मंडप के सामने खड़ा एक पहरेदार भी गायब हो गया।

चार-पांच घंटों के बाद वंचिचूर जंगल में परप्पांडा का स्थान शराब पीकर हंगामा मचानेवाले काले बंदरों का अखाड़ा बन गया। जहां-जहां पुआल में आग लगाकर लोग उसमें चूहा, घूस वगैरह भूनकर खा रहे थे। मुर्दा गायों के इर्द-गिर्द बैठे वनवासी आपस में हंसी-मजाक कर रहे थे। हर झाड़ के पीछे लंबे-चौड़े पहरेदार सावधान खड़े थे। गौंडन राव और अजितसिंह इन्हें पार करने गये। जंगल के भीतर से आये सवालों का उत्तर गौंडन ने संकेत-शब्दों से दिया। तीनों परप्पांडा की कुटी पर पहुंचे। वहां घना अंधेरा था। नीलकाली की भविष्यवाणी एक गाने के रूप में प्रकट हुई। नीलकाली ने तीन बातें बतायीं—एक, गौंडन बड़े ओहदे पर पहुंचेगा। दो, अजितसिंह पहले से तय की हुई कन्या से ब्याह करेगा। तीन, टीपू तिरुवितांकूर की सेना को हराकर विजयी होगा। बानी के बाद तीन बार अट्टहास सुनाई दिया। धड़ाके से किसी वस्तु के गिरने की ध्वनि भी सुन पड़ी। गौंडन ने अचेतन हाथों पर दक्षिणा चढ़ाई। फिर हर ओर खामोशी छा गयी।

गौंडन और साथी लौट पड़े। भील के वेष में एक आदमी उनका पीछा कर रहा था। उन्होंने उसे नहीं देखा।

गंगूराम सेठ की धर्मशाला में कालिप्रभाव भट्ट ने एक पहरेदार को बांहों से कसकर जान से मार दिया था? उसके छोटे भाई मंगाराम ने इसका बदला लेने का निश्चय किया। वह तिरुअनंतपुरम् पहुंचकर गौंडन के पीछे परछाईं की तरह लग गया। इसे सिर्फ

तेलुगु आती थी। मंगाराम ने कुंचैकुट्टि पिल्लै से मित्रता की। इसके बाद दोनों मिलकर गौंडन की हर चाल का निरीक्षण करने लगे। भिन्न-भिन्न पोशाकों में मंगाराम और कुंचैकुट्टि पिल्लै, कभी साथ-साथ तो कभी अकेले, गौंडन के रहस्यों का पता लगाने लगे।

15
परिणय-भंग

परप्पांडा की नीलकाली की भविष्यवाणी के दूसरे दिन रात को ही दीवानजी का वध करने के इरादे से कंठीरव ने आलप्पुषा को प्रस्थान किया। इसी समय कोट्टारक्करा के नंतियम में होने वाले विवाह का निमंत्रण पत्र पाने के कारण अजितसिंह उधर चला। तीसरे दिन ही गौंडन ने तिरुअनंतपुरम् का व्यापार बंद करके अपने व्यापारी दल को उत्तर की दिशा में भेजा। वह खुद पालकी में बैठकर जाने लगा तो विदा करने पेरिंचक्कोडन भी आया था। पेरिंचक्कोडन ने प्रतिज्ञा की कि वह कोचिन जरूर जायेगा। उसने गौंडन और टीपू की विजयकामना की।

पेरिंचक्कोडन वहां से वचिंचूर के अपने अड्डे पर पहुंचा तो वहां का दृश्य देखकर हक्का-बक्का रह गया। परप्पांडा के अड्डे की स्थिति महाभारत युद्ध के बाद के कुरूक्षेत्र की सी थी। जलकर राख बनी झोंपडियां, मारे गये सिपाहियों की लाशें, घायल होकर चीखनेवाले लोग, गोश्त खाने वाले सियारों के झुंड आदि पेरिंचक्कोडन की नजर में पड़े।

युद्ध के मोर्चे पर जाने की तैयारी के साथ-साथ केशवन उण्णित्तान ने नंतियम महल में सावित्री के विवाह की तैयारियां भी कीं। वे मीनाक्षी और सावित्री को साथ ले तिरुअनंतपुरम् से चल पड़े। मीनाक्षी को कष्क्कूट्टम् के चिलंपिनेल परिवार में रहने के लिए छोड़कर सावित्री को नंतियम भेजा। सावित्री की जरूरी सहायता करने का जिम्मा कोटंता आशान के सुपुर्द कर दिया।

नंतियंतु भवन बड़ा विशाल था जिसमें अनेक कोठार, उपगृह एवं कक्ष थे। एक टीले के ऊपर प्राकृतिक सुषमा के वातावरण में खेत, बाग, कमल-सरोवर, तालाब आदि के बीच में यह भवन बना था। सावित्री के अनेक सेवक और नातेदार थे। उनमें किसी से भी घनिष्ठता या दूरी से बचते हुए ऐसा व्यवहार करती थी कि किसी को बुरा न लगे। उसने पहनने-ओढ़ने में कोई रुचि नहीं ली। वह बहुत कम गहने पहनती।

कोटंता आशान ने सोचा कि अजितसिंह के साथ सावित्री का ब्याह नहीं होगा। उसकी जगह सावित्री कोटंता के गले में वरमाला पहनायेगी। उसे लगा कि इसके पहले सावित्री से प्रेम-संबंध स्थापित करना जरूरी है। उसने सोचा कि काम निकालने के लिए सावित्री की दासी कुंजि को साधन बनाया जा सकता है। उसने कुंजि से प्यार करने का

अभिनय करते हुए उससे घनिष्ठता स्थापित की और उन दोनों के ब्याह के लाभ गिनाये। वह अजितसिंह के साथ उसके मुख्य सहायक के रूप में जायेगा। कुंजि सावित्री की दासी रहेगी। इस तरह सभी बड़े सुख से रहेंगे। आशान ने कुंजि के वास्ते एक छंद लिख कर दिया। असल में उसने वह छंद सावित्री को लक्ष्य करके लिखा था। उसने सोचा कि अनपढ़ कुंजि निश्चय ही वह श्लोक सावित्री को दिखायेगी। इस तरह कोटंता की अभिलाषा पूरी होगी।

सीधी-सादी कुंजि ने श्लोक सावित्री के हाथों में दे दिया। सावित्री को उस बेचारी से हमदर्दी हुई। वह सोचने लगी कि पिताजी ने जिस कोटंता आशान को मेरी सुरक्षा का भार सौंपा है वह पता नहीं आगे कैसे-कैसे अनर्थ करने वाला है। अपनी बेवकूफी और आनेवाली आफत के बारे में सोचकर कुंजि रो पड़ी। सावित्री ने उसे समझा-बुझाकर चुप कराया। उसे सचेत भी किया कि आगे से कोटंता आशान के साथ बड़ी सावधानी बरतना। वह जब स्नान करने के लिए तालाब के किनारे खड़ी थी, तभी यह घटना घटी थी। उस वक्त शंखमुद्रांकित लघुदंड धारण किये एक भद्र वहां आया। सावित्री के आदेश से कुंजि दूर चली गयी तो आंगतुक सावित्री को एक संदेश सुनाकर बड़ी शीघ्रता से चला गया। वह आदमी सावित्री की सुरक्षा का राजकीय संदेश लाया तो सावित्री की जान में जान आयी। वह निश्चिंत होकर तालाब में स्नान करने उत्तरी।

ब्याह का दिन। रात के कई घंटे बीते चुके थे। विवाह के लिए नियत मंगल मुहूर्त आ गया, प्रीति-भोज के लिए तैयार चीजें ठंडी हो गयीं, फिर भी बारात नहीं पहुंची। कोटंता ने अजितसिंह के न पहुंचने के लिए गणेशजी को मीठे प्रसाद का भोग चढ़ाने की जो मनौती मानी थी अब उसकी मात्रा दोगुनी कर देने की प्रतिज्ञा की।

समय बीतता गया। प्रीति-भोज का दौर चला। पुरोहित का दायित्व संभाले हुए कृष्ण कुरूप्प को ज्योतिषी ने समझाया कि आधी रात के बाद एक और मुहूर्त है। कोटंता आशान खुशी के मारे सावित्री के कमरे की परिक्रमा कर रहा था। युवकों का एक दल बुजुर्गों को उल्लू बनते देख कर खुश हो रहा था। उनमें से एक रसिया ने कोटंता आशान से पूछा, "क्यों जी, तुम ही शादी क्यों नहीं कर लेते?" आशान ने अपनी चार उंगलियां ऊपर उठाकर इशारे से बताया कि कर सकता है। नियत मुहूर्त पर विवाह संपन्न होते न देखकर क्षुब्ध कृष्ण कुरूप्प की नजर इस पर पड़ गयी। उसने जोर से आवाज दी, "पकड़ लो उस कोटंता को।" कई दिशाओं से आवाज आयी—"हां, हां इसी बदमाश की शैतानी होगी।" कोई चिल्ला उठा, "पकड़कर चमड़ी उधेड़ दो इसकी।" कोटंता भागा। लोगों ने पीछा किया। कोटंता आशान का दुप्पट्टा और चोटी के फूल पीछा करनेवालों के हाथ में आ गये। भागते-भागते एक अंधेरी जगह में उगी कांटेदार बेलों में उसकी धोती अटक कर खुल गयी। एकदम नंगा कोटंता उसी तरह भागते हुए एक जंगल में घुस गया।

दिन उगने तक तो अजितसिंह की अगवानी के लिए गये कहार और सेवक खाली हाथ लौट आये।

दीवानजी ने कोट्टराक्करा के कार्यक्कार को आदेश दे रखा था कि सावित्री सुरक्षित रहे और नंतियम में विवाह संपन्न न होने पावे। तालाब के किनारे दूत ने कार्यक्कार का ही संदेश सावित्री को दिया था।

तिरुअनंतपुरम् से चलकर अजितसिंह और उसके बाराती किलिमानूर गांव पहुंचे। वहां मंदिर में भोजन किया और एक जगह आराम करने लगे।

कोट्टारक्करा कार्यक्कार ने अजितसिंह को मजा चखाने की ठानी।

विवाह के दिन अजितसिंह के अस्थायी निवास के पास एक पालकी और कहार दिखायी दिये। उन्हें देखकर अजितसिंह ने पूछा, "ये उण्णित्तान के लोग है न?" जवाब में "जी हुजूर" जवाब सुनकर अजितसिंह बहुत खुश हुआ। उसने कहा, "उण्णित्तान बड़े समझदार हैं। स्नान-भोजन के बाद वह दूल्हे की वेश-भूषा में पालकी में लेट गया। अंगरक्षक तलवार लिये आगे-आगे चले। मार्गदर्शक, सेवक आदि भी साथ थे। लगातार "हटो बचो" की पुकार करते कहार उन्हें लेकर आगे बढ़े। चलते-चलते अजितसिंह कई तरह के प्रश्न पूछता रहा। भिन्न आंचलिक भाषा होने के कारण उन लोगों ने अजितसिंह के सवालों का गलत मतलब समझा। इसलिए उत्तर बड़े मजेदार थे।

बातचीत रोक देने का निर्णय करके वह पालकी वालों को प्रोत्साहित करने के लिए आगे की तरफ सरका। पालकीवाले हवा से मुकाबला करते दौड़ने लगे। उनके अंगोछे हवा में उड़ रहे थे। सांझ होते-होते पालकी एक छोटे वन के नजदीक पहुंची। अजितसिंह ने अपने सेवक से कहा, "एक गीत सुनाओ तो अच्छा रहे।" सेवक ने निवेदन किया, "गाना और दौड़ना एक साथ-मुमकिन नहीं है।" अजितसिंह ने कहा, "तो पालकी नीचे उतार दो।"

पालकीवालों को हुक्म मिला था कि चांद डूबने तक पालकी ढोना। उसके बाद आखिरी चाल चलना। अजितसिंह ने पालकी उतारने को कहा तो कहारों ने वैसा ही किया और वन के भीतर चले गये। सेवक ने कथकलि का गीत और श्लोक गाया। तब भी पालकी वाले और पथप्रदर्शक नहीं लौटे। विवाह की घड़ी सिर पर थी। अजितसिंह के पेट में चूहे दौड़ रहे थे। गायक ऊंघने लगा। उसका स्वर बेताल होता गया। फिर वह वहीं बैठकर खर्राटे लेने लगा। अजितसिंह की भी इच्छा हुई कि जल्दी ही वह किसी सुरक्षित स्थान पर पहुंच जाये।

कहारों ने गांव की सीमा के भीतर एक घर में भरपेट खाना खाया और दूसरे घर में मदिरा का सेवन किया। इसके बाद वे यात्रा जारी रखने के लिए अजितसिंह के पास आये। अजितसिंह ने उन्हें देर करने के अपराध के लिए खूब फटकारा और चेतावनी दी

कि इसके लिए उन्हें प्राणदंड मिलेगा। पालकीवालों के मुंह से शराब की बू आ रही थी। अजितसिंह को भी उन्हीं की तरह प्यास बुझाने की अभिलाषा हुई। पालकीवालों के गाने की आवाज अब ऊंची हो गयी। अब यात्रा सरस और कोलाहलमयी हो गयी।

वह सचमुच एक बारात थी। खुला आसमान। शुक्ल पक्ष के दूसरे चरण का चंद्रमा आकाश में। नीचे झींगुरों की झनकार के साथ सियारों का हुंआना। कहार लोग तेज रफ्तार से दौड़ रहे थे। जंगलों, पत्थरों के चबूतरों, टीलों, खेतों, झीलों और झाड़ों में से होते हुए वे सरपट दौड़ रहे थे। अब वे एक पहाड़ी पर चढ़ रहे थे। झाड़ों को हाथ से दोनों तरफ खिसकाते, उछलते हांफते वे दौड़ रहे थे। बेलों और पेड़ों की डालियों ने अजितसिंह को बार-बार गले लगाया। कांटों से उसके अंग छिलने लगे। एक गुफा जैसी जगह को पार करके वे एक और पहाड़ी पर चढ़े। अजितसिंह का सिर नीचे की तरफ था और पांव ऊपर की तरफ। अजितसिंह ने उन्हें सही तरीके से पालकी ले चलने को कहा। पहाड़ी के ऊपर पहुंचते-पहुंचते अजितसिंह को जोर की भूख लग आयी। सब पालकीवाले सीधे पहाड़ी पर से तेजी से उतरने लगे। अजितसिंह के साथी 'बाप रे' चिल्ला उठे। अजितसिंह पालकी के भीतरी खंभों को हाथ से जकड़े बैठा रहा। पालकीवाले अचानक पलटते तो बब्बलेश्वर भीतर नट की तरह उछल पड़ता। उसे लगा कि मुझे धोखा दिया गया है। उसने हिंदुस्तानी में बादल की तरह कड़क कर हुक्म दिये। उसके सेवकों ने तलवारें निकाल ली।

उसने हुक्म दिया—"पालकी रोको।" कहारों ने पालकी नीचे उतार दी। कहार और दूसरे लोग उन्हें छोड़ कर वन के भीतर भाग गये। वहां नंगा पड़ा कोटता आशान सेवकों की नंगी तलवारें और अजित सिंह को देखकर घबरा उठा। वह अजित सिंह के पैरों पड़कर अपनी रामकहानी सुनाने लगा। अजितसिंह ने कोटंता को धीरज बंधाने की कोशिश नहीं की। उसने इतना ही पूछा, "क्या मेरे ठहरने लायक कोई जगह यहां मिल सकती है?" कोटंता बोला, "थोड़ा पश्चिम में कोषिक्कोड के सामूतिरी राज पधारे हुए हैं।" अजित सिंह ने अपने कान बंद कर लिये। उसने कोटंता को चले जाने का आदेश दिया। उसने प्रतिज्ञा की कि जिसने मुझे यों खतरे में डाला उसे, उस कन्या और उसके प्रेमी को यमपुरी भेज दूंगा।

16
प्रीत दर्शन

चंद्रक्कारन ने कष्क्कूटम् पर जिस चिलंपिनेषियम् भवन का निर्माण किया वह निर्माण काल की भव्यता के साथ बना रहा। अब वह केशवन उण्णित्तान के कब्जे में था। प्रवेशद्वार पर हथसाल, ऊंची प्राचीरें, विलायती शैली का बंगला, पूजादि के लिए हरि पंचानन द्वारा उपयोग में लाया गया स्नान मठम्, काले पत्थरों के घाटोंवाला तालाब, विशाल मुख्य भवन आदि सभी को अपने मामा के दिनों की तरह उण्णित्तान भी स्वच्छ बनाये रखते थे। उस भवन के तहखानों के भीतर जो खजाना था उसमें भी कोई कमी नहीं हुई थी। भवन से सटी हुई भूमि भी उपजाऊ थी। पर उण्णित्तान को यहां आने की फुरसत कम ही मिलती थी। भवन की देखभाल करनेवाले नौकर भी कम थे, इसलिए लग रहा था कि भवन की चमक-दमक कम होती जा रही है।

मीनाक्षी अम्मा के यहां आने के बाद भी हालत ज्यों की त्यों बनी रही। बेटी से अलग होने के कारण दुखी मीनाक्षी को चटाई पर लेटने पर भी नींद नहीं आती थी। घर की देहलीज पर बैठी आठों पहर आंसू बहाती रहती थी। नारायण जैसे पति को उस पर संदेह तो था, परंतु उसका संग हमेशा के लिए त्याग देने की उन्हें नहीं सूझी। फिर भी मीनाक्षी को इस बात की बड़ी मानसिक व्यथा थी कि युद्धकाल में जब स्त्री को पुरुष का आश्रय चाहिए, पति ने उसे अकेली छोड़ दिया था। सावित्री भी पिता से नाराज थी। वह उनकी इच्छा को ठुकराने को भी तैयार थी। मगर मीनाक्षी अम्मा की पति-भक्ति जरा भी कम नहीं हुई थी। उसने अपने आप को समझाया कि बुरे ग्रहों के ही कारण ऐसा हो रहा है। उसे चिलंपिनेत्तु भवन के दक्खिनी पार्श्व की मंत्रशाला स्मरण हो आयी। वहीं पर वे दोनों कुछ दिन अज्ञातवास पर रहे थे। वहीं पर उसने केशवन उण्णित्तान को सबसे पहले देखा था और वे एक दूसरे के प्रति आकृष्ट हो गये थे। प्रेमी केशवन की छेड़छाड़ भी मीनाक्षी अम्मा को याद आयी।

उस विशाल भवन की दहलीज पर मीनाक्षी अम्मा एक खोये हुए शिशु की तरह रोकर लस्त-पस्त पड़ी रहती थी। उसने सोचा कि मैं अपने परिवार के दुष्कर्मों का फल भोग रही हूं। सचमुच क्या हमारे पूर्वज पापी थे ? वे राजशक्ति का मुकाबला करने वाले वीर थे। राजशक्ति की शिला से रगड़ खाकर चमकने वाले हीरे थे। कौन जाने सच क्या

है ? ईश्वर ही जानता है । फिर मीनाक्षी अम्मा ने सोचा क्यों न अपनी पुण्यवती दादी के अंतिम संस्कार-स्थल मंत्रकूट भवन तक हो आऊं ? मगर फिर सोचा कि पति की अनुमति के बिना घर से बाहर पांव निकालना ठीक नहीं है । जिस भक्त वृद्ध ने बचपन में उसका जी बहलाया, उसे दुलारा और अपनी जान से बढ़ कर प्यार से पाला था वह भी दादी की समाधि के पास ही चिरनिद्रा में लीन है । उसे वे पुराने बुरे दिन याद आये ।

तभी जंगली भैंसे जैसी शक्ल की एक मानव-मूर्ति द्वार पर प्रकट हुई । उसे देखकर वह मूर्ति जहां की तहां स्तब्ध खड़ी रह गयी, जैसे लूटने के लिए आया डाकू घर के पहरेदारों को देख स्तब्ध रह जाता है । जरी की चमक से जगमगाती छोटी अचकन, बडा-सा रेशमी माफा, कछोटा मारकर पहनी हुई आठ-दस गज लंबी धोती, आरे की चिराई की सी आवाज करता जूता, झबरैली गोलाकार दाढ़ी से भरा मुंह, नहा करके कंधे पर पड़ा कश्मीरी दुपट्टा—यही उसकी वेश-भूषा थी । मीनाक्षी अम्मा ने तमिलनाडु की यात्राओं के दौरान ऐसी वेश-भूषा बहुत देखी थी । इसलिए उसे डर नहीं लगा । वह सादर उठ खड़ी हुई । आगंतुक का गोल चेहरा जाने किस विचार से कांप उठा । अचकन के बाहर दीखनेवाली लोहे-सी मुट्ठियां कांप उठीं । उसकी उपस्थिति से जैसे पूरे वातावरण की सांस रुक गयी हो । हर चीज को वह बड़े गौर से देख रहा था, मानो महल और उसके आसपास के सारे मकान खरीदने आया हो ।

मीनाक्षी अम्मा पर नजर गड़ाये उसकी तरफ बढ़ते उस आदमी के मुखमंडल पर हल्की मुस्कुराहट बिखरी हुई थी । थोड़ा आगे आकर वह फिर मुड़ा और प्रवेशद्वार के बेल-बूटों पर प्रेम से निगाहें फिरायीं । आंगन में टहलते हुए वह रेत के कणों को चप्पल से बार-बार सहला रहा था । यह सब देखकर मीनाक्षी अम्मा दंग रह गयी । थोड़ा उत्तर की ओर हटकर दीवार से पीठ टिकाये वह खड़ी थी । उस आदमी ने एक बार मीनाक्षी अम्मा को सिर से पांव तक देखा, तो उसकी आंखें भीग गयीं । मीनाक्षी अम्मा शंकाकुल हो उठी थी कि कहीं उस पर एक नयी आफत तो नहीं टूट पड़ने वाली है ।

वह वृद्ध वही चंद्रक्कारन था जो वर्षों पहले गायब हो गया था । माणिक्यगौंडन के वेश में जब वह तिरुअनंतपुरम् में रहता तब उण्णित्तान की अनुपस्थिति में मौका पाकर एक बार गेरूए कपड़ों में नंतियत्तु मठम् गया था । अगर सावित्री इस वक्त वहां होती तो जरूर उस बाबाजी को पहचान लेती ।

तिरुअनंतपुरम् प्रवास के दिनों में गौंडन ने तिरुवितांकूर के कई स्थानों और गांवों के दर्शन किये थे, परंतु वह जानबूझकर चिलंपिनेत्तु भवन नहीं गया । शायद उण्णित्तान को राजभक्त समझ कर ही उसने उससे मिलने की कोशिश नहीं की थी ।

मीनाक्षी अम्मा के पास तक वह बहुत धीमे कदमों गया । बरामदे तक पहुंचते-पहुंचते 'देवी' कहकर वह जमीन पर लोट गया । उसी वक्त सूरज बादलों से ढक गया और वृक्षों

के पत्ते भी जैसे स्थिर हो गये। आंगन के उत्तरी द्वार पर खड़े सेवक मीनाक्षी अम्मा की आज्ञा की प्रतीक्षा कर रहे थे, मानो वे उस विचित्र अतिथि की खातिरदारी करना चाहते हों। वे समझ गये थे कि यह आदमी दक्खिनी पहाड़ी पर डेरा डालने वाला नवकोटी नारायण चेट्टीयार है। उन्हें डर था कि कहीं वह धूर्त व्यापारी हीरे के नाम पर कोई कांच का टुकड़ा मीनाक्षी अम्मा को न बेच दे।

थकान के कारण गौंडन की आंखें अपने आप बंद होने लगी थीं। उसके मुंह से निकला—"जलम्, जलम्, जलम्।" मीनाक्षी अम्मा सोने की तरह चमकते एक लोटे में ताजा ठंडा जल लायी। वृद्ध ने कांपते हाथों से लोटा लेकर नीचे रखा। फिर पूछा कि वह घर अम्मा का ही है न? मीनाक्षी अम्मा ने उत्तर में कहा, "मेरा नहीं, मेरे पतिदेव का है। उन्हें यह संपत्ति उनके मामाजी ने दी है। मामाजी विलक्षण कर्मठता के स्वामी थे। वे परिवार के प्रति गहरी ममता वाले और स्वाभिमानी थे। इस पूरे प्रदेश में उन्हीं का राज था।"

मामा के विषय में मीनाक्षी अम्मा की प्रशंसा सुनते हुए वह वृद्ध बीच-बीच में 'ओ-हो!','अच्छा','सचमुच!' आदि बोलता रहा। फिर उसने अनेक नगरों, स्थानों की खबरें सुनाकर मीनाक्षी अम्मा को खुश कर लिया।

मीनाक्षी अम्मा अपनी वर्तमान दशा को भूलकर एक छोटी बच्ची बन गयी। गौंडन को पछतावा हुआ कि शत्रुपक्ष की शक्ति बढ़ाने के लिए उण्णित्तान को पत्र भेजकर उसने गलती की। अजितसिंह द्वारा सावित्री के साथ विवाह की स्वीकृति भी उसे खल रही थी। उसने दृढ़ निश्चय किया कि आगे से इस परिवार को वह अपनी काली करतूतों का निशाना नहीं बनायेगा। इस महान त्याग से उसने अपने पाप धो डालने की ठानी। पानी पिये बिना ही वह उठ खड़ा हुआ।

फिर अपने वस्त्रों के भीतर सुरक्षित रखी हीरे की अंगूठी निकालकर उसने मीनाक्षी अम्मा के आगे रख दी। वह अंगूठी वैसी ही थी जैसी उसने दीवानजी को बेची थी। मीनाक्षी अम्मा ने अंदाजा लगाया कि वह वृद्ध कषक्कूटम पर डेरा जमाये व्यापारी दल का सरदार है। उस सती-साध्वी ने कहा कि अपने पतिदेव की अनुमति के बिना वह इतनी बहुमूल्य वस्तु खरीद नहीं पायेगी। इस पर वृद्ध ने कहा, "तुम्हारे पति के आने के बाद इसकी जो भी कीमत वह कहेंगे मैं ले लूंगा।" और अंगूठी वहीं छोड़कर चला गया।

17

गुप्त निधि तो देखी मगर

शुक्ल पक्ष की नवमी की रात थी। चांद कषक्कूट्टम की पश्चिमी सीमा के नारियल के पेड़ों की आड़ में छिप रहा था। दक्षिण-पूर्व दिशा की छोटी पहाड़ी के वन में स्थापित गौंडन के डेरों से दीपकों की ज्योति फैल रही थी। जाहिर है कि व्यापार बड़ी सरगरमी से चल रहा था। डेरों के बाहर शूलधारी प्रहरी बड़ी सतर्कता से पहरा दे रहे थे। डेरे से निकलते हिंदुस्तानी गीतों के स्वर चारों ओर गूंज रहे थे। लगता था तिरुअनंतपुरम् नगर में चुप्पी न तोड़ने का जो नियम था वह कषक्कूट्टम् पर लागू नहीं था।

गौंडन अपने डेरे से सैर के लिए बाहर निकला। वह सिर्फ धोती-कुर्ता पहने हुए था। वह कमर में एक तमंचा खोंसे और हाथ में गुप्ती लिये नंगे सिर चला जा रहा था। डेरे के चतुर्दिक फैले वन को पार कर वह गांव में पहुंचा। चाहे शराब के नशे के कारण, चाहे स्वच्छ व स्वास्थ्यकारी हवा के कारण वह मस्त हाथी की तरह झूमता चल रहा था। यह वही स्थान था जहां 'आठ परिवार' के आदेश से अनेक लोगों की गरदनें तलवार की भेंट चढ़ी थीं। मगर गौंडन को जरा भी डर नहीं लगा। गुप्ती टेक कर उसके चलने की तेज ध्वनि सुनाई पड़ रही थी। वह उस वक्त अपनी कल्पना के सम्राट के बारे में सोचता जा रहा था। उसने मनौती की कि कषक्कूट्टत्तु पिल्लै परिवार की गुप्त निधि प्राप्त हो जाये तो चामुंडी देवी के लिए एक बड़े भंडारे और भजन-कीर्तन की वह व्यवस्था करेगा। गौंडन ने मन ही मन प्रार्थना की—"हे चामुंडी! जरा आंखें बंद कर ले। वह खजाना हाथ लग जाये तो पेरिंचक्कोडन के परंयर लोग भाड़ में जायें। जब मैं सुलतान के सामने गिन्नियों के ढेर लगाऊंगा तब उनकी खनखनाहट सुनकर सुलतान नाच उठेंगे। वह म्लेच्छ छोकरा भाड़ में जाये।" अपने नवाब बनने के बारे में सोच कर मन ही मन परम प्रसन्न होकर उसने जो दहाड़ मारी तो दिशाएं दहल उठीं।

चिलांपिनेत्तु भवन के दरवाजे पर अपनी छड़ी दीवार से टिकाकर गौंडन गोपुर के द्वार पर हाथ जोड़े ध्यानलीन खड़ा रहा। वह मन ही मन बोला—"अहा! वह औरत बिल्कुल सीधी-सादी है। केशवन भी बड़ा भोला है। गोमांस-भक्षी अप्पू खबरदार! तुमने मुझे कष्ट देकर इस युवती से वेश्या-वृत्ति करायी। साढ़े साती वाले इस मुटल्ले को तुमने इस मनहूस जगह जो फंसाया है सो उस अभागे की मौत का बायस बनेगा। इस तरफ

आते ही इसका तेज कुंद हो गया। खैर! देखा जायेगा। सब ठीक हो जायेगा। अगर ऐसा नहीं हुआ तो अपना नाम बदलकर एक नया जन्म लेंगे।"

इसके बाद गौंडन ने देवी मंदिर की चौखट को चूमते हुए दक्खिन की तरफ प्रयाण किया। चिलांपिनेत्तु भवन की दक्खिनी दिशा में एक सूना पड़ा आहाता देखा तो उसने मन ही मन कहा—"इसे भी जरा देख लूं। चामुंडी देवी के चबूतरे पर भी माथा टेक लेंगे, हमारा क्या जाता है।" गौंडन ने अहाते में प्रवेश किया।

इसी स्थान पर मंत्रशाला का भवन था। यहीं कुट्टीक्कोंनिश्शन नामक महामांत्रिक का पूजा-भवन स्थित था। केशवन और मीनाक्षी अम्मा यहीं पर एक-दूसरे से प्रेम-बद्ध हुए थे। त्रिपुरसुंदरी कुंजम्मा का देहांत भी यहीं हुआ था। कुप्पश्शार का दाह-संस्कार यहीं किया गया था। भवन तो अब खंडहर हो गया था। पास-पड़ोसवाले मकान की लकड़ियों के टुकड़े बटोरकर ले गये। पत्थरों की सीढ़ियां और रेतीला चबूतरा ही अब बचे थे।

चंद्रमा अस्त हो गया। अंधेरा गाढ़ा था। कुट्टीकोंतिश्शन की मूर्ति के सामने गौंडन ने नृत्य किया। नृत्य करते-करते उसका एक पैर जमीन में धंस गया। उसने पैर बाहर खींच लिया और कुछ सोचने लगा। एक पल बाद ही गौंडन खुशी से उछल पड़ा। गौंडन ने एक हाथ से रान पर ताल बजाते हुए दूसरे हाथ से गड्ढे में गुप्ती घुसा दी। पूरी गुप्ती नीचे उतार देने पर भी वह जमीन को नहीं छू पा रही थी। चारों तरफ टटोलकर गौंडन एक बड़ा-सा पत्थर ले आया। उसे गड्ढे में डालकर कान लगाये खड़ा रहा। कुछ क्षणों बाद पत्थर किसी चीज से टकराया। फिर एक पल बाद बड़ी गहराई में से किसी धातु से पत्थर के टकराने की आवाज आयी। हर्षातिरेक से गौंडन ने उस स्थान पर दंडवत् प्रणाम किया।

फिर वह जी खोलकर हंसते हुए नृत्य करने लगा। नृत्य के बीच उसने अपनी दाईं ओर एक व्यक्ति को देखा जो अपनी सवेरे की पोशाक में खड़ा था। गौंडन ने गुप्ती चलायी, मगर किसी ने गुप्ती छीन कर दूर फेंक दी। गौंडन ने तमंचा निकाला। तब तक किसी ने उसे अपनी बलिष्ठ बांहों में उठाकर दूर वन की तरफ फेंक दिया। दर्द की परवाह किये बिना वह फिर से उठा और गड्ढे के पास पहुंचा। इस वक्त वहां कोई दिखाई नहीं पड़ा। अपने विभ्रम और दुस्साहस की बात सोचकर गौंडन अपने को ही कोसता रहा। अपने जीवन की सफलता के सिद्ध होने की बात सोचकर वह एक पल को पगला उठा। वह अपने डेरे की तरफ लौटा। दिन उगने के पहले ही वह उठा और रात की ही पोशाक में मीनाक्षी अम्मा से मिलकर प्रार्थना की—"उधर जो खाली जगह है वहां पर मुझे डेरा डालने की अनुमति दी जाये।" मीनाक्षी अम्मा ने कहा—"उस जगह को एक बार और जाकर देख आइये। उसके बाद ही प्रार्थना करना उचित होगा।" गौंडन उस तरफ गया।

उसने देखा वहां महाराजा के आदेश से एक तालाब खोदा जा रहा था। आस-पास के लोग काम में लगे थे। काम की निगरानी कुंचैकुट्टि पिल्लै कर रहा था। गौंडन को देखते ही वह हिंदुस्तानी में स्वागत करने और कष्क्कूट्टम की कथा सुनाने उसकी तरफ गया। श्रीरामचंद्र का दिव्य बाण खाकर कुंभकर्ण की तरह गौंडन धराशयी हो गया। वह नाक और मुंह से खून उगलने लगा।

18
मंत्रशाला का दान

कोट्टारक्करा के नंतियम भवन में जिस दिन सावित्री का शुभ विवाह होना तय हुआ था, उसी दिन शाम ढलने पर त्रिविक्रमन चिलंपिनेत्तु भवन गया और मीनाक्षी अम्मा से विनोद की बातें करता रहा। उसने सावित्री के विवाह को रोकने के लिए किये गये प्रबंधों का जिक्र भी किया। मगर वह दीवानजी के पधारने की सूचना देने तथा उनका यथोचित स्वागत करने के लिए प्रार्थना करने गया था। मीनाक्षी अम्मा ने पहले तो विशेष कपड़े पहनने से इनकार किया, फिर कुछ सोच कर उसने दीवानजी के स्वागत के लिए अपने पद के योग्य वस्त्र धारण किये। उसने कुछ चुने हुए गहने भी पहन लिये। दीवानजी ने न घरेलू बातों की चर्चा की, न औपचारिकताओं पर ध्यान दिया। वे तो सिर्फ अन्नदाता का आदेश सुनाने आये थे।

दीवानजी ने कहा, "अन्नदाता ने एक बात कहने का आदेश दिया है।"

मीनाक्षी अम्मा ने दीवानजी की बात ध्यान से सुनने के बाद सिर्फ इतना कहा, "भोजन करके जाइयेगा।" दीवानजी मान गये। जब दीवानजी ने बताया कि महाराजा के आदेश से यहां एक तालाब खोदा जा रहा है, तब मीनाक्षी ने कहा, "महाराजा आदेश पूरा किया जाये।"

दीवानजी—"भूमि तो आप लोगों की है। यद्यपि चंद्रक्कारन ने इस संपत्ति पर गैर-कानूनी कब्जा करके उण्णित्तान के नाम लिखा है, तो भी सरकारी कागजात में स्वामित्व आपका ही दिखाया गया है।"

मीनाक्षी—"आज सरकारी काम के लिए इसकी आवश्यकता हो तो इसे आप जब्त कर सकते हैं।"

दीवानजी—"महाराजा का ऐसा आदेश नहीं है। आदेश हुआ है कि दस्तावेज के अभाव में भी मालकिन से कम से कम मौखिक प्रार्थना करके इसका दान लिया जाये और वहां सुरक्षित गुप्त निधि का सरकार की आवश्यकता के लिए उपयोग किया जाये।"

मीनाक्षी अम्मा ने जब निवेदन किया कि सावित्री के पिता की अनुमति लेकर उसके लिए भूमि दान करना उचित होगा तब दीवानजी ने कहा कि उसके लिए विलंब करेंगी तो वह निधि सरकार के काम नहीं आ सकेगी।

मीनाक्षी अम्मा—"रामवर्मत्तु परिवार का भवन व सपंत्ति भी ली जा सकती है। अन्नदाता युद्ध में विजयी हों और दीर्घायु होकर हमारी सुरक्षा करें। सावित्री के पिताजी अन्नदाता की जरूरत के विषय में कोई आपत्ति नहीं उठायेंगे। वहां जितना भी धन हो उसे ले जाने में बिल्कुल संकोच न करिए। यही नहीं उसे श्रीपद्मनाभन को चढ़ाकर हमारे पापों की शांति के लिए प्रार्थना करें।"

दीवानजी—"आपके कुलदेवता कौन हैं ?"

मीनाक्षी अम्मा—"चामुंडीदेवी। देवी का मंदिर दक्षिण-पूर्वी दिशा में थोड़ी ही दूर है। मगर सब कुछ बरबाद हो गया है।"

दीवानजी—"दक्खिन के अहातों में होम और दूसरी धार्मिक क्रियायें चल रही हैं। शोरगुल सुनकर डरना मत। कुंचैकुट्टि पिल्लै उसके पुरोहित हैं।"

मीनाक्षी अम्मा—"मुझे कोई परेशानी नहीं है। सभी को समान रूप से प्रयत्न करना है। उस मुंहलगी ने वहां जाकर शिकायत की थी, इसी से यह प्रबंध हुआ। सो मुझे मालूम है।"

मीनाक्षी अम्मा ने आंगन तक जाकर दीवानजी को विदा किया।

त्रिविक्रमन भी विदाई की आज्ञा मांगने हाथ जोड़े खड़ा था। मीनाक्षी अम्मा ने कहा, "विजयी होकर लौटो त्रिविक्रमन! तुम्हारे पिता और सेनापति मामा का दिखाया रास्ता तुम्हारा भी मार्गदर्शन करे। कुल पर कलंक न लगने देना। देवी चामुंडी तुम्हारी रक्षा करें।"

19
घर से विदाई

परप्पांडा की छावनी का विनाश देखकर पेरिंचक्कोडन का मन पस्त हो गया। पर वह झट संभल गया। हिम्मत करके क्रोध और दर्द से प्रतिज्ञा की—"वह खून के आंसू रोयेगा, देख लेना।" उसने बचे हुए सिपाहियों को बुलाकर उन्हें पेरिंचक्कोड मंदिर पर आने का आदेश दिया। दूसरे दिन उसने घर के लिए प्रस्थान किया। पर करमना नदी के उस पार उसके मार्ग में अवरोध दिखा । इस पर वह वापस नदी में कूद पड़ा। बाद में वह पेरिंचक्कोड भवन में ही दिखाई दिया। अचानक जब वह वहां पहुंचा तब लक्ष्मी अम्मा, देवकी और अष्कन पिल्लै बातें कर रहे थे। उसे देखकर डींग हांकता अष्कन पिल्लै वहां से चंपत हो गया।

लक्ष्मी अम्मा और देवकी से अषकन पिल्लै की मुलाकात दो साल पहले ही हुई थी। पेरिंचक्कोडन के निवास में अन्य किसी भी व्यक्ति का प्रवेश निषिद्ध था। पर साहसी अष्कन पिल्लै को वह घर देखने की इच्छा हुई। वहां गया तो उसने देवकी और लक्ष्मी अम्मा को देखा। देवकी का लावण्य देख उसने उसे अपने स्वामी कल्लरक्कल पिल्लै की धर्मपत्नी बनाना चाहा। वह कल्लरक्कल पिल्लै को वहां ले गया। कल्लरक्कल पिल्लै और देवकी ने एक-दूसरे को पंसद किया। फिर भी देवकी इस बात पर अडिग थी कि पिता की अनुमति लेकर ही वह ब्याह करेगी। पेरिंचक्कोड भवन को शीघ्र ही सरकारी कब्जे में ले लिया गया और सरकारी कार्य का दायित्व कल्लरक्कल पिल्लै को सौंपा गया। इस तरह लक्ष्मी अम्मा और देवकी कल्लरक्कल पिल्लै की देख-रेख में आ गयीं।

अष्कन पिल्लै ने आग्रह किया कि देवकी कल्लरक्कल परिवार में जा कर रहे। खुद कल्लरक्कल पिल्लै ने देवकी को पत्नी रूप में पाने के लिए दीवानजी की सहायता मांगी। दीवानजी ने युद्ध की समाप्ति तक प्रतीक्षा करने को कहा। अषकन पिल्लै ने लक्ष्मी अम्मा से शेखी बघारी थी कि पेरिंचक्कोड के पूजाघर में किसी को भी उत्पात न मचाने देने का आदेश वह महाराजा से ले आयेगा। उसने स्वयं महाराजा के कृपापात्र होने की पुरानी घटनाएं बढ़ा-चढ़ाकर सुनायीं। लक्ष्मी अम्मा सोच रही थी कि प्रभु की कृपा से उसे एक सशक्त संरक्षण मिला है तो ज्यादा खतरा मोल लेना अनैतिक है। बातचीत के दौरान

पेरिंचक्कोडन आ टपका।

पेरिंचक्कोडन ने बांह पकड़कर लक्ष्मी अम्मा को अपनी ओर खींचा। देवकी ने भी उसके दाहिने हाथ को अपनी गर्दन में लपेट लिया। नाटकीय प्रकृति के उस दीर्घकाय धूर्त के नयनों से आनंद की अश्रुधारा बहने लगी। उसने सोचा, उस पर जो नयी विपदाएं टूट पड़ी हैं वे उसकी मृत्यु का कारण हो सकती हैं। मगर वह पत्नी और बच्चों को निराश्रित नहीं छोड़ जाना चाहता था। अतएव उनके लिए जरूरी व्यवस्था करने ही पेरिंचक्कोडन घर आया था। उसने दीवानजी से दावा किया था कि उसने उन अनाथ स्त्रियों के सुखी जीवन बिताने के लिए जरूरी सारी सुविधाएं कर रखी हैं।

पेरिंचक्कोडन ने देवकी से कहा, "थका-मांदा आया हूं ,ज़रा मेरे लिए कुछ पानी गरम कर लाओ।" अब केवल पति व पत्नी रह गये।

पेरिंचक्कोडन ने पूछा, "पूजाघर और भवन नष्ट होने से क्या लक्ष्मी का दिल टूट गया?" चाभी लक्ष्मी के हाथ में थमा दी। एक पल बाद उसने फिर पूछा, "कल्लरक्कल पिल्लै कहां गया?"

लक्ष्मी अम्मा—"यहीं कहीं डर के मारे छिपा हुआ है।"

पेरिंचक्कोडन—"डरने की क्या बात है। उसका क्या कसूर? अगर वे शासन के बल पर लूटेंगे तो पेरिंचक्कोडन उनकी जड़ खोद डालेगा। जो बदला न ले सके वह मर्द कैसा? कल्लरक्कल पिल्लै ईमानदार है। फिर भी मेरे वापस आने के बाद ही कन्या देने का निर्णय करना। अगर मैं न लौट सकूं तो उसका विवाह कर देना।"

लक्ष्मी अम्मा—"ऐसी बातें मुंह से न निकालें। मरें आपके दुश्मन। आप कहीं मत जाइए। यहीं रहिए।"

पेरिंचक्कोडन उठकर खड़ा हो गया और बोला, "पूजाघर के द्वार के पास की जमीन खोदते समय जब दस हाथ की गहराई में पहुंच जायें तभी यह चाभी कल्लरक्कल पिल्लै के हाथ में देना। वहां तुम दोनों के आराम से पूरी जिंदगी बिताने भर को सपंत्ति सुरक्षित है।" यह कहते हुए उसने लक्ष्मी अम्मा को अपनी बांहों में भर लिया।

लक्ष्मी अम्मा कुछ कहना चाहती थी मगर कह नहीं पा रही थी। यह देखकर पेरिंचक्कोडन बोला, "डरो मत! हिम्मत करके दिल की बात बता दो।" वह बोली, "अब आप कहां जा रहे हैं? इतनी संपत्ति के होते हुए अब और भटकने की जरूरत क्या है? जो कुछ है उसी से चैन की जिंदगी गुजारेंगे। अब उम्र भी हो रही है। आप कहीं चले गये तो देवकी को बहुत दुख होगा।"

पेरिंचक्कोडन—"मर्दों के भी कुछ तौर-तरीके होते हैं। जो मर्द उनका पालन नहीं करता वह कैसा मर्द? मर्द कई किलों को ढहाने और उन पर अपना झंडा फहराने की बात सोचता है। उसके दिल की बात औरतों से सहन नहीं हो सकती। मर्द अगर अपने

दिल की आग औरतों पर जाहिर करे, तो घर तबाह हो जाये। मैं जाता हूं। जल्दी ही लौटूंगा। कुछ काम हैं जिन्हें मुझे पूरा करना है। इसके बाद जैसा कहोगी वैसा ही करूंगा।"

लक्ष्मी अम्मा ने पेरिंचक्कोडन से बारंबार अनुरोध किया कि वह न जाये। उसने यह भी कहा कि उनके जाने पर देवकी दुखी होगी। पेरिंचक्कोडन ने कहा, "डरने की कोई जरूरत नहीं है।" कल्लरक्कल पिल्लै तुम्हारी हर संभव मदद करेगा। फिर उसने कसम खिलाकर लक्ष्मी अम्मा से पूछा, "कौन- सी बात है जिसे पूछने में इतना झिझकती रही हो?"

लक्ष्मी अम्मा के मुंह से सिर्फ एक शब्द निकला— "गोमांस।"

पेरिंचक्कोडन—"क्या कहा?"

लक्ष्मी अम्मा कांप उठी। उसका चेहरा कागज की तरह सफेद हो गया। पेरिंचक्कोडन उस प्रश्न का मर्म और उसकी दूरव्यापी अर्थवत्ता समझ गया। "नहीं, नहीं" कहते हुए वह रसोईघर में गया। उसने देवकी को बांह पकड़कर खड़ा किया और पल भर स्नेह से देखता रहा। देवकी अनुरोध करती रही—"मत जाइए, पिताजी मत जाइए।" लेकिन पेरिंचक्कोडन उसकी अनसुनी करके पेड़ों की छाया में अदृश्य हो गया।

अषकन पिल्लै तिरुअनंतपुरम् गया और महाराजा की सेवा में हाजिर हुआ। उसने देवकी और कल्लरक्कल पिल्लै के विवाह की चर्चा की। महाराजा ने दीवानजी से सलाह करके जैसा उचित होगा, वैसा करने का आदेश दिया। अन्नदाता ने अषकन पिल्लै को एक माला उपहार में दी और उसे दीवानजी का प्रमुख अंगरक्षक नियुक्त किया।

केशव पिल्लै मंत्रशाला के दान के विषय में मीनाक्षी अम्मा की सहमति की बात महाराजा को बता कर लौटे ही थे कि अषकन पिल्लै वहां आ पहुंचा। महाराजा मीनाक्षी अम्मा के देश-प्रेम और उदारता पर बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने मन ही मन दृढ़ प्रतिज्ञा की कि इन बिछुड़े दंपत्तियों को परस्पर मिलाने का दायित्व वे स्वयं पूरा करेंगे।

20
धन्य धीरता

पेरिंचक्कोडन तिरुवितांकूर राज- परिवार को और उस परिवार की सुरक्षा एवं मार्गदर्शन करनेवाले दीवानजी को किसी न किसी तरह समाप्त कर देने का दृढ़ व्रत लेकर घर से विदा हुआ था। उसकी फौज की दो टुकड़ियां पूर्णतः नष्ट कर दी गयी थीं। फिर भी उसने पांच सौ भीलों का एक सैनिक दल जुटा लिया। इन भीलों को वन में कहीं भी चढ़ने, उतरने और घूमने में महारत हासिल थी। पेरिंचक्कोडन ने उन्हें उत्तरी दिशा में नियुक्त किया। उनके हाथों में शंख के चिन्ह से अंकित झंडे थे। शंख तिरुवितांकूर के राजाओं का राजचिह्न था। अतः वनवासी इसे राजा की सेना समझकर रास्ते में खुद-ब-खुद शामिल होते गये।

दूसरे दिन गोधूलि की वेला में पेरिंचक्कोडन ने उत्तर दिशा की ओर प्रस्थान किया। उसने अपने केशों को लाल जटाओं में छिपा लिया। नकली बालों से मूंछों की लंबाई बढ़ा दी। गाल में एक शूल चुमा लिया और उस शूल से चांदी की छोटी जंजीर लटका दी। टखनों को छूता गेरुआ चोगा पहन लिया। रुद्राक्ष की मालाओं से छाती और मृगछाला से पीठ ढक ली। वह खडाऊं पहनकर चलता था। उससे थोड़े फासले पर चार-पांच योद्धा सेवक उसका अनुगमन कर रहे थे। सुना था कि दीवानजी पूर्णिमा के दिन एक छोटी-सी फौज लेकर उत्तरी दिशा में प्रस्थान करनेवाले हैं। इसलिए पेरिंचक्कोडन भी उत्तरी दिशा में बढ़ा। इस यात्रा के दौरान उसने दो खबरें सुनीं। पहली यह कि कष्क्कूट्टम परिवार की गुप्त निधि राजकोष में जमा कर दी गयी है। यह जानने पर पेरिंचक्कोडन को गौंडन से फिर एक बार मिलने की इच्छा हुई। दूसरी खबर यह थी कि तीन-तीन मुख्य गुप्तचरों के सामूहिक निर्णय के विरुद्ध अजितसिंह सावित्री से ब्याह करने से मुकर गया। पेरिंचक्कोडन को संदेह हुआ कि अजितसिंह ने गौंडन की सहमति से ऐसा किया है। उसे लगा कि इसमें गौंडन की भी साजिश है। उसको भरोसा था कि गौंडन की मदद से और अपने रिश्ते के बल पर वह सावित्री का ब्याह करा देगा। इसलिए पेरिंचक्कोडन गौंडन के पीछे लग गया।

गौंडन का सिद्धांत था कि चाहे लाभ हो या हानि, पुरषार्थ की गरिमा अक्षुण्ण रखनी चाहिए। अतएव वह इस बात से जरा भी विचलित नहीं हुआ कि कष्क्कूट्टम की पारिवारिक

गुप्त निधि पता लगने के फौरन बाद हाथ से निकल गयी। मंत्रशाला के अहाते से अपनी छावनी में लौटे गौंडन के चेहरे पर घबराहट या थकान बिल्कुल नहीं थी। जब गुप्त निधि से टीपू सुलतान को खुश करने की योजना समाप्त हो गयी तब गौंडन ने मन ही मन कसम खायी कि दीवानजी का वध करके वह सुलतान का प्रीति भाजन बनेगा। अपनी उद्देश्य-सिद्धि के लिए उपयुक्त स्थान की तलाश में वह निकल पड़ा।

वर्तमान तिरुअनंतपुरम्-कोल्लम्, सड़क दीवान केशव पिल्लै के द्वारा सिपाहियों के लिए बनाये गये पथ का वर्तमान रूप है। इस पथ पर पल्लिप्पुरम् से आटिंगल तक का खंड एक नदी व खेतों के अलावा पूरे का पूरा जंगल था। यहां एक नाला था, जिसमें बारहों महीने पानी रहता था। उत्तरी दिशा की यात्रा करते समय दाईं तरफ जो खुला भूखंड था वह जंगली ईंख के पौधों से ढका हुआ था। इस ईंख-वन की दोनों ओर घने पेड़ों से घिरे दो खंड हैं। इनमें एक घाटी है, दूसरा हरा-भरा मैदान। ये दोनों भूखंड यात्रियों की नजर से ओझल रहते थे। वहां बड़ी संख्या में हिंसक जीव भी थे। गौंडन इसी स्थान की ओर चला था।

गौंडन ने इस गुहा-सदृश स्थान पर पहरेदार नियुक्त कर रखे थे। उसकी योजना थी कि वहीं पर दीवानजी का वध किया जायेगा। जिस दिन ये तैयारियां हुईं उसी दिन रात ढलते-ढलते वैरागी के वेश में पेरिंचक्कोडन वहां आ पहुंचा। पेरिंचक्कोडन ने जब अपना नकली वेश उतार दिया तब गौंडन ने जोर से हंसते हुए पूछा, "पेरिंचक्कोडनजी, साथ में फौज भी लाये हैं क्या?" पेरिंचक्कोडन ने रुखाई से जवाब दिया, "कैसी फौज, सेठजी? उस दिन आप पांडा छावनी की हालत देखने के बाद ही लौटे न ? उस धूर्त दीवान ने पूरे दल को हड़प लिया। फिर भी पेरिंचक्कोडन के पास इसका प्रतिकार है। डरिये मत। सेठजी, आप ही बताइए, वह मूर्ख राजा उण्णित्तानजी की कन्या को मंगलसूत्र धारण कराये बिना ब्याह रुकवाकर किस रसातल को चला गया। शुरू में ही सेठजी ने मना किया था। आखिरकार नतीजा वही निकला।"

गौंडन ने पूछा, "किसने कंहा कि अजितसिंह कन्या से विवाह किये बिना भाग गया?"

पेरिंचक्कोडन—"जो सौदागर देहातों व जंगलों में भटकता हुआ पैसा-पैसा जपता रहता है उसे कैसे पता कि क्या नयी घटनाएं घट रही हैं? पूरे राज्य में ढिंढोरा पिट चुका, पर उस गड्ढे में बैठे आदमी के कानों तक खबर कैसे पहुंचे?"

विवाह टूट जाने की खबर सुनकर गौंडन मन ही मन खुश हुआ। पेरिंचक्कोडन को लगा कि चिलपिनवियम परिवार के मामले में लापरवाही और टीपू से अपना रिश्ता, जाहिर करनेवाला गौंडन बड़ा खुदगर्ज है। इसलिए उसने पूछा, " इस जगह डेरा डालने का मतलब क्या है?"

गौंडन ने पेरिंचक्कोडन के कानों में आहिस्ता से कहा, "पूर्णमासी के दिन सांझ तक दीवानजी इस रास्ते से पधारेंगे। हमारे पास फ्रेंच कंपनी द्वारा निर्मित बढ़िया बंदूकें हैं। हमारे पास अचूक निशानेबाज भी हैं। कंठीरव का यह अरमान तोड़ देना है कि दीवानजी का वध करके वह टीपू का प्रीति भाजन बनेगा। इस काम के लिए इससे बेहतर कोई जगह इस पथ पर नहीं है।"

पेरिंचक्कोडन जोर से हंस पड़ा—"वाह सेठजी, आप कैसी पागलपन की बातें कर रहे हैं ? क्या सेठजी समझते हैं कि दीवानजी अकेले लाठी टेकते, कांपते आयेंगे और सेठजी के मुंह में खुद गिर पड़ेंगे ? पेरिंचक्कोडन परिवार के इस छोकरे की बातें गौर से सुनिए। उनके साथ कम से कम दो सौ सिपाही होंगे। साथ में कंठीरव की हड्डी-पसली चूर-चूर करने वाला वह नौजवान त्रिविक्रमन भी होगा। वह सौ चालें जानता है। देखिए ! काम यों निकालना है कि अल्लाह ने छुरा दिया, मौलवी ने छुरा चलाने को कहा और मैंने चलाया। आइए।"

गौंडन ने पूछा, "कहां ?

पेरिंचक्कोडन ने कोई उत्तर नहीं दिया। कुछ सोचते हुए गौंडन थोड़ी देर चुप बैठा रहा। गौंडन को लगा कि पेरिंचक्कोडन का सुझाव आसान है। टीपू की कृपा मिलेगी। चिलांपिनेत्तु की गृहकलह भी समाप्त हो जायेगी। उसी रात को दोनों ने एक साथ चार पांच मील चलने का निश्चय किया। पेरिंचक्कोडन ने अपनी नकली वेश-भूषा एक झोले में रख ली। साधारण कपड़ों में वह गौंडन के पीछे-पीछे चल पड़ा। दोनों चिलांपिनेत्तु भवन पहुंचे।

द्वार पर जोर की दस्तकें और "दरवाजा खोलिए !" की पुकार सुनकर लक्ष्मी अम्मा भयभीत हो गयी कि कहीं उसके पति या पुत्री पर कोई नयी आफत तो नहीं आन पड़ी। वह शीघ्रता से आयी और द्वार खोलकर गंभीर स्वर में पूछा, "कौन है ?"

"मैं हूं अम्मा, गौंडन। घबराइए मत।" उत्तर देनेवाले की आवाज पहचान कर मीनाक्षी अम्मा कांप उठी। वृद्ध ने आवाज़ को थोड़ा बदलते हुए कहा, "एक बात कहकर चले जायेंगे।" मीनाक्षी अम्मा को याद आया कि उस वृद्ध को पहले-पहल देखने पर उसके मन में सम्मान का भाव ही जागा था। उसने दरवाजा खोल दिया। दोनों भीतर आये तो मीनाक्षी अम्मा ने उन्हें बैठने को कहा। गौंडन ने पेरिंचक्कोडन से कुछ परे हटकर खड़े रहने को कहा तो वह हट गया। मीनाक्षी अम्मा ने कहा, "आपने मुझे जो हीरे की अंगूठी दी थी उसे वापस ले लीजिए।" इस पर गौंडन ने जवाब दिया, "क्या गौंडन इतना नीच है कि भेंट दी हुई चीज वापिस ले लेगा ?"

फिर अपने आगमन का कारण समझाया। वह बड़े-बड़े महाराजाओं का बंधु है। अनेक परिवारों की विपदाएं और दुख दूर करके उनकी हंसी-खुशी लौटायी है उसने।

इस भवन में पति-पत्नी के बीच तनाव है। अगर यहां पर दीवानजी से घड़ी भर बात-चीत करने का मौका मिले तो गौंडन मीनाक्षी अम्मा के सारे दुख दूर करा देगा।"

मीनाक्षी अम्मा ने पूछा कि इसमें वह क्या कर सकती है। गौंडन ने उत्तर दिया, "एक पत्र लिख कर आप दीवानजी को उत्तरी दिशा की यात्रा के दौरान चिलंपिनेत्तु परिवार में आधी घड़ी रुकने के लिए निमंत्रित कीजिए।"

मीनाक्षी अम्मा ने कोई उत्तर नहीं दिया, क्योंकि यह स्वधर्म के विरुद्ध था। उसके घरेलू मामलों से कोई नाता न रखनेवाला एक अनजान आदमी रात के वक्त ऐसी प्रार्थना कर रहा था, इससे उसे संदेह हुआ। जब वह चुप ही रही तब उत्तर जानने के लिए गौंडन ने खखार कर उसे चेताया; किंतु मीनाक्षी अम्मा एक चुप हजार चुप। गौंडन के उसकी चुप्पी को कुलीन गरिमा मानकर मन ही मन उसे सराहा। उसने कई तरह की मीठी बातें कीं, तर्क पेश किये, फिर भी मीनाक्षी अम्मा के मुंह से कोई जवाब न निकला तो गौंडन चुप लगा गया।

इस पर पेरिंचक्कोडन आगे बढ़ा और बोला, "देखोजी, तुम हम मर्दों को इतना घमंड दिखाती हो तो अपने मर्द को वश में क्यों नहीं रख सकीं? उस दीवान की पूजा करती रहती हो, तभी तो तुम्हारा मर्द तुम्हें छोड़ गया ? सेठ की बातें अगर नहीं मनोगी तो याद रखो हमें भी कुछ मंत्र-तंत्र आता है।"

मीनाक्षी अम्मा ने पेरिंचक्कोडन की ओर देखा, पर गंभीर मौन ही धारण किये रही। पेरिंचक्कोडन की फटकार जारी थी—"देखो री, तुम्हारे नाज-नखरे इस पेरिंचक्कोडन पर नहीं चलेंगे। पेरिंचक्कोडन ने ऐसी कितनी उर्वशियां देखी हैं। तुम अपने भोंदू मर्द को कटपुतली की तरह नचा सकती हो, मझे नहीं। चलो लिखो एक पर्ची। उस कुलांगार को यहां बुलवाओ, वर्ना तुम्हारी और तुम्हारी बेटी की क्या दशा होगी यह मुझसे पूछो।"

मीनाक्षी अम्मा ने पेरिंचक्कोडन पर से अपनी दृष्टि हटा ली। फिर उसने गौंडन से तमिल में कहा, "देख रहे हैं न, यह मेरी कितनी बेइज्जती कर रहा है!"

गौंडन तेजी से उठा और पेरिंचक्कोडन के अशिष्ट व्यवहार पर उसे डांट लगायी।

पेरिंचक्कोडन अब खुलकर सामने आ गया। उसने कहा, "मैं कुछ ऐसे तथ्य खोल सकता हूं कि उनके सामने आने पर कुछ लोग फांसी के तख्ते पर झुला दिये जायेंगे।" इस पर गौंडन ने फौरन पिस्तौल निकाल लिया। पिस्तौल और आंगन में बढ़ आये गौंडन के अनुयायियों को देखकर पेरिंचक्कोडन बाहर की ओर भागा। उसने मन ही मन कुछ नये निश्चय किये। "ठीक है, बाद में देखा जायेगा" कहते हुए वह तेजी से भाग गया। वह गौंडन के अड्डे के पास ही ठहरे आने साथियों में शामिल हो गया।

गौंडन ने नींद खराब करने के लिए मीनाक्षी अम्मा से क्षमा मांगी। उसने उसके दृढ़ साहस की प्रशंसा की और आशीष दिये कि अपने पति के साथ चिरकाल दांपत्य-सुख

भोगे। भावावेश में उसने मीनाक्षी अम्मा के हाथ अपने हाथों में लेकर आंसू बरसाये। फिर बहुत लंबी सांस भरी और अवर्णनीय उत्कंठा से चारों तरफ यों देखता रहा मानों हर चीज को आंखों से निगल लेगा। कुछ क्षण यों ही चुप खड़े रहने के बाद "अम्मा! विदा!" कहते हुए गौंडन भी उसी दिशा में चला गया जिधर पेरिंचक्कोडन गया था।

21
सावित्री लापता

जिस रात सावित्री का विवाह रुका उसके दूसरे दिन कोटंता आशान नंतियम भवन वापस आ गया। प्रमुख नागरिकों ने अपने व्यवहार के लिए क्षमा मांगी तो कोटंता ने जवाब में कहा, "प्रभु सबको किये का फल देंगे।"

सावित्री के कमरे के सामने पहुंचा तो वहां कुंजि को देखा। कुंजि ने कहा, "आशानजी अपनी पीठ जरा दिखाइए। दोनों घुटने सही सलामत तो हैं न?" क्रोधित होकर आशान ने कुंजि को ही अपने सर्वनाश का करणा बताया।

कुंजि ने जब आशान द्वारा दिये पत्र का जिक्र किया तब आशान ने उसे वापस मांगा। कुंजि का उत्तर था कि वह उसे पढ़ते-पढ़ते सचमुच चाट गयी।

सावित्री ने जब कहा कि आशान का व्यवहार सीमा लांघ गया था, तो उसने सफाई दी कि वह एक संस्कृत श्लोक का मलयालम रूपांतर करके उसे देख रहा था, उसी समय कुंजि ने उसके हाथ से कागज छीन लिया।

आशान गुस्से से होंठ चबाते अपने घर लौटा। उसने सोचा, क्यों न सावित्री का अपहरण कर लूं। इसका उपाय वह सोच ही रहा था कि एक छैला वहां आ पहुंचा। उन दोनों की बातचीत सावित्री के अपहरण की योजना को आगे बढ़ाने के अनुकूल थी। कोटंता ने तब उस छैले के कानों में कुछ कहा। वह रहस्य शीघ्र ही गांव भर में फैल गया।

इसके बाद जो भी आशान से मिलता था, सीताहरण के बारे में व्यंग्य भरे प्रश्न करता था।

दूसरे दिन नंतियम परिवार के लोगों ने सुना कि दीवानजी युद्धस्थल के लिए प्रस्थान करनेवाले हैं। सावित्री चिंतित हो गयी। उसे याद आया कि उसने प्रियतम के साथ जाने का वादा किया है। वह अपने पारिवारिक संबंधों को भूल गयी। भय और दुख उसके मन को कष्ट नहीं दे पा रहे थे। न ही उसकी बुद्धि उसकी भावनाओं पर हावी हो पा रही थी। उसे चिंता थी तो बस अपनी प्रतिज्ञा के टूटने की। वह एक कोने में जमीन पर लेटी रही। कुंजि ने उसे इसके लिए डांटा। फिर कहा कि अगर त्रिविक्रमन से मिलने की उसकी इच्छा हो तो किसी को साथ लेकर वह राजपथ तक हो आ सकती है।

सावित्री ने सोचा—मेरी प्रतिज्ञा सड़क पर मिलने की नहीं थी। वह तो सशरीर या

मरकर युद्धक्षेत्र में पहुंच जाने की थी। इसलिए उसने बात बढ़ाये बिना कुंजि को वहां से भगा दिया। सावित्री का खाना-पीना केवल नाम को रह गया था। अपने कमरे में सोई कुंजि को जगाकर पश्चिमी दरवाजा बंद करने को कहने के बदले वह जमीन पर लेट गयी और सपने में युद्ध-भूमि का कोलाहल सुनती वह सो गयी।

सूर्योदय होने पर कुंजि ने उठकर देखा तो सावित्री कमरे में नहीं थी। वह रोती-पीटती शोर मचाने लगी—"मेरी कुंजम्मा को अभी ला दो, नहीं तो मैं तालाब में डूबकर अपनी जान दे दूंगी।" सारे लोग भौंचक्का रह गये।

स्त्रियों ने घर की चहार दीवारी का कोना-कोना छान मारा। उनके पतियों एवं संतानों ने अहातों को छान मारा। नंतियंत्तु परिवार के मुखिया और प्रमुख नागरिक कृष्ण कुरुप आ गये। कृष्ण कुरुप ने अलग-अलग दिशाओं में सावित्री को खोजने के लिए आदमी दौड़ाये। तहसीलदार को एक कर्मचारी के जरिये रपट भेजी।

लोग कोटंता को खोजते हुए उसके घर पहुंचे। आहट पाते ही आशान घर का बाड़ा एक छलांग में पारकर वन के भीतर गायब हो गया। कोटंता के घरवाले और जानवर चीख-पुकार करने लगे। पूरे गांव में रोने-चिल्लाने की आवाजें गूंज उठीं और कोहराम मचा। नायर परिवारों का शोर-शराबा सुनकर पुलयर, कुरवर जैसे लोग भी ऊंची आवाज में स्यापा करने लगे। उन्होंने सोचा कि शायद नायर परिवारों में से किसी प्रमुख व्यक्ति का स्वर्गवास हो गया है।

दिन चढ़े सावित्री की खोज में गये लोग धीरे-धीरे लौट आये। उसके बाद कृष्ण कुरुप के नेतृत्व में विचार-परामर्श प्रारभ हुआ। हर आदमी को आभास हो गया कि मामला बहुत संगीन है। लापता कन्या कोई मामूली लड़की न थी। सेनानायक की गोद ली हुई भांजी कषक्कूट्टम परिवार की अकेली संतान कुंजमा और पूरे इलाके के आदरणीय केशवन उण्णित्तान की एकमात्र प्यारी संतान थी। सबसे पहले कुंजि से कैफियत मांगी गयी। वह कोहराम मचाने लगी। कृष्ण कुरुप ने उससे सच उगलवाने का हुक्म दिया। गला फाड़ कर रोती हुई कुंजि ने सूचित किया—"कुंजम्मा-दीवानजी की यात्रा के पथ पर चेंपकश्शेरी परिवार में या मांकोयिक्कल परिवार में मिलेगी।"

इसके बाद कृष्ण कुरुप ने उससे और भी बातें जानने की चेष्टा की।

कुरुपा ने पूछा—"कहां गयी? गयी कैसे?" कुंजि ने उलटे सवाल किया, "अभी जो कहा वह सुना नहीं क्या?" कुरुप कुंजि पर टूट पड़ा। कुंजि आंगन में खड़े लोगों के बीच छिपने की कोशिश करती रही। यह सिलसिला थोड़ी देर चला तो कोटंता आशान के एक रिश्तेदार ने कहा, "मालिक! इस औरत को व्यर्थ ही क्यों दंड दें रहे हैं? उस कन्या को कोटंता आशान ही भगा ले गया है।"

कृष्ण कुरुप ने कहा, "बकवास बंद करो।" एक युवक ने सुझाया, "कोटंता आशान

को ही रहस्य का पता होगा।" एक छैले ने बताया, "आशान दो-तीन दिनों से एक रावण संन्यासी की वेश-भूषा जुटा रहा था। उसने दावा किया था कि उस कन्या को नांतियत्तु के छोटे मालिक को बिना दिये हरण करके ले जायेगा। देवी भगवती की कसम।"

कृष्ण कुरुप ने आशान को पकड़ लाने का हुक्म दिया। इसी बीच कोटंता की बहनें छाती पीटती वहां आ गयीं और बोली, "वह प्राणों के भय से कहीं छिपा बैठा है।"

सभी उपस्थित लोग दुखी हो उठे कि इलाके के परिवारों की बेइज्जती हो गयी। कृष्ण कुरुप ने सबको समझाया-बुझाया। उन्होंने सैनिक छावनी, चिलांपिनेत्तु भवन, चेंपकश्शेरी भवन और मांकोयिक्कल परिवार को इस घटना की अलग-अलग रपट खुद तैयार करके भेजी। दोपहर को वे अपने अनुचरों के साथ स्थानीय कार्यक्कार से मिलने गये। लापता लड़की के विषय में कानूनी कार्रवाई भी शुरू हो गयी। सावित्री दीवानजी की विशेष प्रियपात्र थी इस नाते भी विशेष जांच-पड़ताल का काम शुरू किया गया।

22

युद्ध-यात्रा की शुभकामनाएं

टीपू की फौज बड़ी संहारक शक्ति रखती थी। फिर भी तिरुवितांकूर की सेना ने उसका मुकाबला करने की ठान ली। तिरुवितांकूर की कर्नाटक सेना की छः कंपनियों में कुल छः हजार आठ सौ चालीस सिपाही थे। इन्हें उत्तरी क्षेत्र के पश्चिमी खंड और वहां समुद्र तट पर निर्मित किलों की सुरक्षा के लिए नियुक्त किया गया था। इसके अलावा जो चौदह हजार चार सौ सिपाही थे उनमें से चार हजार चार सौ लोगों को राजमहल की सुरक्षा का कार्य सौंपा गया था। बाकी बचे दस हजार सैनिकों और उत्तरी भागों के राजा एवं धनी, भूस्वामियों आदि के अंगरक्षकों को मिलाकर एक सेना बन गयी। उन्हें नामी सेना-नायकों और भूस्वामियों के निर्देशन में नेटुंक्कोट्टा और उससे जुड़ी खंदकों की सुरक्षा का कार्य दिया गया। प्रत्येक तालुका कार्यालय में ऐसे लोगों की भरती की गयी थी जो लड़ाई में मरनेवाले व घायल होने वाले सिपाहियों की जगह ले लें। उन्हें खास अखाड़ों में अभ्यास कराया जाता था। पूरे राज्य से फौजों के लिए जरूरी रसद तथा दूसरी चीजें आ रही थीं।

योजना थी कि दीवानजी दूसरे दिन सवेरे युद्ध के मोर्चे के लिए प्रस्थान करेंगे। रास्ते भर के नागरिकों ने सम्मेलन करके निर्णय लिया था कि उनका स्वागत करेंगे और आठ-दस मील तक अनुगमन भी।

युद्ध-यात्रा के अग्रिम दल मंत्रि मंदिर के बाहर जमा हैं। दीवानजी और उनके अंगरक्षक सेना के खाने-पीने की सामग्री को कोटुंउल्लूर पहुंचाने के लिए तिरुअनंतपुरम् के बंदरगाह पर लंगर डाले पोक्कूमूसा मरक्कार के बेड़े में चढ़ाने का प्रबंध कर चुके थे। गांवों के धनी भूस्वामी राजधानी पहुंचकर अपने कारिंदों के घरों में रुके हुए थे। इन सब की व्यवस्था का दायित्व कुंचैकुट्टि पिल्लै पर था। दीवानजी की अंगरक्षक सैनिक टुकड़ी का एक सदस्य अषकन पिल्लै तलवार और भाले का प्रयोग सीख चुका था। वह बंदरों की तरह चंचल था, इसी कारण उसे बंदूक चलाना नहीं सिखाया गया।

अधिकारियों ने दीवानजी के लिए एक दिन का विश्राम आवश्यक समझा। महाराजा ने भी रात्रि-भोजन के बाद की मुलाकात के पश्चात दीवानजी को फिर से कष्ट देना नहीं चाहा।

रात्रि-भोजन के बाद दीवानजी स्वागत-कक्ष में विश्राम कर रहे थे। तभी भिखारी साधु के वेश में कुंचैकुट्टि पिल्लै वहां आ पहुंचा। दीवानजी ने पूछा, "किसी दावत का न्योता देने आये हो क्या?" कुंचैक्कुट्टि पिल्लै ने निवेदन किया, "जी हां, दीवानजी के अलावा कुमारन तंपी, त्रिविक्रमन और अषकन पिल्लै—यही चार व्यक्ति उस दावत में निमंत्रित हैं।" उसने यह भी बताया कि अषकन पिल्लै की प्रथम परीक्षा आज होगी। दीवानजी ने कहा, "तब तो कुल तीन ही हुए।" इस पर कुचैकुक्कट्टि पिल्लै ने कहा, "चौथा मैं रहूंगा।"

कार्यक्कार अपने अतिथियों को शस्त्रों से सज्जित कर आगे ले चला।

टीपू ने समझ लिया था कि उसके घोड़े और तोपगाड़ियां दक्षिण भारत के अन्य भागों की तरह तिरुवितांकूर के उत्तरी भाग में आसानी से आगे नहीं बढ़ सकेंगी। उसे लगा कि पांड्य राज्य के रास्ते तिरुवितांकूर की दक्खिनी सरहद पर पहुंचकर उधर से ही हमला करना ज्यादा आसान होगा। परंतु पांड्य नरेश ने रास्ता देने से इनकार कर दिया। इसलिए टीपू ने कोचिन रियासत से होकर तिरुवितांकूर पर धावा बोलने का निश्चय किया। यह काम भी सरल न था। रास्ते में कई नदियां और झीलें पड़ती थीं। टीपू को उम्मीद थी कि महाराजा और दीवानजी को खत्म कर देने के बाद तिरुवितांकूर को जीतना बाएं हाथ का खेल होगा। इसी कारण टीपू ने सैनिक अभियान की गति कुछ धीमी कर दी।

कुंचैक्कुट्टि पिल्लै तीनों अतिथियों को अपने निवास स्थान पर ले आया। उस घर का दक्खिनी दरवाजा खोलकर उसने साथियों से कहा, "देखो दक्खिन में जो ब्राह्मण निवास दीखता है उसमें एक ब्राह्मणी पेठा तैयार कर रही है। कंठीरव वहां एक ढिबरी के सामने बैठकर रस्सी बट रहा है। सिर के बालों का रंग-रूप बदल गया है, मूंछें भी गायब हैं, नाक के नीचे मूंछ अभी नहीं था। फिर भी पता लग रहा था कि वह कंठीरव ही है। कुंचैक्कुट्टि पिल्लै ने उसे कुछ देर पहले सन खरीदते देखा था।

कुंचैक्कुट्टि पिल्लै कमर में तलवार बांधे उत्तरी भाग के बगीचे में कूद पड़ा। दूसरे लोग उसके पीछे-पीछे गये। कुंचैक्कुट्टि पिल्लै महाराजा के कक्ष के पूर्वी भाग में स्थित पीपल के चबूतरे पर पहुंचा। कुमारन तंपी को द्वार पर खड़ा कर दिया और अषकन पिल्लै को सीढ़ियों के नीचे। फिर उसने पहरेदारों को इशारे से लापरवाही का अभिनय करने का आदेश दिया। कुंचैक्कुट्टि पिल्लै बड़ी आसानी से पीपल पर चढ़ गया और चकोर पक्षी की बोली बोलता हुआ चुपचाप बैठा रहा। आधी रात होने को थी। चांदनी फैली हुई थी। कंठीरव अपने कमरे से रस्सी और बंदूक लिये बाहर निकला। वह तेजी से दीवारें फांदकर पीपल के नीचे पहुंचा। यह देखकर वह खुश हुआ कि महल के पहरेदार सो रहे हैं। कमर कसकर कंधे पर रस्सी रखे, बंदूक को सावधानी से कमर के साथ बांधकर

कंठीरव पीपल के पेड़ पर चढ़ गया। वृक्ष की एक मोटी डाल राजमहल की दूसरी मंजिल की एक खिड़की से सिर्फ गज भर की दूरी पर थी। कंठीरव उस डाली के सहारे उत्तरी दिशा में बढ़ा। रस्सी डाली में कसकर बांध दी। रस्सी के सहारे दो-तीन गज नीचे लटककर वह झूला सा झूलने लगा। उसका हाथ खुली खिड़की को छूने लगा था। वह कसरती आदमी था। एक हाथ खिड़की की ओर बढ़ाये वह और जोर से झूलने लगा। खिड़की की चौखट पकड़ पाने की खुशी में वह अपने शरीर से बंधी रस्सी ढीली करने लगा। एकाएक वह संतुलन खो बैठा और रस्सी पकड़े झूलने लगा।

तभी कंठीरव ने एक भुतही आवाज सुनी—"रस्सी से नीचे कूदो।" कंठीरव ने ऐसा ही किया। तभी उसने त्रिविक्रमन को दक्खिन-पश्चिम दिशा से अपनी ओर बढ़ते देखा। दूसरे ही पल उसने अषकन पिल्लै और कुमारन तंपी को अपनी ओर बढ़ते देखा। कंठीरव ने तलवार खींच ली। अषकन पिल्लै त्रिविक्रमन और कुमारन तंपी पीछे खिसक गये। उनकी कायरता देखकर कंठीरव ने उनका उपहास करते हुए अट्टहास किया। नीचे की आहट सुनकर महाराजा खिड़की पर आये। वे चुपचाप सारा दृश्य देखते रहे। कुंचैक्कुट्टि पिल्लै के इशारे पर पहरेदार भी चुप रहे। कंठीरव पहले कुमारन तंपी की ओर झपटा। तब तक गेरुए कपड़े और कछोटा मारकर धोती पहने कुंचैक्कुट्टि पिल्लै बीच में कूद पड़ा। थोड़ी देर उसके साथ कंठीरव की जोरदार तलवारबाजी चली। आखिरकार कंठीरव मर कर एक छोटे-से लोहे के खंभे की तरह धराशयी हो गया। चारों ने मिलकर उसकी लाश हटा दी।

राजमहल के संतरियों ने खून के दाग धोकर उस जगह को साफ-सुथरा कर दिया। महाराजा दुखी होकर पलंग पर पसर गये। उन्होंने सोचा, "यह तो ब्रह्महत्या हो गयी। बहुत बुरा हुआ।"

महाराजा को लगा कि मंत्र-सिद्धि और इस्लामी देशों की यात्रा से कुंचैक्कुट्टि पिल्लै का हृदय पत्थर हो गया है। क्यों न उसे सेवानिवृत्त कर दिया जाये। दीवानजी के यात्रारंभ के पूर्व स्वस्ति-वाचन कराने का कर्म निश्चित करके उन्होंने कुलपुरोहित को बुलवा भेजा। इसी बीच एक सेवक कंठीरव के वस्त्रों में छिपा एक पत्र लेकर हाजिर हुआ। वह टीपू सुलतान द्वारा हिंदुस्तानी में लिखा एक आदेश था। कुंचैक्कुट्टि पिल्लै के बारे में महाराजा की गतलफहमी दूर हो गयी।

आधी घड़ी के भीतर कंठीरव की लाश दीवानजी के सामने पेश की गयी। उसके पास से मिले पत्र को देखकर दीवानजी ने कहा, "कैसे आश्चर्य की बात है, कुंचैक्कुट्टि पिल्लै जी ?"

कुंचैक्कुट्टि पिल्लै—"कैसा आश्चर्य, प्रभु ! यही वंचि राजधर्म और यवन राजधर्म का अंतर है। अपना राज्य बढ़ाने और पूरे भारत पर शासन करने की इच्छा रखनेवाले

टीपू से सीखें कि हरिभजन करते रहने से चिड़िया हाथ से निकल जाती है। टीपू को शेरे-मैसूर का खिताब यों ही तो नहीं मिला है! यह कंठीरव श्रीरंगपट्टण का मशहूर पहलवान है। अगर मैं इसे देख लेता तो कभी इसका स्वागत-सत्कार करने न देता। यह कोई विधर्मी है। इसलिए ब्रह्महत्या की चिंता से आप अपना मन मलिन न करें। यह उत्तम शगुन है। यह मैसूर जा रहा था। मगर टीपू के इसी आदेश ने इसे हमारा शिकार बनने को भेज दिया।

कुंचैक्कुट्टि पिल्लै ने लाश में घुसी तलवार बाहर खींच ली। उसमें लगे खून को पोंछकर मंत्रपाठ सहित दीवानजी के सामने छिड़क दिया। दीवानजी ने सोचा कि प्रशासकों को रक्त-दर्शन सहन करने का अभ्यास कर लेना चाहिए।

अभी सूर्योदय में तीन-चार घंटों की देर थी। मामा वेंकिटन अपने पुत्र के साथ दीवानजी के पास आये। अकेले ब्राह्मण के दर्शन से होने वाले अपशकुन से अपने प्रभु को बचाने के लिए वह अपने पुत्र को साथ लाये थे। दीवानजी अर्धनिद्रा में थे। मामा वेंकटिन ने दीवानजी को मीनाक्षी अम्मा का गुप्त संदेश दिया कि उत्तर दिशा में यात्रा न करके रास्ता बदल दिया जाये। मामा इस आशय का राज्यादेश स्वयं महाराजा से लें आये थे। दीवानजी ने समुद्री मार्ग से जाने का निश्चय किया। इसकी सूचना बाजारों के मालिकों को पहुंचा दी गयी।

रियासत के विभिन्न भागों से पांच हजार से भी अधिक लोग दीवानजी को विदा करने सवेरे ही तिरुअनंतपुरम् जा पहुंचे थे। उन्होंने राजधानी के नागरिकों के साथ नगर की परिक्रमा की। प्रभात वेला में स्नानादि से निवृत्त होने के बाद, छाती पर भस्मलेप करके और महाराजा द्वारा भेंट किया गया खड्ग हाथ में लिये दीवानजी श्रीपद्मनाभ मंदिर के प्राचीर के भीतर प्रविष्ट हुए तो देखा कि लोगों की भीड़ परिक्रमा-पथ और प्रांगण में इकट्ठी थी। मंदिर के अंदर पहुंचने पर दीवानजी ने तलवार अनुचर को सौंप दी। इसके बाद उन्होंने पूर्वी परिक्रमा-पथ के मध्य में गरुड़मूर्ति से अंकित स्वर्णध्वज के सामने हाथ जोड़कर महाराजा के विजय की प्रार्थना की। साथ ही हजारों कंठों से प्रार्थना गूंज उठी कि दीवानजी की सेना विजयी हो। मंदिर में की गयी विशेष पूजा-अर्चा के शंखनाद ने राजमहल में स्थित महाराजा को भी पुलकित कर दिया। दीवानजी फिर शिलामंडप में गये और भगवान पद्मनाथ की मूर्ति के सामने हाथ जोड़कर ध्यानस्थ खड़े रहे। अपनी बाह्य इंद्रियों का दमन कर उन्होंने सुषुम्ना के भीतर स्थित पुरुषात्मा को जगाया और सक्रिय किया! इस तरह साक्षात् परमपुरुष की शक्ति का अपनी आत्मा में आह्वान किया। कर्पूर शिखा की लौ से अपनी आंखों को सेंककर उन्होंने पुजारी के हाथ से अपने पद के योग्य प्रसाद ग्रहण किया। फिर अन्य देवताओं के दर्शन हेतु मंदिर की परिक्रमा की। इसके पश्चात जनता से घिरे राजमहल में पहुंचे।

महाराजा तो सूर्योदय के पहले ही भगवद्दर्शन करके दीवानजी की प्रतीक्षा में मन ही मन उनके विजय की प्रार्थना करते हुए महल में खड़े थे। उन्होंने दीवानजी को जो अंगरखे, टोपी आदि भेंट किये उनमें सिर्फ सोने के ही दाने नहीं लगे थे, बीच-बीच में नरेश के आंसुओं के दाने भी चमक रहे थे।

न महाराजा के पास कहने के लिए कुछ शेष था और न दीवानजी के पास निवेदन करने के लिए कुछ था। महाराजा का आदेश और दीवानजी का निवेदन सिर्फ दो शब्दों में पूर्ण हो गये। "केशव", "जी अन्नदाता"। दीवानजी ने महाराजा के चरणों पर साष्टांग दंडवत किया। महाराजा ने उन्हें उठाकर खड़ा किया। उन्होंने श्रीपद्मनाभ का नाम जपते हुए अपने दोनों हाथ उनके सिर पर रखकर आशीर्वाद दिया और उन्हें विदा किया।

तीन-चार घंटे बाद मंत्रि-मंदिर से जुलूस निकला। जुलूस ऐसा था कि न भूतो न भविष्यति।

उपहार में महाराजा से प्राप्त अंगरखा, रत्नखचित टोपी व रत्नहार पहने, कमर पर कटार व खड्ग धारण किये केशवनजी ने श्रीपद्मनाथ स्वामी मंदिर और राजमहल की दिशा में देखकर वंदना की। फिर अपने वाहन का अभिवादन करके दायें हाथ में तलवार और बाएं में ढाल लिये जब वे घोड़े पर सवार हुए तब देश पर आ पड़ी भीषण विपदा से देश और जनता को बचाने के लिए महाराजा के आदेश से प्रस्थान करते सेनानायक और उनकी सेना की जनता-जनार्दन ने विजय कामना की। रण-वाद्यों और शत-शत कंठों से एक साथ निकले जयजयकार ने युद्ध के लिए निकले उस नायक दल का शौर्य बढ़ाया। दीवानजी के मुखमंडल से स्पष्ट था कि वे देश व नरेश की सारी अभिलाषाओं और अपने कंधों पर आये दायित्व को पूरी तरह पहचानते हैं। उन्होंने सिर झुकाकर शुभकामनाएं एवं अशीष स्वीकार किये। इसके बाद उस यशस्वी सेनानायक ने टीपू सुलतान के हजारों सैनिक-व्याघ्रों का वध करने के लिए घोड़ा आगे बढ़ाया।

23
मांकाविल माधवी अम्मा

पेरियार नदी के दक्खिनी तट पर स्थित प्रसिद्ध तीर्थ कालटि से थोड़ी ही दूर एक पहाड़ी पर मांकाव नामक एक प्रसिद्ध भवन था। वहां की स्त्रियां अतिशय रूपवती होती थीं, पर उनमें शील व चरित्र की कमी थी। इसलिए उन्हें राजाओं भूस्वमियों और अभिजात ब्राह्मणों आदि से प्रचुर संपत्ति प्राप्त हुई। धीरे-धीरे उस भवन मे कुबेर का धन एकत्र हो गया। भवन के कई तहखाने धनराशि से भरे रहते थे। अगाध संपत्ति से मनुष्य में मद का जन्म होता है। वहां के लोग भी इसका शिकार हो गये। नैतिकता और आस्तिकता उन्हें छू तक नहीं गयी थी।

धीरे-धीरे वह परिवार क्षीण होता गया। अंत में सिर्फ दो बहनें बच रहीं। इनके भी कोई संतान न हुई। दान-पुण्य और देवताओं की मनौतियां मानने का भी लाभ नहीं हुआ। एक दिन उत्तर भारत से पर्यटन करके लाट या भट्ट बना हुआ एक जनेऊधारी उस परिवार में आ पहुंचा। मांकाव परिवार ने उसके लिए एक आश्रम बनवा दिया। होमादि संपन्न होने लगे। शीघ्र ही बहनों में से एक गर्भवती हुई और उसने एक अलौकिक तेजस्विनी कन्या को जन्म दिया।

कनछेदन और विद्यारंभ के बाद इस बालिका में बड़ी निपुणता, आकर्षण और मोहिनी शक्ति प्रकट होने लगे। टखनों को चूमते घने केशपाशं तथा अनाच्छादित अंगों में स्वर्ण की कांति लिये जब वह भवन के भीतर-बाहर व नदी-तट पर गाती-नाचती फिरती थी तब लोग उसे देखते ही रह जाते। उसकी देह आयु के अनुपात में कहीं अधिक हृष्ट-पुष्ट थी। बालिका का नाम था माधवी।

क्रमशः माधवी अम्मा सयानी हुई। अनेक राजे महाराजे, धनी-मानी और कलाकार उसे वधू के रूप में प्राप्त करने के लोभ से आये। उन्होंने माधवी को अपने वश में करने के हर संभव उपाय किये, मगर वह टस से मस न हुई। समीपस्थ मंदिर के एक छोटे पुजारी नांगतिल नामक एक नारायण नपूंतिरी भी माधवी पर रीझा हुआ था। वह तरह-तरह से माधवी के प्रति अपने अनुराग के भाव प्रकट करता था। माधवी जब स्नान करने जाती तब वह नदी-तट पर टहलता, मंदिर में दर्शन करने आती तो प्रसाद देता। आखिर में वह

माधवी का पति बनने में सफल हुआ। मगर मांकाव में आश्रम बनाकर बसे हुए तांत्रिक की साजिश के कारण उनका दांपत्य-जीवन सुखी न था।

वर्षों बाद एक रात तेज आंधी के साथ धुंआधार बारिश हुई। नदी में बाढ़ आ गयी। उस पार गया नारायण नपूंतिरी मांकाव उस रात घर न लौट सका। घर के नौकर-चाकर गहरी नींद में सोये थे। मांकाव के आश्रम में बसा हुआ तांत्रिक उस परिवार की गुप्त निधि का पता लगाकर उसे हड़पने की फिराक में था। मगर परिवार के लोगों की सावधानी के कारण यह संभव नही हो पाता था। तांत्रिक ने सोचा कि अंधेरा, वर्षा और शीत के कारण वह दिन गुप्त निधि की खोज के लिए एकदम अनुकूल है।

घर के और लोग तो सो गये थे, मगर माधवी की आंखों से नींद ने मानो कुट्टी कर ली थी। उसने दर्पण लेकर उसमें अपना रूप देखा। देखते-देखते वह स्वयं अपना रूप देख कर दंग रह गयी। पतिदेव के पास न होने की उदासी को दूर करने के लिए उसने और गहने पहन लिये। प्रेमियों की स्वामिनी होने के अपने वैभव पर वह मस्त हो उठी। उस डरावनी रात को उसने आत्म-तुष्टि के उत्सव का दिन मान लिया। माधवी अम्मा ने फिर से दर्पण हाथ में लेकर देखा और अपनी अनुपम रूप-माधुरी पर वह स्वयं हर्ष-विभोर हो उठी। दरवाजे में ताला नही लगा था। अचानक द्वार खुल गया। एक भीमकाय युवक भीतर घुसा। लक्ष्मी को चंचल करनेवाली एक स्वर्ण मूर्ति को सामने देखा तो वह उसके नारीत्व और रूप माधुरी के सम्मान में पीछे हट गया। उसे मालूम हो गया कि यही वह प्रसिद्ध माधवी अम्मा है। तब माधवी अम्मा ने कोमल व मधुर स्वर में पूछा, "आप कौन है ? कैसे आये ?" उस युवा तस्कर के होश उड़ गये।

सुबह हुई। माधवी अम्मा थर-थर कापती शयनकक्ष में पड़ी रही। उसे लगा कि वह सारे संसार को कीड़ों-मकोड़ों की तरह तुच्छ मानती थी और उस दिन उसके आत्म-सम्मान की गरिमा एक चोर के सौंदर्य के सामने ध्वस्त हो गयी। उसके गहने सही-सलामत थे।गुप्त निधि की भी चोरी नहीं हुई थी। उस व्यक्ति के विचित्र व्यवहार पर उसने गहरा चिंतन किया। पुरुष के हृदय की प्रवृत्ति पर कुछ निष्कर्षो पर आयी।

इस घटना को दस मास भी पूरे न हुए थे कि माधवी अम्मा ने एक पुत्र को जन्म दिया। नागंतलि नपूंतिरी उस बच्चे को लोरी सुनाता, सुलाता और दुलारता-पुचकारता रहा। आश्रम के तांत्रिक ने बच्चे का नामकरण किया। बच्चे को उसकी जन्मजात प्रवृत्तियों के अनुकूल पालने-पोसने के लिए कुछ मंत्रों का उपदेश दिया। अब माधवी अम्मा के जीवन का एकमात्र ध्येय उस बच्चे को पाल-पोसकर बड़ा बनाना ही रह गया।

उत्तर केरल में हैदर अली खां की फौजों का हमला शुरू हो गया तो नांगतलि नंपूतिरी अपने परिवार की सुरक्षा के लिए अपने गाँव गया। परिवार के कई सदस्य मारे गये थे।

पितृजनों की मुक्ति के लिए उसे विवाह करना पड़ा। उसने अत्यंत पवित्र और सुंदर नंडय्या नामक नपूंतिरी कन्या से विवाह किया।

माधवी अम्मा से ईर्ष्या के मारे रहा नहीं गया। अपनी संपत्ति के प्रताप से उसने बेचारी नंडय्या पर व्यभिचार के अपराध का आरोप लगवाया। न्याय विचार के बाद बेचारी नंडय्या को ब्राह्मण-समाज से जाति-बाहर कर दिया गया।

मांकाव की दोनों आयुप्राप्त बहिनों का देहांत हो गया। अब माधवी अम्मा सभी अधिकारों और सपंत्ति की स्वामिनी हो गयी। हैदर की फौजों के जाने के बाद तांत्रिक भी मांकाव से चला गया। उसके जाने के साथ ही माधवी का बेटा भी गायब हो गया।

24
दीवानजी का धर्मसंकट

हवा की गति अनुकूल थी, इसलिए दीवानजी का जलयान तीसरे दिन संध्या समय मुनंपम पहुंच गया। वहां की और कोट्टामुक्कु की तैयारियों का निरीक्षण करने के बाद वे परवूर गये। वहां उनका शानदार स्वागत हुआ।

टीपू की सेना ने जब कोचिन रियासत में प्रवेश किया तब वहां से बड़ी संख्या में शरणार्थी तिरुवितांकूर चले गये।

कोट्टमुक्कु से नेटुंक्कोट्टा के पूर्वी छोर तक और आलुवा नदी के दोनों किनारों पर तोपें स्थापित की गयीं। छावनियों को युद्धोपयोगी बनाया गया। दीवानजी ने सारी व्यवस्था का स्वय निरीक्षण किया, मगर वे केशवन उण्णित्तान के नेतृत्व वाले सैनिक दल का निरीक्षण करने नहीं गये। चार-पांच दिनों तक वे एक- दूसरे से मिले न बातें की।

नंतियुत्तु का विवाह कार्य रुक जाने की सूचना कार्यक्कार से पाकर दीवानजी खुश हुए। लेकिन कार्यक्कार ने इसके बाद जो रपट भेजी उसे पढ़कर वे चिंता से व्याकुल हो गये। रपट में सावित्री के लापता हो जाने की खबर थी।

रपट में लिखा था—"कोई भी प्रमाण नहीं मिला है। किसी पर संदेह करने का कोई कारण नहीं है। राजा साहब की भूमिका करने वाला अभिनेता सीधे टीपू की छावनी की तरफ चला गया। यही खबर गुप्तचरों से मिली है। कई लोगों को सेवक कोटंता पर शक है। यह खबर फैल जाने के बाद से यहां कहीं उसकी झलक तक नहीं मिली। निश्चय ही यह बड़ी शर्मनाक घटना है। वह कन्या आसानी से कहीं फंसनेवाली भी नहीं है। मुझे सूचना मिली है कि एकाध लोगों को पछाड़ने की ताकत और दांव-पेंच उसमें हैं। कोई प्रमाण नहीं मिलता कि उसे कौन कैसे और कहां ले गया। गांववालों ने वात्सल्य के कारण चारों तरफ ढूंढ़ने आदमी भेजे। सौभाग्यवश अभी एक सुराग हाथ लगा है। उसी दिशा में चार- पांच लोगों को भेजा गया है। कृपया इस दास पर असावधानी की शंका न करके इसकी रक्षा करें।"

दीवानजी ने वह रपट टुकड़े-टुकड़े करके हवा में उड़ा दी। वे थोड़ी देर हाथ बांधे अपने पैरों के नाखूनों की तरफ देखते रहे। दरवाजे की ओर देखा तो कोटंता आशान नजर आया। उण्णित्तानजी से बातें करके वह मजे में घूम रहा था। दीवानजी ने अष्कन

पिल्लै को हुक्म दिया कि कोटंता को पेश किया जाये। कोंटता आशान दीवानजी के चरणों पर गिरकर हाय-तोबा मचाने लगा। उसकी कपटी चालों से वाकिफ दीवानजी ने कहा, "उठकर खड़े हो जाओ।" वह झट उठ खड़ा हुआ और कहने लगा,"वहां जीना मुश्किल हो गया है। सभी मारने-काटने आ रहे हैं। सावित्री नंतियम के कोठार में या किसी स्नानागार में होगी। वहां के छोटे उण्णित्तान लोग बड़े नालायक हैं. . . "आदि।

दीवानजी—"अरे! मेरी आंखों में देखकर बोल, डरने का नाटक दिखाने की जरूरत नहीं है। क्या कोई सावित्री बिटिया को किषक्के नंतियम से और कहीं ले गया है?"

कोटंता—"जी! बिटिया को उसके पिता के भांजे ले गये है। मौका पाने पर कौन छोड़ता है मालिक? श्री चरणों की सौगंध! वे ही ले गये हैं। दिन-दहाड़े ले गये।"

"क्या तू उण्णित्तान का नमक नहीं खाता?"

आशान—"गुरुदेव की अलावा मुझे किसका सहारा है ?" आपकी भी कृपा चाहिए।

दीवानजी—"तेरी उस भक्ति और कृपाकांक्षा का कुछ प्रमाण भी तो मिलना चाहिए। तेरी एक ऐसे आदमी से घनिष्ठता है, जिसे महाराजा, उण्णित्तान या मैं अभी तक देख भी नहीं सके हैं। मैं उससे एक बार मिलना चाहता हूं। इसका रास्ता तुम्हें ही निकालना है। बोल तैयार है ?"

कोटंता—"हुजूर! ऐसा क्यों कहते हैं ? आदेश पालन करने से ही इस दास के चूल्हे में आग जलती है। पहले से ही . . . "

दीवानजी—"पुरानी महिमा का बखान हमने भी सुना है। अन्नदाता प्रसन्न हों तो तेरी खुशहाली का ठिकाना नहीं। इसलिए सच-सच बता दे और हमारा कहना मान जा। मैंने सुना है कि जिससे मैं मिलना चाहता हूं, वह भविष्यवाणी भी करता है। उससे दो बातें जान लेना चाहता हूं। वह कन्या कहां है और हम यह युद्ध जीतेंगे या नहीं।"

कोटंता की आंखें विस्मय से गोल हो गयीं। मुंह खुला का खुला रह गया, घुटने कांपने लगे और जोर से हाथ मलते हुए वह बोला, "नंतियतु मठ, प्रभु का सान्निध्य और नंतियतु का जंगल ही. . . .अशरण. . ."

दीवानजी—"सान्निध्य की बात छोड़ ! क्या तेरी सारी लेन-देन का पता तेरे आचार्य को है? कहीं बेकार में उनको भी न मरवा देना। उस रहस्यमय आदमी को यहां बुलवा दे या स्पष्ट बता कि वह कहां है। अगर ऐसा कर देगा तो तेरे सारे कसूर माफ कर दिये जायेंगे। अगर नहीं करना तो तेरे घर को खुदवाकर मैदान बना दिया जायेगा। तेरे रिश्तेदार समुद्रतट के मछुआरों की बस्ती में होंगे। तेरी यह राष्ट्रद्रोही देह फांसी के तख्ते पर झूलती दिखाई देगी।"

नीचे गिरने से अपने को बचाते हुए कांपते स्वर में आशान बोला,"मालिक! राज्य का शासन करनेवाले श्रीमान के आदेश इस नाचीज के लिए सबसे महत्वपूर्ण हैं।"

दीवानजी—"हां, बेकार के बखेड़े में अपने आप को फंसाओगे तो विवेक नष्ट हो जायेगा। अरे, दूध पिलानेवाले हाथ को डसनेवाले करैत ! तूने उण्णित्तान को फंसाने के लिए कैसी चालें चलीं। तूने ही राव को जेल से छुड़ाने में उसकी मदद की थी न ? बता वंचियूरकाड के परप्पांडा को तूने कौन-कौन सी खबरें दीं और उसका क्या इनाम पाया ?"

आशान के मुंह से झाग निकलने लगा। वह चकराकर नीचे गिर पड़ा। दीवानजी ने आज्ञा दी कि उसे ले जाकर फिलहाल सुरक्षित स्थान पर रख दिया जाये।

सावित्री के अपहरण ने दीवानजी के मन को उनकी खुद की बेटी की मौत से ज्यादा दुखी किया था। उन्होंने अनुमान लगाया कि किसने और क्यों अपहरण किया होगा ! उनका दृढ़ विश्वास था कि उसे जान से मारा नहीं जायेगा क्योंकि अपराधी को पता था कि एक जान के बदले कितनी ही जानें जायेंगी। उन्हें सावित्री की माता और त्रिविक्रमन की दशा पर तरस आया। दीवानजी ने सोचा त्रिविक्रमन को विभिन्न कार्य सौंपकर युद्ध क्षेत्र से दूर ही रखूंगा।

प्रतिक्षण की नयी खबरें न मिलने से महाराजा की संभाव्य व्याकुलता के बारे में सोच ही रहे थे कि एकाएक उण्णित्तान कमरे में आये और आते ही प्रश्न किया—"अब आपका कलेजा ठंडा हो गया न ?"

दीवानजी उठ खड़े हुए। उन्हें पता था कि ऐसे माहौल में कुशल-मंगल पूछना व्यर्थ है, अतएव वे मौन रहे। गुस्से से अंधे उण्णित्तान आगे बोले,"खबरें सुनकर आपका जी ठंडा हो गया न ? अब तो कलई खुल गयी ? रहस्य को कितना भी पोशीदा रखिए समय सचाई को उजागर कर देता है। यह बात अच्छी तरह याद रखिए। कषक्कूट्टम् परिवार या नंतियत्तु परिवार के लोगों को घर से भागने की कला नहीं आती। फिर क्या मुझे मुंह खोलकर बताना होगा कि यह किस अखाड़े का दांव है ?"

उण्णित्तान को मन ही मन पक्का विश्वास हो गया था कि सावित्री दीवानजी की पुत्री है। वह क्रोध में आकर इसी रहस्य की बात कर रहे थे। दीवानजी को इसका अनुमान था, मगर वे चुप ही रहे; क्योंकि उस समय तर्क करने पर उण्णित्तान का क्रोध बढ़ता ही। इस पर उण्णित्तान ने जोर से चीखकर कहा, "आप सोच रहे होंगे कि मौन से हराने में ही होशियारी है। मुझ निरपराध को यह बोझ ढोना पड़ रहा है। नदी में कूदकर प्राण दे देने के सिवा मेरे सामने और कोई उपाय नहीं। उस कुलकलंकिनी का पिता नामधारी मैं अन्नदाता के सामने कौन-सा मुंह लेकर जाऊं ? मेरे जन्म-जन्मातंर के पापों ने मेरा आपसे परिचय कराया। जगदीश्वर स्वयं मेरी रक्षा करे। समझ में नहीं आता कहां जाऊं ? क्या करूं ?"

दीवानजी—"आप फौरन जाइए और बेटी को ढूंढ़ने का प्रयत्न कीजिए। पत्नी को समझाइए। आशंकाओं का . . . "

उण्णित्तान—"आशंकाएं ? अपने दांत खुद खोदकर बदबू की जांच करने को मैं तैयार नहीं हूं। रहने दीजिए, ऐसे कामों से बाज आया। आपसे इस बारे में बहस करने को भी मैं तैयार नहीं हूं। आप उस गद्दी पर बैठे-बैठे जो चाहे कह सकते हैं; कर सकते हैं। विक्रमादित्य की गद्दी का नाम सुना है? उस पर बैठे हुए व्यक्ति को ऐसी ही विशेष बातें सूझती हैं।"

दीवानजी– "कैसी बातें कर रहे हैं आप? कम से कम अपनी प्रतिष्ठा का तो ख्याल रखिए !"

उण्णित्तान—"मेरी प्रतिष्ठा ? उसे तो आप की प्रतिष्ठा ने राख में बदल दिया है। आपको पता है कि मेरा दिल कितना जल रह है! यह जलन असल में कहीं और होनी थी? हाय! इन्सान एकदम हैवान बनता जा रहा है। मेरा दुख देखकर शायद आप मन ही मन खुश हो रहे होंगे। अगर आप में मानवता की एक झलक भी होती तो इस समय आप धाड़ मारकर रो रहे होते। मगर मैं यह सब क्या बकता जा रहा हूं ? ये वैभव के लोभी—धन के लोभ में पराक्रम का यश-स्तंभ स्थापित करनेवाले 'प्रेम' का मतलब कैसे समझें? आपने तो प्रेम का नाम तक नहीं सुना होगा। आपको क्या? दूसरों की संतानों को रणभूमि में कटवाकर महाराजा की सेवा में पहुंचने पर दोनों हाथों में वीर कंकण और एक बड़े भूखंड पर अधिकार प्राप्त करेंगे। परायी औरत को धोखा देकर उसका चरित्र और मानसिक शांति नष्ट कर देना, उसे बीमार बनाकर और उसकी कमबख्त लड़की को मनमानी करना सिखाकर .... पदप्रतिष्ठावाले जब दुलारते हैं तब बेचारी सीधी औरतें नाच तो उठेंगी ही— विद्रोह करने की सजा क्या है। यह आप उन्हें थोड़ा ही बतायेंगे, दूसरे जब पागल होकर नाचते हों तब उनकी तकलीफ को देखना कितना आनंददायी होता होगा? क्यों?"

दीवानजी—"आपको भगवान ने इतना बड़ा संताप दिया है। इस वक्त आपसे मैं कुछ नहीं कहना चाहता। पुत्री का पता लगाने की जिम्मेदारी आपकी है।"

उण्णित्तान—"वाह! उपदेश तो अच्छा दे लेते हैं आप ! वह कन्या अगर इस अभागे की होती तो क्या यह नालायक यहां आता? क्या चुप रहता? अपना उपदेश आपको खुद अमल में लाना है। आप तो बड़े-बड़े कार्यों का निर्णय लेते हुए सुमंत्र बने अकड़ते हैं न। सभी को समझदारी देते हैं। मगर किसी के सिर पर जब भीम की गदा जैसी भारी चोट लगी हो तब उसका दिमाग कैसे सुलझा रहेगा? मैं अब विदा लेता हूं। भीषण युद्ध होने वाला है। उसमें पहली पंक्ति में खड़े होकर मैं इस जीवन से निवृत्ति पर जाऊंगा।"

दीवानजी—"ऐसा नहीं होगा। आपको अपने वर्तमान पद से हटाया गया है। घर जाकर पिता एवं पति के कर्त्तव्य का पालन कीजिए।" इस पर उण्णित्तान एक-एक शब्द

पर जोर देते हुए ऊंची आवाज में बोले, "वह कर्त्तव्य तो आपको ही करना है ! दूसरों को उल्लू बनाने की भी एक हद है ।"

दीवानजी—"सीधे- सरल लोगों के विद्रोह की बातें करने की भी एक हद होती है ।"

उण्णित्तान—"लो, सुनो ! आप धर्मपद्धतियों के लिए मनु बनने का कष्ट न करें । जनता का विचार है कि इस शत्रु का यह भंयकर आक्रमण भी आपकी ही गलतियों का परिणाम है । इस आधुनिक द्रोणाचार्य के नेतृत्व में प्रयाण करने वाली सेना की जय हो ! (गदगद भाव से) हे भगवान ! मैं क्या-क्या बकता जा रहा हूं । मेरा सर्वस्व ले लीजिए । (बच्चों की तरह रोते हुए) युद्ध में विजय पाकर अन्नदाता को विजयी बनाइए । रहा मेरा अपमान, तो मैं उसे ईश्वर के निर्णय पर छोड़ता हूं । प्रभु अपराधियों को चाहे बचा लें चाहे दंड दें, उनकी इच्छा । मैं किसी बात की प्रार्थना नहीं करता ।"

उण्णित्तान ने सिर पीट लिया । फिर आंखें पोंछ लीं । दीवानजी स्तब्ध रह गये । उनका गला रुंध गया । उन्होंने कहा, "वंचक कोई भी हो,दलपति ने रामवर्मत्तु परिवार के स्थायित्व की खातिर ही उस सती-साध्वी नारी को गोद लेकर आपसे उसका विवाह कराया था । अतएव, आप शीघ्र निकलें ताकि वंश को सर्वनाश से बचा सकें ।"

उण्णित्तान ने फिर उपहास के स्वर में कहा, "क्यों ? अन्नदाता के लिए मरने को तैयार लोगों का खाना-पीना, आराम से रहना आप को अखरता है क्या ?"

इस प्रश्न का कोई उत्तर दिये बिना दीवानजी मुड़कर भीतर चले गये । उण्णित्तान जब अपने कार्यलय पहुंचे तब उन्हें तिरुअनंनतपुरम् के राजकोष के निरीक्षण का दायित्व देनेवाला स्थानांतरण का आदेश प्राप्त हुआ ।

त्रिविक्रमन को समझाना दीवानजी के लिए बड़ा कठिन था । उन्होंने उसे मीनाक्षी अम्मा का स्वास्थ्य, पेरिंचक्कोड भवन की यथार्थ स्थिति आदि की जानकारी के लिए नियुक्त किया । साथ ही कुंचैकुट्टि पिल्लै के नाम लिखा एक पत्र भी उसे सौंपा ।

छावनी की सीमा तक अष्कन पिल्लै ने भी त्रिविक्रमन का साथ दिया । थोड़ी दूर जाने पर उन्होंने देखा कि कोटंता आशान एक पेटी के ऊपर खड़ा भाषण झाड़ रहा है । वह उण्णित्तान की धोती छाती तक ओढ़े और उनका अंगोछा सिर पर बांधे हुए था । वह श्रोताओं को हास्य-व्यंग्य के हाव- भाव सहित समझा रहा था कि सावित्री घर छोड़कर भाग गयी है । उसने ज्यों ही सावित्री के लिए 'वेश्या' विशेषण का प्रयोग किया, त्यों ही अष्कन पिल्लै का जबरदस्त चांटा खाकर नीचे गिर पड़ा । उसका एक दांत मुंह के बाहर आ गिरा ।

25
अशिक्षित देवकी की वाकपटुता

कल्लरक्कल पिल्लै हर कार्य के पीछे लाभ की दृष्टि रखनेवाला मुख्यतः एक देहाती किसान था। उसकी आशा थी कि देवकी से ब्याह करके वह अपनी प्रतिष्ठा बढ़ा लेगा। वह अपने सेवकों की प्रेरणा से ही देवकी से मिला था। देवकी की शालीनता एवं चरित्रगत विशेषता ने उसे अत्यंत मोहित किया था। वह सजी हुई देवी की मूर्ति से भी अधिक सुंदर थी। उसकी बोली पंचवर्णी शुकी जैसी मीठी थी। वह उस गाय सी सुशील थी, जो अपने मालिक के हाथों से प्राप्त ग्रो-ग्रास को ही अधिक स्वादिष्ट मानती है तथा उस के लिए स्वामी के पास दौड़ी आती है। प्रांजल भाषा, शुचिता, शालीनतापूर्ण व्यवहार—ये सब उसके विशेष गुण थे। जब से उसके साथ बातचीत का मौका मिलने लगा तब से कल्लरक्कल का प्रेम और भी घना और भी सशक्त हो गया। मगर वह बड़े असमंजस में पड़ा हुआ था। उसने पहले सोचा, देवकी का अपहरण कर ले। तब भी राजधिकार से उसे ही इसके संरक्षण का दायित्व दिया जायेगा। फिर, उस वक्त तो वह राज-प्रतिनिधि की हैसियत से पेरिंचक्कोड की व्यवस्था कर रहा था। अतएव उसे डर था कि कहीं उसका व्यवहार अन्नदाता को अनुचित न लगे !

पेरिंचक्कोडन के लौटने में विलंब हुआ तो लक्ष्मी अम्मा चिंतित हो उठी। फिर भी वह निराश नहीं थी। उसको खजाने की चाभी सौंप दी गयी है। जरूरत पड़ने पर उसे कल्लरक्कल पिल्लै को सुपुर्द करने की पूर्वानुमति भी मिल चुकी है। इसी बीच उसने टीपू के शीघ्र होनेवाले हमले की खबर सुनी। हैदर के हमले के दिनों में अपने सिर पर टूट पड़ी विपदाएं उस सती को याद आयीं। उसने मन ही मन ईश्वर से प्रार्थना की कि ऐसी दुर्दशा देवकी की न हो। उसने मनाया कि कल्लरक्कल और देवकी का शुभ-विवाह शीघ्र ही संपन्न हो जाये।

लक्ष्मी अम्मा के सुझाव के अनुसार कल्लरक्कल पिल्लै दाढ़ी घुटाये, कीमती कपड़े पहने, सुगंधि-लेपन से अपनी मोहकता बढ़ाये बड़ी शान से आया। देवकी को लगा कि उसकी वेश-भूषा, व्यवहार और बातचीत का ढंग शायद उसकी कल्पना के पति से मेल नहीं खाता, उसके विचित्र संबोधन सुनकर देवकी कान बंद कर लेती। उसे लगता कि

वह शिष्टता की लक्ष्मण- रेखा का उल्लंघन कर रहा है। यह देखकर कल्लरक्कल पिल्लै अपनी प्रेयसी की निश्छलता पर प्रसन्न हुआ।

फिर भी उसने सोचा देखता हूं! मां अपने दिल की बात खुलने नहीं देतीं। उनका ऐसा व्यवहार कहां तक ले जायेगा, क्या पता? अष्टकन के भाई लाख जिद करते हैं कि कन्या को ले चलो। पर मुझे सुभद्रापहरण जैसा विवाह नही चाहिए। चार आदमियों को बुलाकर सामाजिक रीति के अनुसार विवाह सपंन्न किया जाये तो पेरिंचक्कोडनजी के प्राण-पखेरू उड़ जायेंगे। यहां सरकारी काम देखते-देखते कल्लरक्कल परिवार का सारा ढांचा बिगड़ गया है। देवकी को छोड़कर चले जाने को भी जी नहीं चाहता।

"पिताजी के आने के बाद उनकी इच्छानुसार ब्याह करके ले जाने में ही शराफत है, क्यों ?" देवकी ने पूछा। कल्लरक्कल—"इस पर तो पहले ही समझौता हो गया है न।"

देवकी—"उसमें कोई फर्क नहीं पड़ेगा। आदमी के लिए जुबान ही सबसे बड़ी बात है। सब कुछ विश्वांबिका के निर्णय के अनुसार चलता है। वे ही हमारी रक्षा करें।"

दोनों को बड़ा आनंद आ रहा था। फिर भी पिता के प्रति कर्तव्य ने देवकी के लिए तथा भविष्य की चिंता ने कल्लरक्कल पिल्लै के लिए अनिश्चय की स्थिति खड़ी कर दी थी। कल्लरक्कल पिल्लै को अहसास हुआ कि अब वहां से कहीं और जाना चाहिए।

उसने कहा—"मेरी देवू! पता नहीं कब इस घर की जड़ें खोदी जायें। इस पर महाराजा की कोप-दृष्टि पड़ गयी है।"

देवकी—"पिताजी के आने पर वह बात बता दीजिएगा।"

कल्लरक्कल पिल्लै ने फिर से अपनी बात दुहराई कि समय बदलता जा रहा है, अब यहां से जान लेकर निकल पड़ना चाहिए। इस पर देवकी बोली, "यह कैसा हठ है! अपनी इच्छानुसार अभी यहां से चली जाऊं तो एक दिन आपकी इच्छानुसार फिर यहां आना भी तो पड़ सकता है।"

कल्लरक्कल पिल्लै—"वाह! तुम तो छुपी रुस्तम निकलीं। तुम्हें तो किसी महल की रानी होना था। हां, कम से कम अब तो बताओ कि तुम लोग उत्तर केरल के किस गांव की हो ?"

देवकी को सवाल अच्छा लगा। उसे भी अपने पूर्वजों का इतिहास जानने की इच्छा थी। उसने मां को पुकारा। देवकी उठी। अन्य पुरुष की सपंत्ति बनी हुई सरस कुमारी का अभिनय करती हुई मां से सटकर खड़ी हुई और एक गृहिणी की तरह कुशल-प्रश्न पूछने के स्वर में पूछा—"मां! बताओ तो हमारा घर कहां है ? बिना यह बात जाने इन्हें नींद ही नहीं आ रही है।"

लक्ष्मी अम्मा—"यह बात तुम्हारे पिताजी ही बता सकते हैं। फिर भी कहूंगी, मेरा जन्म. . . देवकी! मेरी बच्ची! खोटे ग्रहों के कारण इसी जीवन में मुझे दूसरा जन्म लेना

पड़ा। देवी विश्वांबिका ने तुम्हारे पिताजी को मेरे रक्षक के रूप में भेज दिया। इससे ज्यादा क्या कहूं ?"

कल्लरक्कल ने बारंबार पूछा तो लक्ष्मी अम्मा ने कहा, "बेटा! कभी-कभी कुछ बातें छिपानी भी पड़ती हैं।"

कल्लरक्कल पिल्लै—"कम से कम गांव का नाम तो बताइए। देवू के पिता की तरह अपने भावी पति पर भी उसे विश्वास करना चाहिए न? आप की भलाई व बुराई आपके भावी दामाद पर भी तो निर्भर करेगी ?"

लक्ष्मी अम्मा—"क्या बताऊं ? शंकर भगवान की कसम। मेरे मित्रों और रिश्तेदारों ने ही मेरा सत्यनाश किया। यही सच है। मैंने किसी का कुछ नहीं बिगाड़ा था। जिन्होंने मेरे भ्रष्ट होने का फैसला सुनाया उन्हें भी मैं शाप नहीं देती। जिस प्रारब्ध ने दोष मढ़ा, उसी ने एक रास्ता भी दिखाया। मेरे पति बड़े भले हैं। हमारी सुख-समृद्धि के लिए उन्होंने बहुत-कुछ किया है।"

कल्लरक्कल पिल्लै ने कहा, "संक्षेप में वह सब मुझे मालूम है। सारी गड़बड़ियों का कारण उस परप्पांडा की संगति है। आज उसका नाम सुनकर लोग थर-थर कांपते हैं। दीवानजी से मैं मिला था तो कई बातें कुरेद-कुरेद कर पूछी थीं।"

लक्ष्मी अम्मा ने घबरायी आवाज में पूछा, "किसका संग बताया तुमने ?"

देवकी की तरफ देखते हुए कल्लरक्कल पिल्लै ने पूछा, "बता दूं न ?"

देवकी—"हां, हां। अभी बताइए। लोग ऐरों-गैरों के अपराध पिताजी पर इसीलिए मढ़ते हैं कि वे किसी से नहीं डरते। साफ-साफ कहिए किसकी संगति की बात कर रहे हैं ? सुनकर मैं कोई बेहोश नहीं हो जाऊंगी।"

देवकी के नजदीक जाकर कल्लरक्कल पिल्लै ने कहा, "मैं यहां झगड़ा करने के लिए भजन नहीं करता।"

देवकी—"आप शरीफ आदमी है न? दूसरे हमारे संरक्षक भी हैं। भजन करने से आपका क्या आशय है? अगर हमसे स्नेह है तो उस आदमी का नाम एक बार बता दीजिए।"

कल्लरक्कल—"आम सड़क के चौरहे पर जहां दक्खिनी मंदिर बना है वहां एक पत्थर का मंदिर, तालाब और ताड़ के पेडों का एक झुरमुट है। वहीं एक परयन रहता है और गुलछर्रे उड़ाता है। सभी को विश्वास है कि देवू के पिता की आंख खुलते ही वह चूर-चूर हो जायेगा।"

देवकी ने जैसे उससे बहस करने के लिए कमर कस ली—"किसी ऐरे-गैरे का अपराध पिताजी पर मत मढ़िए।"

लक्ष्मी अम्मा ने उसे सामने से हटाकर बगल में कर दिया—"देखिए बेमतलब की

बातें करके तय की हुई बातों में अड़ंगा मत डालिए। अपराधियों को दंड मिलना ही चाहिए। आपके लिए डरने का कोई कारण नहीं है। हमारा दायित्व आप ले लें तो भी कोई परेशानी नहीं होगी आपको। हमारे पास सुखी जीवन बिताने भर को संपत्ति है।"

कल्लरक्कल पिल्लै का दिल खुशी से नाच उठा। उसने सोचा उसकी जातिगत हीनता धन से दूर हो जायेगी। सब अपराध क्षमा कर दिये जायेंगे। फिर उसने कहा, "जब मैंने कहा कि विवाह और गौना साथ-साथ हो जायें तब देवू ने ही आपत्ति उठायी थी। सब कुछ सस्ते में करा दें तो पूछताछ करने और काम में मदद करने कौन आयेगा।"

देवकी—"मां को भी कुछ कहने दीजिए। आप जो चाहें तय करें, पर पिताजी को ही आकर मुझे आपके हाथों सौंपना होगा। भले ही पिताजी को धूर्त मानूं और यह भी मानूं कि उन्हें सजा मिलेगी। और इसी ख्याल से अपनी प्रतिष्ठा को भुलाकर आपके साथ चल पड़ूं ! नहीं। नहीं। ऐसा नहीं हो सकता मां ! मैं पिताजी का शाप सहन नहीं कर पाऊंगी। खेतों में चरने वाले चौपायों में मेरी गिनती न करना।"

26
भाग्य की नयी विडंबना

कल्लरक्कल पिल्लै देवकी की बातों का जवाब देने वाला ही था कि उसे रोकते हुए लक्ष्मी अम्मा ने कहा, "सुनो तो, कोई जंगल को तहस-नहस करा रहा है। शोर बढ़ रहा है।" और वह धीमी आवाज में अपने कुलदेवता की प्रार्थना करने लगी। तभी वहां एक नौकर आ गया। कल्लरक्कल पिल्लै के प्रश्न के उत्तर में उसने कहा, "इस बार पुजारीजी नहीं आ रहे हैं। महाराजा स्वयं आ रहे हैं। साथ में स्वर्ण वस्त्र पहने राजकुमार हैं, पंचकल्याणी घोड़े पर चढ़े हुए। बंदूक तलवार बहुत-कुछ बांध रखा है। घोड़े से चटपट उतरकर उन्होंने आदेश दिया है—'जलाओ, भून डालो' आदि।

करुण स्वर में लक्ष्मी अम्मा बोली, "मेरे बेटे। सब उनकी खोज में आ रहे हैं। हमारा कोई सहारा नहीं है। चाहे जो भी हो तुम उनका पक्ष लेना।"

कल्लरक्कल पिल्लै हक्का-बक्का रह गया। उसने सोचा, राजा के सिपाही दुबारा धावा बोल रहे हैं। इसका मतलब है, संहार का राजादेश निकल चुका है। उसे चिंता हुई कि देवकी से उसके संबंधों की पोल कहीं राजमहल में तो नहीं खुल गयी और कोई गड़बड़ी तो नहीं होगी। उसने भवन के मुख्य भाग में जाने का निश्चय किया। वह आगे बढ़ा तो देवकी ने अपने अविवाहित होने की बात भूल हाथ थामकर उसे रोक लिया और कहा, "जरा सुन लीजिए। मैं एक जंगली जीव की तरह नासमझ और निरीह हूं। फिर भी कहती हूं कि अगर आप पिताजी को बचाने की पूरी कोशिश नहीं करेंगे तो भूल जाइयेगा कि ऐसी कोई लड़की भी इस दुनिया में है। आप मेरे लिए जान से प्यारे हैं। फिर भी मां को मौत से बचानेवाले और मुझे जन्म देनेवाले वे पुण्यपुरुष हमारे लिए भगवान हैं।"

कल्लरक्कल पिल्लै कुछ बोले बिना इशारे से देवकी का आदेश स्वीकार करके बाहर चला गया।

देवकी मां के और नजदीक आ गयी और बोली, "यह सब क्या है माँ ? सच-सच बताओ। हमारा मुल्क कौन सा है। जाति कौन सी ? कुल कौन सा है ? हम कैसे यहां आ फंसे ? क्यों पड़ोस तक में जाने की हमें अनुमति नहीं है ? हमें इस तरह बंधन में क्यों रखा जा रहा है ? पिताजी और उस बड़े घातक का, जिसकी चर्चा आज हुई है, क्या

नाता है ? तुम और कल्लरक्कल पिल्लै इतने भयभीत क्यों हो रहे हो ? हमारा भविष्य क्या है ?"

लक्ष्मी—"पिताजी ने तुम्हारे लिए राजकुमारी-सा जीवन बिताने के लिए जरूरी दौलत जमा कर रखी है। तुम चिंता मत करो।"

अपने पिता के वात्सल्य की बात सोचकर देवकी सिर से पांव तक सिंहर उठी और फूट-फूटकर रो पड़ी। उसके केश उसकी पीठ पर छितराये हुए थे। देवी की मूर्ति जैसी उसकी कुंदनकाया दुख और भय से पीली पड़ गयी। फिर भी उसका सौंदर्य बिजली की तरह आंखों को चकाचौंध कर रहा था। उसकी आंसू-भरी आंखें कवियों द्वारा वर्णित खिले हुए नीलकमल के प्रतिमान को सार्थक कर रही थीं। उसकी दुखभरी वाणी वीणा के मद्धिम सुरों जैसी मधुर थी। पुत्री का शोक देखकर लक्ष्मी अम्मा को लगा जैसे कोई नयी आफत आनेवाली है। वह स्तब्ध खड़ी रही। देवकी की उस समय की आर्द्र रूपराशि विश्व भर को उन्मत्त करने में सक्षम सौंदर्य-मूर्ति हो उठी थी। गंवार कल्लरक्कल पिल्लै और सौंदर्य-ज्योति सी देवकी का अंतर देखकर लक्ष्मी अम्मा का चित्त व्याकुल हो उठा। उसने पुत्री को भौतिक जीवन की अस्थिरता के बारे में उपदेश दिया। उसे समझाया कि फिलहाल कल्लरक्कल पिल्लै की सहायता उनके लिए एक बड़ा वरदान है। पर पुत्री का दुख दूर करने का उसका प्रयास सफल नहीं हुआ।

लक्ष्मी अम्मा ने बाहरी द्वार पर दो आदमियों को बातें करते सुना। वे कल्लरक्कल पिल्लै और त्रिविक्रमन थे। कल्लरक्कल पिल्लै कह रहा था कि पेरिंचक्कोडन तिरुअनन्तपुरम् जाने के बाद से यहां नहीं आया है। वह कुछ ले भी नहीं आया है। उसने अष्कन पिल्लै के बारे में पूछा तो त्रिविक्रमन ने बताया कि वह दीवानजी के अंगरक्षक के रूप में सेवा कर रहा है। त्रिविक्रमन घर के भीतर आने से इनकार कर रहा था, फिर भी कल्लरक्कल पिल्लै हठ करके उसे भीतर ले गया।

दीवानजी ने सावित्री को खोजने के बहाने त्रिविक्रमन को युद्धक्षेत्र से हटा दिया था। वह कषक्कूट्टम् जाकर मीनाक्षी अम्मा से मिला, तिरुअनन्तपुरम् आकर कुंचैक्कुट्टि पिल्लै से बातें कीं और अब यह पता करने आया था कि सावित्री कहीं पेरिंचक्कोडन के यहां तो नहीं है।

कल्लरक्कल पिल्लै और त्रिविक्रमन को एक साथ देखकर लक्ष्मी अम्मा को केवट और श्रीराम का स्मरण आया। त्रिविक्रमन का दर्शन करके देवकी को लगा जैसे उसकी कल्पना के देवता साकार हो उठे हों। कांतिपूर्ण कनक शरीर, तेजोपूर्ण व मंदहासमय मुखमंडल, पौरुष से स्फुरित वक्ष स्थल, संहार शक्ति से भरी भुजाएं, रमणीय व ललित पदगति, कंधे तक कटे हुए घने श्याम केश—देवकी को दृढ विश्वास हो गया कि वह कोमल-कांत युवक किसी उच्च पद पर विराजमान है। उसका चित्त आनंद सागर में

दोलायमान होने लगा। बिना विशेष अभ्यास के, प्रकृति की प्रेरणा से ही वह पैरों की उंगलियों से धरती पर चित्र बनाने लगी। लक्ष्मी अम्मा उसके मन की बात ताड़ गयी। उसने देवकी को भीतर जाने के लिए कहा। पंरतु देवकी के नयनों के भौंरे त्रिविक्रमन के सौंदर्य का मधु पीकर मस्त-से उसी कुसुम पर चिपके रह गये। लक्ष्मी अम्मा को लगा, अब कोई नयी विडंबना प्रस्तुत होनेवाली है। वह मन ही मन संताप में जलने लगी।

वास्तविक स्थिति का ज्ञान होने पर देवकी को यकीन हो गया कि उसका आशाकुसुम छिन्न-भिन्न हो गया है और अब कभी खिल नहीं सकता। माता की आज्ञा को औपचारिक मात्र मानती हुई वह पूछ बैठी, "ये कौन हैं, मां ? क्या ये महाराजा हैं ?"

लक्ष्मी अम्मा ने हंसते हुए कहा, "अरे नहीं, बेटी ! अन्नदाता की अवस्था तुम्हारे दादा जितनी है। वे यों हर कहीं घूमने फिरने की स्थिति में भी नहीं है।"

देवकी—"तो ये कौन हैं, अम्मा ?"

उस समय देवकी का अद्‌भुत सौंदर्य देखकर कल्लरक्कल पिल्लै को अपार हर्ष हुआ। उसने सोचा, हम दोनों का विवाह जब तय हो ही चुका है, तब गृहस्वामी की भूमिका ग्रहण करना मेरा कर्तव्य है। उसने मान लिया कि प्रतापी लोगों के साथ घनिष्ठता उन स्त्रियों को अपना महत्व बताने का अच्छा साधन है; इसलिए उसने बड़ी उदारता से त्रिविक्रमन कुमार को पकड़कर आगे ठेलते हुए कहा, "अच्छा ! क्या अम्मा भी इसे नहीं जानतीं ? हमारे वलियमार्तंडन पटवीड के वेलु तंपी का यह सुपुत्र है। तिरुअनन्तपुरम् में चेंपकश्शेरी परिवार के रामवर्मन्तु कुल की छोटी कन्या के लिए सुरक्षित दुलारा युवक है। यह दीवानजी का भी बड़ा ही प्रेमपात्र है। इसका जैसा रूप है वैसा ही यह कर्मठ भी है। अश्वसेना का सेनापति यह युवक अपने पिता से मिलने जा रहा है।"

देवकी ने जब सुना कि वह रामवर्मन्तु कुलकी कन्या का धरोहर है, तब उसे लगा कि वह धरती में फंसी जा रही है, भाप बनकर अदृश्य होती जा रही है। लक्ष्मी अम्मा बेटी की मानसिक दशा ताड़ गयी। वह चुपचाप उस युवक के प्रति आदर प्रकट करती खड़ी रही। मगर मूर्ख कल्लरक्कल पिल्लै ने बात जारी रखी—"अरे ! असल बात तो मैं भूला ही जा रहा था। देवू के पिताजी देवू के लिए इसी युवक को पटा लाने तिरुअनन्तपुरम् गये हैं।"

देवकी बिजली की तेजी से भाग गयी। कल्लरक्कल पिल्लै को अपनी प्रेमिका के चरित्र पर अभिमान हुआ। उसने त्रिविक्रमन की तरफ गर्व से देखा। त्रिविक्रमन भी कल्लरक्कल पिल्लै का हाथ पकड़े दरवाजे से बाहर निकल गया।

27

द्रोणाचार्य का कलियुगी अवतार

जैसे श्रीकृष्ण के लिए उद्धवजी थे वैसे ही दीवान केशव पिल्लै के लिए कुंचैक्कुट्टि पिल्लै सब-कुछ था। फिर भी दीवानजी परवूर जाने के लिए जब जलयान पर चढ़ने समुद्र-तट पर पहुंचे तब वह उनके साथ नहीं था। दीवानजी के साथ यात्रा करनेवाले उनके हजारों आराधकों के साथ न जाकर वह महाराजा के पास ही बना रहा।

महाराजा मार्तंडवर्मा ने जब कायंकुलम् रियासत को अपनी तिरुवितांकूर रियासत के अधीनस्थ कर लिया, तब उस रियासत के पंरपरागत सेनापति परिवार ने तिरुविंताकूर के प्रति अपनी स्वामिभक्ति घोषित की। इस परिवार के कई सदस्य आगे तिरुवितांकूर सेना में ऊंचे पदों पर रहे। इसी परिवार के कुंजुण्णि नामक युवक ने अपनी असली पहचान छुपाये हुए सरकारी सेवा करने की इच्छा प्रकट की। केशव पिल्लै ने इस युवक की गजब की कुशलता को पहचान कर इसका नाम कुंचैक्कुट्टि पिल्लै रखा। दीवानजी ने इस ईमानदार युवक को राजस्व-संबंधी दायित्वपूर्ण कार्य में अपना सहकर्मी बना लिया।

कुंचैक्कुट्टि पिल्लै विविध कलाओं में प्रवीण था। वह फलित ज्योतिष में अपार सिद्धि प्राप्त कर चुका था। उसने इतनी दैवज्ञता प्राप्त की थी कि अपनी मृत्यु तिथि तथा मृत्यु की विधि भी जान गया था। दीवानजी ने जिस घड़ी जलयान में चढ़ने के लिए प्रस्थान किया, उस समय वह मन ही मन ज्योतिष द्वारा वंचि राज्य के भविष्य की स्थिति का आकलन कर रहा था। उस समय उसका मुखमंडल सूर्य-बिंब सा ज्योतिर्मय था। प्रस्थान के समय के लिए अनुपयुक्त इस ज्योतिर्मयता को लोगों ने कुंचैक्कुट्टि पिल्लै के उपास्य देवता श्री नृसिंह मूर्ति की द्युति माना था।

कार्यक्कार बहुत लंबा तो नहीं था, परंतु उसके कंधे और विशाल वक्ष गज मस्तक जैसे, मोटी-मोटी बलिष्ट रानें और यमदंड जैसी भुजाएं थी। कितनी ही जबर्दस्त दीवार हो वह उसे तोड़ने की शक्ति रखता था। छोटी उम्र से ही व्यायाम करके उसने अपने अंगों पर पूरा अधिकार एवं युद्ध-चातुरी प्राप्त की थी। कुशल सैनिक उसे द्रोणाचार्य का कलियुगी अवतार मानते थे। उसने ऐसा मानसिक प्रशिक्षण प्राप्त किया था कि किसी का सिर काटने, आश्रित की रक्षा करने, और बच्चों को दुलारने का काम एक साथ कर सकता था।

सिरहस्तिनं ग्राम में भट्ट ने (इसी ने बाद में गौंडन नाम अपना लिया था) जिस सिपाही को बांहों में भींचकर मार डाला उसका भाई प्रतिशोध का व्रत लिये गौंडन के अनुचरों में शामिल हो गया था। कार्यक्कार ने कुछ मंत्र-तंत्र करके उसे अपने वश में कर लिया और उसे भंगाराम नाम दिया। भंगाराम के द्वारा प्राप्त वेश में ही कुंचैक्कुट्टि पिल्लै ने गौंडन की अध्यक्षता में दीवान के वध के लिए सपंन्न चर्चा में महिषासुर मर्दिनी के रूप में पहरा दिया था। बाद में वे दोनों परप्पांडा के अड्डे पर भविष्यवाणी सुनने गये हुए लोगों के पीछे भी गये।

दीवानजी ने जिस दिन प्रस्थान किया उसी दिन कार्यक्कार ने भंगाराम को एक विलक्षण वेश में बातचीत के लिए खड़ा पाया। भंगाराम गौंडन का आदेश लेकर आया था कि दीवानजी के प्रस्थान का निश्चित समय मालूम किया जाये। कुंचैक्कुट्टि ने उसे पास बुलाया। उससे कई बातें मालुम हुईं। गौंडन, पेरिंचक्कोडन के साथ, मीनाक्षी अम्मा से मिलने गया था। वहां गौंडन और पेरिंचक्कोडन आपस में उलझ पड़े। और गौंडन ने तिरुअनन्तपुरम् में पड़ाव डाला।

कुंचैक्कुट्टि पिल्लै गौंडन को खतम करने के पक्ष में था, परंतु आश्रित के प्रति दयाभाव के कारण महाराजा यह बात मानने को तैयार न थे। बंधुओं के प्रति उदारता के कारण दीवानजी भी इसके पक्ष में नहीं थे, इसलिए कार्यक्कार ने यह काम करने का बीड़ा खुद उठाया।

कार्यककार ने भंगाराम से पूछा, क्या यह काम वह नहीं कर सकता ? वह गौंडन के साथ ही रहता था। उसने जबाब दिया, "ऐसा एकांत में ही संभव है। पर एकांत में वह हमेशा केशव का नाम-संकीर्तन करना चाहता है। ईश्वर का कीर्तन करते समय किसी की हत्या करना महापाप है, इसीलिए मैंने अब तक ऐसा नहीं किया।"

भंगाराम को पता न था कि गौंडन वस्तुत: केशव-कीर्तन के द्वारा अपने भांजे केशवन उण्णित्तान का ही स्मरण करता रहता था।

कार्यक्कार ने भंगाराम को धिक्कारा कि उसको दिये गये सब उपदेश निष्फल गये। यह सुनकर वह कार्यक्कार के चरणों पर गिरकर रो पड़ा। कार्यक्कार ने उसे समझाया और जाने की अनुमति दी। परंतु भंगाराम कुछ और कहने के ध्येय से खड़ा ही रहा तो कार्यक्कार ने पूछा, "मामला क्या है ?"

भंगाराम—"स्वामीजी। अपराध क्षमा करें। गौंड गुरु का इधर कोई नया दुश्मन भी पैदा हो गया है। वे दांत पीसते और दाढ़ी-मूंछ के बाल नोंचते हुए बार-बार कहते हैं कि एक और हत्या करके ही टीपू के दल में शामिल होंगे। शत्रु का नाम. . . .।"

कार्यक्कार ने अनुमान कर लिया कि कष़क्कूट्टम् की गुप्त निधि से वंचित करने के लिए गौंडन ने उसी को अपना नया शत्रु मान लिया है। भंगाराम ने यह बात स्वीकार की।

कुंचैक्कुट्टि पिल्लै—"तो फिर मैंने जो कुछ तुमसे कहा है उसे भूल जाओ। वह खुद हमारे पास आयेगा। तुम चलो। अगर कहीं और शरण न मिलें तो यहीं आ जाना।"

उत्तरी दिशा में जाने के लिए जलयान पर सवार होने के पहले दीवानजी ने एकाध को छोड़कर राजमहल के सारे दरवाजों में ताला बंद करके मुहर लगायी। खुले रह गये दरवाजों पर दोगुना सख्त पहरा बिठाया। अभी तक कोई भी अपनी इच्छानुसार महल के अहाते में प्रवेश कर सकता था, अब यह असंभव हो गया।

अहाते में प्रवेश पर नियंत्रण लगा तो शुरू में इसका विरोध हुआ। प्रथम विरोध राजधानी के रसियों द्वारा किया गया। दूसरा नर्तकियों का। अंत में महल के कर्मचारी भी दबे स्वर में अपनी नाराजी जताने लगे। महाराजा ने कर्मचारियों के प्रधान को बुलवाकर कहा, "हमने कंठीरव का प्रयास स्वयं देखा है। कोई मदारी यहां घुस आये तो तुम लोग बैठ तमाशा देखने में व्यस्त रहोगे। तुम्हें क्या पता समय कितना बदल गया है ? नैतिक युद्ध की मर्यादा का युग समाप्त हो चुका है। अब सम्राट और राजा गूढ़-युद्ध के जरिये विजय की कामना करते हैं। कुछ धनलोभी व्यक्ति धन के लिए उनके सहायक बनकर उनके आदेशों का पालन करते हैं और विभिन्न भूमिकाओं में काम करने निकल पड़ते हैं। अच्छी तरह सोच-विचार व परीक्षा करके विश्वास में लिये गये ईमानदार अधिकारी जब कोई अत्यंत आवश्यक प्रबंध करते हैं तब हम उसमें दखल नहीं देते। आप लोग कृपा करके अपने-अपने घर जायें। अगर कार्यक्कार का दिल दुखाऊं तो उन्हें इस बात का रंज होगा कि हमने उन पर अविश्वास किया। हम यहां खा-पीकर आराम की नींद सोते हैं, पर कितने ही लोग घोर वन में बड़ी झील के किनारे, कांटों व कीचड़-भरे गड्ढों में कष्ट भुगत रहे हैं। जो थोड़ी सी असुविधा भी सहन करने के लिए तैयार नहीं उन्हें क्या कहा जाये।" महाराजा की बातें सुनकर आंदोलनकारी शांत हो गये।

गौंडन ने तिरुअनन्तपुरम् में फिर से अपनी व्यापारी संस्था स्थापित की। उसके अनुयायियों की संख्या कई गुनी बढ़ गयी थी। स्वदेशी एवं विदेशी शस्त्रधारी तिरुअनन्तपुरम् नगर में बड़ी संख्या में दीख पड़ने लगे। सावित्री के अपहरण की खबर सुनकर नंतियत्तु परिवार के शुभचिंतक उत्तेजित हो उठे। दक्षिण तिरुविंताकूर के लोग भी घबरा गये। महाराजा ने कुंचैक्कुट्टि पिल्लै से पूछा, "कार्यक्कारजी, हम यह क्या सुन रहे हैं ? यह गौंडन क्यों शनीचर की तरह अपनी टेढ़ी चाल से बाज नही आता ? यह सोचकर उसे छोड़ दिया था कि खुद कहीं दूर चला जायेगा, पर वह तो फिर से यहां आकर हमारे सर्वनाश का शकुन साबित हो रहा है।"

"लगता है वह लोगों की आंखों में धूल झोंककर कुछ उड़ा ले जाने को आया है।" कार्यक्कार ने कहा।

महाराजा ने पूछा, "क्या राजघोषणा के अनुसार उसे विदेशी होने के नाते बंदी नहीं

किया जा सकता ? इस पर कुंचैक्कुट्टि पिल्लै ने कहा, "वह एक बड़ा व्यापारी है। कंपनियों और नवाबों का आदेश लेकर चलता है। अन्नदाता की भी अभिलाषा है कि यहां परदेशियों का व्यापार फूले-फले।"

महाराजा ने जब कहा कि इस अशुभ को हटाये बिना किसी को चैन नहीं मिलेगा तब कार्यक्कार ने कहा, "जैसी आज्ञा। अन्नदाता को सूचित करना दास की जिम्मेदारी है। दीवानजी और उण्णित्तान कार्यक्कार में अनबन है इसलिए हम अगर कुछ कर डालें तो सचाई सामने आने पर उन दोनों में महाभारत मच जायेगा। उस समय अन्नदाता अगर फरमायें कि यह सब नहीं करना चाहिए था तो बंदा कहीं का नहीं रहेगा।"

सावित्री की चर्चा करते हुए महाराजा बोले, "तुम बड़े-बड़े चमत्कार किया करते हो। उस कन्या का पता लगाकर मुझे सौंप दो। केशवन और उण्णित्तान को एक दूसरे से मिलाने का मौका हमें मिले।"

एक पल बाद महाराजा ने पूछा,"सावित्री किस प्रकार और किधर गयी होगी ? अच्छी तरह सोचकर बताओ," तो कार्यक्कार कुछ देर तक ध्यानमग्न हो गया। इसके बाद विजयपूर्वक "अन्नदाता" संबोधन करते हुए उस स्थान का नाम बताया जहां सावित्री उस समय हो सकती है। साथ ही उसने प्रार्थना की कि उसकी भविष्यवाणी गलत भी हो सकती है, इसलिए किसी तीसरे व्यक्ति को उसकी गंध तक नहीं लगनी चाहिए। महाराजा का सिर एकाएक ऊपर उठा, माना वे अचानक हद से ज्यादा लंबे हो गये हों। वे स्थान-काल भूलकर आकाश की ओर ताकते खड़े रहे। फिर नाक पर उंगली रखकर खटखटाती आवाज में कहा, "कुंचैक्कुट्टि। तुम पागलों जैसी बातें क्यों कर रहे हो ?"

कार्यक्कार ने उत्तर दिया– "जो तथ्य दिखाई दिये उसी के आधार पर निवेदन किया है। वैसे सचाई का तो भगवान को ही पता है।"

महाराज—"ऐसा कैसे हो सकता है ? बड़ी विकट बात है। पराया घर तक जिस कन्या ने न देखा हो वह उस असुर दल के बीच मे कैसे रह पायेगी ? हमारी प्रजा होने का नाटक करनेवाले इतने हैवान हो गये ! हाय ! हाय ! अभिजात कुल और जाति का गौरव भुला देनेवाली नीचता को हम क्या कहें ? कैसी सजा दें ? जहां देखो वहीं लोगों के संबंध हमें झंझट में डाल देते हैं।"

कार्यक्कार ने कहा कि अन्नदाता की भक्ति एवं पुण्य-प्रताप उस कन्या को सुरक्षित रखेंगे। इस पर महाराजा ने यों कहा,"कभी हमारे दखल देने की जरूरत पड़े तो फौरन सूचित करना। राज्य को गिरवी रखने की बात छोड़कर और कोई भी समझौता करने को हम तैयार हैं। उस कन्या के लिए हम कोई भी रकम खर्च करने को तैयार हैं।

महाराजा ने आगे कहा, "ज्यादा शोर-गुल के बिना ही विद्रोह को दबा देना। उसके लिए औरों की अनुमति की जरूरत नहीं है।"

गौंडन के वध की अनुमति पाकर कार्यक्कार खुश हुआ।

त्रिविक्रमन दीवानजी के आज्ञानुसार मीनाक्षी अम्मा से मिलकर कुंचैक्कुट्टि पिल्लै को खोजते हुए राजमहल में आया। महाराजा के शयनकक्ष की सीढ़ियों के पास पहुंचा तो कुंचैक्कुट्टि पिल्लै को देखा। पीठ के बल लेटे मानो वह स्वप्नों की दुनिया में खोया हुआ था। उसने आवाज करके कार्यक्कार को जगाने की कोशिश की, पर वह नहीं जगा। उस पर त्रिविक्रमन ने उसे हाथ लगाकर उठाने की चेष्ठा की। पांव नीचे टेककर अपनी बाहें कार्यक्कार के शरीर के नीचे घुसाकर उसने उसे हिलाना चाहा। मगर कार्यक्कार का बदन रंच भर भी न हिला। हाथ बाहर निकलना भी मुश्किल हो गया। इस पर त्रिविक्रमन कार्यक्कार के शरीर पर जा गिरा। कार्यक्कार ने युवक को गले लगा लिया।

कार्यक्कार ने त्रिविक्रमन से पूछा, "क्या सावित्री ने कोई प्रतिज्ञा की थी ?"

त्रिविक्रमन ने कहा, "उसने वचन दिया था कि युद्धभूमि में भी उसकी आत्मा मेरे साथ रहेगी।"

कुंचैक्कुट्टि पिल्लै पुलकित हो उठा। त्रिविक्रमन को लगा कि कार्यक्कार शून्य में कुछ देखने की कोशिश कर रहे हैं।

वह बोला, "मामाजी ! बताइए। वह पाताल में होगी तो भी धरती फोड़कर मैं उसे ले आऊंगा।" आंसू बहाते उस युवक को कार्यक्कार ने समझाया—"प्रभु की लीला देखकर मैं चकित हूं। जिस शक्ति ने उस कन्या से तुम्हारे सामने प्रतिज्ञा करायी उसी शक्ति की वंदना करो। वही शक्ति तुम दोनों को मिलायेगी। जाओ, पेरिंचक्कोड जाकर कुछ करो। पिताजी से मिलकर शीघ्र ही युद्धभूमि चलो। सिर्फ इतना समझकर कुंचैक्कुट्टि का आशीर्वाद ग्रहण करो कि दीवानजी के प्राणों की सुरक्षा करनेवाला देश का बड़ा उपकारी होगा।"

गौंडन का इरादा समझने के बाद कार्यक्कार उसकी परीक्षा लेने के इरादे से चारों ओर निगाह रखने लगा। सिपाहियों का एक दस्ता गौंडन की व्यापारिक संस्था को घेरे हुए पहरा दे रहा था। युद्ध के दिनों में विदेशी व्यापार-संस्था की सुरक्षा के नाम पर यह प्रबंध किया गया था। कार्यक्कार की चतुराई गौंडन की समझ में आ गयी। उसने उसका उपाय भी ढूंढ़ निकाला।

कुंचैक्कुट्टि पिल्लै ने त्रिविक्रमन को जिस दिन देखा उसके दूसरे दिन रात को उसके गुप्तचरों ने गौंडन की छावनी को घेर लिया। भंगाराम राजमहल में कार्यक्कार के पास आ गया। गौंडन की व्यापारिक संस्था की कीमती वस्तुएं राजकोष के तहखानों में लायी गयीं। गौंडन को वंचियूर की छावनी में रखा गया।

दूसरे दिन सुबह छावनी से गौंडन के गायब होने के विषय में कई तरह की अफवाहें

फैलीं। कार्यक्कार का उद्देश्य था टीपू को लिखे गये खत पर गौंडन से दस्तख्त कराना, फिर उसे जेल में डाल देना।"

पत्र तैयार करके उस पर दस्तखत कराने के लिए कुंचैक्कुट्टि पिल्लै कुछ हथियारबंद सैनिकों के साथ वंचियूर के पांडा के अड्डे की ओर चला। पूरे रास्ते में ऊंचे कंटीले पौधों के झाड़ थे, जिस कारण वे एक दूसरे को देख नहीं पाते थे। लताओं को तलवार से काटते हुए दोनों तरफ हटकर रास्ता बनाना पड़ता था। रास्ते में लाशें पैरों से टकरा रही थीं। ये लाशें उन लोगों की थीं, जिन्हें कार्यक्कार ने गौंडन पर निगरानी रखने के लिए नियुक्त किया था। गौंडन वहां से गायब था, परंतु कार्यक्कार के सामने एकाएक एक भीषण मूर्ति प्रकट हुई। छाते सा बृहदाकार जटाजूट, गरदन से नाभिदेश तक लटकी लंबी दाढी-मूंछें, टखने को छूता काला अंगरखा, त्रिशूल आदि धारण किये हुए खड़ा वह व्यक्ति बहुत लंबा चौड़ा था। कार्यक्कार ने कई बार तलवार भांजी, किंतु वह मूर्ति हर बार पैंतरा बदल कर या उछलकर वार से बच जाती। उसे जरा भी चोट नहीं लगी। फिर वह मूर्ति भीषण अट्टहास करती झाड़ों में गायब हो गयी। गायब होते- होते उसने भयंकर स्वर में कहा—"ईश्वर के सिवा और कौन पांडा को पकड़ सकता है।"

28
गलतफहमी की चरम सीमा

युद्ध के लिए रसद जमा करने का दायित्व छोड़कर तिरुअनंतपुरम् जाने और राजकोष का दायित्व लेने की जो आज्ञा दीवानजी ने दी, उसे केशवन उण्णित्तान ने महाराजा के ही आदेश के रूप में स्वीकार कर लिया। उस जमाने के रिवाज के अनुसार कोट्टारक्करा आदि स्थानों के कई लोग उण्णित्तानजी के आश्रित होकर कार्यस्थल पर रहते थे। उनमें से दो शीघ्रगामी व्यक्तियों को सूचना देने के लिए नंतियत्तु भेजा गया। दूसरों को साथ लेकर उण्णित्तान तिरुअनंतपुरम रवाना हो गये। कोटंता आशान को उण्णित्तान का अनुगमन करने की आजादी देने के लिए जेल से मुक्त कर दिया।

केशवन उण्णित्तान घुड़सवारी में कच्चे थे। इसलिए घोड़े को संभालने के लिए कोटंता उनके साथ चल रहा था। चुगली खाने एवं दीवानजी के विषय में उण्णित्तान की गलतफहमी बढ़ाने तथा उन्हें खूब उकसाने की सुविधा प्राप्त करने के लिए इस यात्रा का कोटंता ने खूब उपयोग किया। उसके कथन का सारांश यही था कि कोटंता और उण्णित्तान को छोड़ शेष सब बड़े पापी हैं। चिलंपिनेत्तु भवन पर पहुंचते-पहुंचते उण्णित्तान की मुखाकृति रौद्ररस की प्रतिमूर्ति हो गयी थी। आशान चालाकी से उण्णित्तान के सामने से खिसक गया।

मीनाक्षी अम्मा बेटी का नाम लेकर रोती-रोती, ईश्वर की दुहाई देती एकदम शिथिल पड़ी हुई थीं। कुंचि और दूसरे नौकर उण्णित्तानजी के आगमन की सूचना देने उसके पास दौड़े आये। उसका चेहरा कागज सा सफेद हो गया। नौकरों ने भी आंसू बहाये। उण्णित्तान को क्रुद्ध भाव से कमरे में प्रवेश करते देख वे खिसक गये। उण्णित्तान ने एक बार पत्नी को सिर से पांव तक देखा और क्रूर मौन धारण किये रहे। थोड़ी देर बाद बोले, "बस करो नखरे। चुपचाप बगल के मकान में अपना आवास बदल लो। और जो भी हो, भूखों मरना नहीं पड़ेगा। अकेली रह सकती हो।"

मीनाक्षी अम्मा का गला रुंध गया। सुबकती हुई बोली, "हाय ! हाय ! क्या ऐसी बातें सुनाने के लिए ही आप आये हैं ? बताइए, हमने क्या अपराध किया है ? उसके बाद मुझे मार डालिए। मेरी बेटी को एक बार बुलवा दीजिए। मैं एक बार उसका मुंह देखकर इस दुनिया से कूच कर जाऊंगी।"

उण्णित्तान—"छि: छि: मैं ऐसा करने में असमर्थ हूं। मां की जिद्दी प्रकृति बेटी को भी मिली है। लोगों से दगा करने का फल तो तुम्हें भोगना ही पड़ेगा। रोओ तो ऐसा कि भगवान के वहां तुम्हारी पुकार सुनी जाये। जो रुदन वहां तक नहीं पहुंचता, वह केवल कंठ का व्यायाम होता है।"

दुख और क्षोभ से कांपते हुए मीनाक्षी अम्मा ने कहा, "हाय ! मेरे स्वामी अपने मुंह से आप ऐसे शब्द न निकालें ! मुझे शाप न दें। आप पवित्र महापुरुष हैं। ऐसा लांछन मुझ पर न थोपें कि मैं ईश्वर को भी मुंह दिखाने लायक न रहूं। आपका क्रोध और विद्वेष आगे भी मैं सहन कर लूंगी। भगवान की कृपा रही तो एक न एक दिन सचाई सामने आ जायेगी।"

उपहास करते हुए उण्णित्तान बोले, "बिल्कुल ! कब्र में पांव लटके हैं, फिर भी शासन करने की वाचालता कम नहीं हुई।"

मीनाक्षी अम्मा हथेलियों से कान बंद किये चुप पड़ी रही।

उण्णित्तान—"क्यों, खामोश क्यों हो गयीं। त्रिविक्रमन यहां आया था न ? यहां उसका क्या काम ? जो मेरा विरोधी है, उसका स्वागत सत्कार क्यों किया तुमने ?"

मीनाक्षी—"आया था, सावित्री का पता. . . "

उसकी बात बीच में ही काटकर उण्णित्तान ने प्रश्न किया–"उसका ब्याह किस दिन और कहां पर हो रहा है ? मुझे एकदम बुद्धू न समझना। बताने से डरती क्यों हो कि त्रिविक्रमन के पिता तंपी के यहां गांधर्व विवाह संपन्न कराने के लिए बेटी को भेजा है। मैं तुम लोगों का कौन हूं ? तुम्हारे सगे तो दीवानजी हैं, जिनसे प्रेम दिखाना ही तुम्हें पसंद है।"

अपमान जब सहन करने की सीमा को पार कर गया तब मीनाक्षी अम्मा के मुंह से अनजाने ही "छि:" शब्द निकल पड़ा। उण्णित्तान को लड़ने का कारण मिल गया। उसने अनेक श्लोकों व तर्कों का उद्धारण देते हुए लंबा भाषण दे डाला। मीनाक्षी अम्मा ने पश्चिमी भवन को जाने के विचार से उठते हुए खाट की पाटी हाथ से थामी। उस समय उसकी देह पर और कोई गहना न था। पर उसकी उंगली में पड़ी हीरे की अंगूठी भी उण्णित्तान की नज़र से नहीं छिपी। गौंडन ने दाम लेने का वादा करके वह अगूंठी उसे दी थी। गौंडन ने वैसी ही एक अंगूठी दीवानजी को बेची थी। दीवानजी से पिछली मुलाकात के समय उण्णित्तान ने उनकी उंगली पर हीरे की अगूंठी देखी थी। अब उण्णित्तान इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि दीवानजी ने अपने प्रेमोपहार के रूप में वह अगूंठी त्रिविक्रमन के जरिये मीनाक्षी अम्मा को भेजी होगी।

उण्णित्तान को लगा कि मीनाक्षी अम्मा से दांपत्य संबंध विच्छेद कर देने का समय आ गया। यह अपमान उसे असहय लगा। कांपते और लंबी आह भरते हुए उण्णित्तान

ने कहा," तुम सुखी रहो। मुझे देखने पर ही तुम्हें व्यथा होती है न ?" वह निर्जीव सा बाहर की ओर बढ़ा। मीनाक्षी अम्मा को विश्वास हो गया कि पतिदेव किसी भारी गलतफहमी के कारण मुझसे अंतिम विदा ले रहे हैं। वह हाथ जोड़े हुए पति के चरणों पर गिर पड़ी।

उण्णित्तान सीधे तिरुअनंतपुरम् चले गये। उन्हें लगा कि युद्धक्षेत्र या वन में प्राण देना ही शास्त्रानुसार मुक्तिमार्ग है। उन्होंने महाराजा के दर्शन करने की अनुमति मांगी।

महाराजा का दर्शन होते ही उन्होंने निवेदन किया, "दीवानजी ने दास को यहां भेजा है। इससे अन्नदाता के दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त हुआ, किंतु इस दास की एक अभिलाषा है।"

नरेश—"कहिए ! संकोच मत कीजिए। पहले की तरह अब भी जो कहना हो दिल खोलकर कहिए।"

उण्णित्तान ने प्रार्थना की कि राजकोष के दायित्व से मुक्त करके उन्हें युद्धक्षेत्र में जाने की अनुमति दी जाये।

नरेश—"ऐसा क्यों ? कोई आप की कन्या का हरण कर ले गया है न ? उसे खोजने के लिए ही दीवानजी ने आप को यह अवसर दिया है। उसका पता लगाने के बाद ही और कहीं जाना।"

उण्णित्तान—"दास आगे भी अन्नदाता के चरणों की ही सेवा करना चाहता है। जो मेरी प्रतिष्ठा व स्वाभिमान के योग्य हो उसी रूप में. . ."

यह सुनकर नरेश को लगा कि उण्णित्तान की मानसिक व्यथा उन्माद का रूप धारण कर रही है। वे उण्णित्तान के दांपत्य-नभ के बादलों से अच्छी तरह अवगत थे। उन्होंने पता कर लिया था कि दीवानजी का कोई अपराध नहीं है और भोले उण्णित्तान की कपोल-कल्पनाएं ही उनके दुख का कारण बनी हैं। वे उण्णित्तान को फिर से युद्धक्षेत्र में भेजना नहीं चाहते थे। तथापि उनको यकीन था कि उण्णित्तान को युद्धभूमि में भेजने से दो उत्तम मित्रों का पुनर्मिलन सुगम हो जायेगा।

महाराजा ने कहा,"सुनिए आप लोगों के निजी झगड़े देश के कार्य के सम्यक निष्पादन में कहीं बाधक न बनें ! वीर जनों के कलहों ने सिंहासनों तक को नष्ट कर डाला है। वीर और शक्तिशाली लोग जिद के कारण आपस में वैर ठान लें तो वे कुछ का कुछ कर बैठेंगे और देश खतरे में पड़ सकता है।"

आगे की बातचीत से महाराजा को लगा कि उनका संदेह बिल्कुल ठीक है। अतः उन्होंने कहा, "युद्ध करने के लिए आपने शस्त्र-शिक्षा नहीं पायी है।"

उण्णित्तान ने कहा कि नरेश के प्रति उनकी अटूट भक्ति शस्त्रशिक्षा की कमी को दूर कर देगी और कृषक आदि उनकी सहायता के लिए आ जायेंगे।

नरेश ने सोचा कि इस हठी और भोले इंसान को थककर वापिस आने दो। उन्होंने तय किया, वे दीवानजी को सावधान कर देंगे कि उण्णित्तान को सुरक्षित रखें।

महाराजा बोले, "स्पष्ट विरोध करना शुभ नहीं होता, इसलिए मैं कुछ और नहीं कहूंगा। हम देश और प्रजा की शांति के लिए श्रीपद्मनाथ के चरणों पर स्वयं समर्पित होना चाहते हैं।

उसका स्वरूप जानने लायक बुद्धि उण्णित्तानजी में है। अतएव अपने दिल की बात स्पष्ट कहूंगा। किसी का दिल बेकार न दुखाना। बेटी का पता लगाकर उसे उसके प्रिय पति से मिला दो। संतान का प्यार पाते हुए शांति व आनंद से लंबी उम्र बिताने के बाद संन्यास ले सकते हो। श्रीपद्मनाथजी की कृपा से सब ठीक होगा। फिर भी तुम्हारी इच्छा को मैं नहीं टालूंगा।

उण्णित्तान ने शुभकामना की—"मेरी युद्धभूमि की यात्रा नरेश तथा मेरे अपने लिए मंगलकारी हो।" और नरेश से विदा ली।

वहां से चिलंपिनषिकम गया। वहां उच्चकोटि के शस्त्रों और अनाजों की राशि जमा थी। उण्णित्तान अस्त्र-शस्त्र तथा रसद लेकर सेना की एक टुकड़ी के साथ युद्धक्षेत्र की ओर रवाना हुआ। पीछे-पीछे कोटंता आशान भी चला।

29

खोया हुआ बेटा वापस आया

मांकाविल माधवी अम्मा का खोया हुआ बेटा अठ्ठारह वर्ष बाद मां के सामने प्रकट हुआ। इन वर्षों में पुत्र की याद में मां के दुख की सीमा न थी।

माधवी अम्मा के लिए पुत्र प्राणों से प्यारा था। जब उसने बेटे के गायब होने की खबर सुनी तब उसकी आंखें उलट गयीं, चेहरा विकृत हो गया और सांस फूलने लगी। उस स्त्री ने आकाश की ओर देखते हुए क्रोध से दांत पीसे, जैसे भगवान को शाप दे रही हो। उसका यह व्यवहार देख उसके सेवकों ने बड़ा हो-हल्ला मचाया। चारों ओर के लोग जमा हो गये। उन्हें जब उस स्त्री के पुत्र के लापता होने की खबर मिली तब वे चारों तरफ उसकी खोज में दौड़े। शाम तक उसका कोई सुराग नहीं मिला। खोजने गये लोग हार कर लौट आये। उस समय भी माधवी अम्मा पूर्वी खंड की सहन में वैसी ही पड़ी थीं। किसी ने बताया कि नदीघाट की सीढ़ी पर एक नन्हे बच्चे के पांवों के निशान दिखाई देते हैं। इस पर माधवी अम्मा को यकीन हो गया कि बच्चा नदी में डूबकर मर गया। मां खुद पानी में डूबने नदी की ओर दौड़ी। उपस्थित लोगों ने बड़ी कठिनाई से उसे उस दुस्साहस से रोका। वह बेटे को पुकार-पुकारकर रोती रही। इसे देख दूसरों की आंखें भी गीली हो जाती थीं। धीरे-धीरे उसकी रोने की शक्ति क्षीण हो गयी। काजल से शोभित रहनेवाली उसकी मोहक आंखें अब सूनी हो गयीं और जिन पत्थरों पर उसके बच्चे के पांव पड़े थे, उन्हें घूरती रह गयीं। सभी को संदेह हुआ कि उसकी मृत्यु हो जायेगी। वह बार-बार नदी के जल की ओर बढ़ती थी, पर वहां एकत्र स्त्रियां उसे रोककर बड़ी मुश्किल से घर ले आयीं।

माधवी अम्मा ज्वराक्रांत हो गयी। तीन मास तक वह बिस्तर पर पड़ी रही। अड़ोस-पड़ोस के स्त्री-पुरुषों ने बड़ी श्रद्धा से उसकी सेवा-शुश्रूषा की और योग्य वैद्यों से उसकी चिकित्सा करायी। माधवी अम्मा अब उठ-बैठ सकती थी। धीरे-धीरे वह चलने-फिरने भी लगी। यमराज के साथ युद्ध में उसकी मदद करनेवालों की तरफ माधवी अम्मा ने बिल्कुल ध्यान नहीं दिया, मगर वैद्यों, तांत्रिकों और नौकरों को जी खोलकर पुरस्कृत किया। सिर्फ एक बूढ़ी नौकरानी को घर में रखकर उसने बाकी सब को विदा कर दिया। अपने और नौकरानी के निर्वाह के लिए आवश्यक संपत्ति व जमीन अपने

पास रखकर बाकी जायदाद उसने गरीबों को दे दी। ग्रामवासी इस बात का ध्यान रखते थे कि चोर-उचक्के माधवी अम्मा को परेशान न करें।

लोगों द्वारा तिरस्कृत यह भूभाग धीरे-धीरे जंगल बन गया। बाहरवालों को वह मकान दीखता तक नहीं था। मोटे-मोटे पेड़ों की डालें एक- दूसरे से लिपटी रहती थीं और परस्पर रगड़ खाकर आवाज करती थीं। टूटी डालों के गिरने से जो कचरा फैला हुआ था, उसमें सांप खूब रमते थे। शिकारियों से निर्भय हो तरह-तरह के पक्षी कलरव करते उड़ते रहते थे। वृक्षों के नीचे की जमीन में गीदड़ों ने अपने अड्डे बना लिये थे। शुरू-शुरू में ग्रामवासी वन से सटे मैदान में गायों को चरने भेजते थे। कुछ दिनों के बाद वहां बाघों का उत्पात बढ़ा तो गायों को भी उधर जाने नहीं दिया जाता था। यह स्थान पेरियार नदी के दक्खिनी किनारे पर था। मांकाविल परिवार का स्नानघाट यहीं था। जब स्नानघाट का उपयोग बंद किया गया तब नदी किनारे भी जंगल सा उग आया। सीढ़ियों पर मिट्टी भर गयी। आसपास नदी के जल में भंवरें बनने लगीं। सरकार ने टीपू का सामना करने के लिए जो 'नेटुकोट्टा' निर्माण किया उससे भी अधिक अभेद्य दुर्ग प्रकृति ने वहां बना लिया था। पास ही झाड़-झंखाड से भरा एक बड़ा मैदान था। वहां से जंगली जीवों को भगाने और पौधों की सफाई करने पर वहां एक अच्छी-खासी सेना पड़ाव डाल सकती थी। इस मैदान की उत्तरी दिशा में मांकाविल भवन था। इसका विविधत् उपयोग नहीं किया जाता था। आकार और कक्षों की संख्या में यह चिलंपिनेत्तु भवन से भी बड़ा था। बड़ी संख्या में तहखाने भी थे। जनश्रुति थी कि इन तहखानों में धन और गुप्त निधि बड़ी मात्रा में संचित थी।

पुत्र को लापता हुए अट्ठारह वर्ष बीत चुके थे। एक दिन पूजापाठ और नाश्ता करके माधवी अम्मा बैठी थी। तभी दाढ़ी-मूंछ बढ़ाये दक्षिणी शैली में धोती पहने, हाथ में शूल लिये एक लंबा सा आदमी वहां आ गया। उसके मुखमंडल पर दुख की छाया थी। कुछ लापरवाही से माधवी अम्मा ने उससे पूछा, "यहां क्यों आये हो ?" आगंतुक ने कोई जवाब नहीं दिया तो माधवी अम्मा ने कहा, "हम गरीबों को कष्ट मत दो। अब भोजन कराने की सुविधा नहीं है।" आगंतुक ने गंभीर स्वर में कहा—"अपना पेट पालने नहीं आया हूं मैं। आप के बारे में कुछ खबरें सुनने को मिलीं। इसीलिए आपकी यथासंभव सहायता करने आया हूं।"

आगंतुक पेरिंचक्कोडन था। वह दयाभरी आवाज में बोला,"हठ मत करो, तुम्हारा बेटा जहां भी होगा, पेरिंचक्कोडन उसे ले आयेगा। चैन से रहो। मेरी प्रतिज्ञा को किसी धूर्त की चिकनी चुपड़ी न मानना। जंगल-जंगल छान मारूंगा। इस जगह को जंगल क्यों बना रखा है ? अगर पेरिंचक्कोडन को इसकी भनक मिल जाती तो वह अपनी तंकच्ची को (प्यारी को) पहले की तरह सोने से लादकर आनंद से रखता।"

माधवी अम्मा ने आगंतुक को सिर से पांव तक देखा। उसे आश्चर्य हुआ कि भगवान ने इस धूर्त युवक को और पागल बनकर संसार को कष्ट देने लिए जिंदा क्यों रखा है ! एक पल बाद माधवी अम्मा को लगा कि संभवत यह पेरिंचक्कोड भवन का स्वामी एवं प्रतापी व्यक्ति है। उसने सोचा कि भगवान ने मेरे पुत्र का पता लगानेवाले आदमी को मेरे पास भेजा है। यह भी किस्मत की बात है। वह बोली, "तुम जो भी हो। जो हुआ वह प्रभु की इच्छा थी। उसे भूल जाओ ! अगर मर्द हो तो मेरे 'पंकी' को ला दो। मांकावु भवन काफी संपन्न है। जितना धन चाहो ले सकते हो।"

पेरिंचक्कोडन—"मुझे धन-दौलत कुछ नहीं चाहिए, पुराना कर्ज चुकाने की जिम्मेदारी मेरी भी तो है। धीरज धरो। बेटे को ले आने के पहले कुछ काम बाकी पड़े हैं। ये स्थान मुझे सौंप दो।"

माधवी अम्मा इसके लिए तैयार न हुई। उसने जिद की— "अगर पुत्र को खोजने तुरंत न गये तो मैं तुम्हारा मुंह भी न देखूंगी !" इस पर पेरिंचक्कोडन ने टीपू के हमले की खबर दी और कहा–"दुश्मन की फौज इस रास्ते से आ सकती है। तुम सब कुछ मुझे सौंप दो ! यहां कुछ पूजा-पाठ कराना होगा। वन की सफाई करके यहां कुछ तैयारियां करनी हैं। खर्चा मेरा। युद्ध जीतने के बाद तुम्हारा बेटा जिंदा होगा तो वही यहां का शासन करेगा।"

माधवी अम्मा ने कहा, "अगर मेरे बेटे को ले आओ तो अपना सब कुछ तुम्हें सौंप दूंगी।"

तभी झाड़ी के भीतर से एक व्यक्ति बाहर आया और पेरिंचक्कोडन को दूर ले जाकर उससे गुप-चुप कुछ बातें कीं। उसने देवकी का कुशल-समाचार भी बताया। माधवी अम्मा को वचन-पालन के लिए देवी की कसम खिलाकर पेरिंचक्कोडन वन में गायब हो गया।

वन में छिपा एक जासूस पूरी बातचीत सुन रहा था।

जब माधवी अम्मा ने सुना कि उसका पुत्र वापस आयेगा तब उसकी निराशा के बादल छंट गये। टीपू के हमले से भयभीत हो कर उस भूभाग के संपन्न लोग गांव छोड़कर दक्षिण की ओर जा रहे थे। नौकरानी से यह खबर माधवी अम्मा को मिल चुकी थी।

उसी दिन एक सुंदर युवक बौद्ध भिक्षु के वेश में माधवी अम्मा से मिलने आया। यह वही युवक था जो पेरिंचक्कोडन और माधवी अम्मा की संतान था ओर काफी दिनों से लापता था।

वह माधवी अम्मा के कमरे के बाहर खड़ा दरवाजे पर उंगलियों से ताल दे रहा था। माधवी अम्मा डर गयी कि कहीं यह कोई टीपू का सैनिक तो नहीं।

उस युवक ने कहा, "ये सभी स्थान देखने के कुतूहल से इधर आया था। यहां भी आ गया। अगर आपको एतराज हो तो चला जाऊंगा। टीपू की सेना आनेवाली है। आपको कोई मदद चाहिए तो बताइए करने को तैयार हूं।"

माधवी अम्मा ने सोचा, किसी अपरिचित की सहायता लेने से खतरा हो सकता है। इसीलिए चुप रही।

युवक फिर बोला, "मैं राजपरिवार में जन्मा हूं। लोगों से मैंने अपनी मां का दुख सुना। विस्तार से जानने के लिए यहां चला आया।"

युवक की उत्तर-केरलीय बोली माधवी अम्मा की समझ में नहीं आयी, किंतु उसके शक्तिशाली व्यक्तित्व और सौंदर्य ने उसे आकृष्ट किया।

युवक ने पूछा, "माताजी ! आपका बेटा इसी नदी में डूबकर मरा था न ?"

यह प्रश्न माधवी अम्मा के दिल को छू गया। उसने उत्तर दिया, "मेरा बेटा नदी में डूब कर नहीं मरा है। उस दिन घबराहट के मारे मैंने ऐसा सोच लिया था। निश्चय ही कोई चोर मेरे पंकी को गहनों के लोभ में अपहरण करके ले गया है। उसे कोई लौटा दे तो, मैं उसे इतनी संपत्ति दूंगी कि वह राजा हो जायेगा।"

युवक ने ठहाका लगाते हुए कहा, "बेटा लौटेगा तो उसे यह नुकसान पसंद नहीं आयेगा।"

माधवी अम्मा ने बताया, "बेटे के खो जाने के बाद मैंने सोचा अब किसके लिए इस धन-संपत्ति को संजो कर रखूं ? यही सोचकर ध्यान देना छोड़ दिया।"

युवक—"क्या आपका बेटा सुंदर था ? उसका नाम क्या था ?"

माधवी अम्मा—"नाम था माधवन। उसे लोरी सुनाते समय में गाती थी—"मधुर माधवा-मतिविमोहना।"

युवक पुलकित हो उठा। उसने सोचा-अपनी असलियत प्रकट करके अपने हक की सारी चीजें क्यों ने ले लूं। किंतु जब उसने अपने वर्तमान बंधन के विषम बिंदुओं के बारे में सोचा तब उसकी ऐसा करने की हिम्मत न हुई। माधवी अम्मा ने पुत्र का मुंह देखने के अतिशय लोभ के कारण ही पेरिंचक्कोडन से की गयी प्रतिज्ञा भूलकर युवक को भी वचन दे दिया।

युवक यह कहते हुए उठा कि उसे सांझ होने से पहले नदी पार करना है। पुत्र के लिए व्याकुल माता को सांत्वना देने के लिए उस युवक ने उसका हाथ अपने हाथ में ले लिया। एकाएक माधवी अम्मा की नसों में जैसे बिजली दौड़ गयी।

युवक ने उसकी हथेलियां उठाकर अपनी आंखों पर रख लीं। इससे अधिक कुछ करने में असमर्थ होने से वह भाग गया। मां "माधवा ! माधवा !" पुकारती हुई वहीं ढेर हो गयी।

30
अतिलोभ अनर्थ का कारण

मांकाव आये हुए व्यक्ति ने पेरिंचक्कोडन को खबर दी कि त्रिविक्रमन दक्षिण तिरुविंताकूर में घूम रहा है। पेरिंचक्कोडन ने वनभूमि में छिपे कुछ सिपाहियों के साथ अविलंब तिरुअनन्तपुरम् को प्रस्थान किया।

पेरिंचक्कोडन ने काफी दिन पहले जो भीषण दुष्कर्म किया था उसके बाद कोट्टारक्करा के कार्यक्कार के आदेश से कंडश्शार (वह छिपे- छिपे लोगों का पीछा करने में माहिर था) उसका पीछा करता रहा। बीच में यह कड़ी टूट गयी। कंडश्शार बीहड़ वन में फंस गया। परंतु जब पेरिंचक्कोडन अनुचरों का एक बड़ा दल लिये उत्तरी तिरुवितांकूर में घूमने लगा, तब कंडश्शार फिर से उसके पीछे लग गया। उसने मांकाव से दक्खिन की यात्रा में कोट्टारक्करा तक उसका पीछा किया और उपलब्ध सूचनाएं कार्यक्कार को दे दीं।

रियासत के दक्षिणी भाग में पेरिंचक्कोडन के पहुंचने के साथ-साथ परप्पांडा का उत्पात भी बढ़ने लगा। जिस दिन कुंचैक्कुट्टि पिल्लै के आदेश से गौंडन को परप्पांडा के अड्डे पर कैद में रखा गया उसी दिन रात को पेरिंचक्कोडन वहां पहुंचा। पेरिंचक्कोडन ने गौंडन को जेल से छुड़ा लिया। इसके बाद परप्पांडा एक नया मोर्चा बनाकर कुंचैक्कुट्टि पिल्लै के इंतजार में रहा। कुंचैक्कुट्टि पिल्लै से वह उलझने लगा तो पिल्लै के साथ आये सिपाहियों ने परप्पांडा की तरफ बंदूक की नाली घुमा दी। यह देख परप्पांडा वहां से छू-मंतर हो गया।

देवकी की दृष्टि जिस दिन त्रिविक्रमन पर पड़ी उस दिन से वह कल्लरक्कल पिल्लै को मानों भूल गयी। यहां तक कि त्रिविक्रमन के बारे में सोचते-सोचते वह अपने को भी भूलने लगी। लक्ष्मी अम्मा ने अपनी बेटी के रोग का कारण समझ लिया। उसने कई धर्मग्रंथों के श्लोक व उदाहरण देते हुए बेटी को समझाया कि अतिशय लोभ अनर्थकारी हो सकता है। कल्लरक्कल पिल्लै त्रिविक्रमन के प्रति प्रणय-ज्वर से आक्रांत देवकी को देखने आया। उसका दृढ़ विश्वास था कि देवकी उसे पति रूप में वरण करेगी। बीमार देवकी को देखने पर पिल्लै की हिम्मत व होशियारी हवा हो गयी। लक्ष्मी अम्मा ने खोटे ग्रहों को ही रोग का कारण माना तो कल्लरक्कल पिल्लै ने कहा, "तभी तो कहता हूं कि मैं इसे अपने घर ले जाऊंगा।"

लक्ष्मी अम्मा—"यह बात नहीं है, बाद में उसे समझा दूंगी।"

कल्लरक्कल पिल्लै की राय में त्रिविक्रमन की बुरी नजर लगने से देवकी बीमार पड़ गयी थी। वह नजर छुड़ाने के लिए ज्योतिषी की खोज में गया। लक्ष्मी अम्मा चिंतित हो उठी कि त्रिविक्रमन के प्रति देवकी के आकर्षण को ताड़ने में असमर्थ उस वज्र देहाती और देवकी का दांपत्य कहीं कौए और हंसिनी का संबंध न साबित हो।

दूसरे दिन देवकी ने सारे आभूषण उतार दिये। उसकी सूरत युवती विधवा की सी लग रही थी। न स्नान करती थी, न भोजन। वह मन ही मन हवाई किले बनाती। उनमें विचरण करती रहती थी। लक्ष्मी अम्मा को पता था कि प्रेम नाखून से खुरचकर निकाल देने की चीज नहीं है। उसे यह समझाकर दबाना होगा कि यह प्रणय सफल नहीं हो पायेगा। अतएव लक्ष्मी अम्मा ने बेटी को डांटा-फटकारा नहीं ।

दूसरे दिन पेरिंचक्कोडन आ गया। उसने देवकी के बीमार होने की बात सुन ली थी। वह अपने परिवार की सारी बातें घर की स्त्रियों के सुपुर्द करके पत्नी व पुत्री के पास जाना चाहता था। इसीलिए थोड़ा विलंब हो गया। पेरिंचक्कोडन बेटी के लिए कोई भी कुर्बानी करने को तैयार था। उसने देवकी को अपनी छाती से लगाकर दुलार से पूछा, "मेरी बिटिया का दिल काहे को छोटा हो गया साफ- साफ बताओ न ?"

कोमल कंठ से देवकी ने पूछा, "पिताजी, यह पांडा कौन है ?"

पेरिंचक्कोडन ने इसका मर्म बताने का आश्वासन दिया और भीतरी कक्ष में जाकर देवकी को अपने से सटाकर बिठाया। फिर उसने पत्नी को आवाज दी। लक्ष्मी अम्मा के दिल को कुछ राहत महसूस हुई। वह आयी तो पेरिंचक्कोडन ने उसका हाथ बड़ी दृढ़ता से अपनी हाथों में लेकर स्नेह से कहा,"जानती हो, क्या-क्या देख-सुनकर आया हूं ? कुछ चीजें जब पक जायेंगी तब देवू को कितनी मीठी लगेंगी। खैर। किस बेवकूफ ने इसे पांडा की बातें सुना दी ?"

लक्ष्मी अम्मा ने कल्लरक्कल पिल्लै को पेरिंचक्कोडन के क्रोध से बचाने का निश्चय किया और कहा, "यों ही बैठे-बैठे, पता नहीं कहां से सुन लेती है ?"

पेरिंचक्कोडन बोला, "बिटिया सुनो। पांडा बड़ा ही स्वामीभक्त, नमकहलाल है। कौन माई का लाल है जो उसे हाथ लगा सकता है। जो उसे मारने और खत्म करने की बात करते हैं, वे बकवास करते हैं। वह शासकों की ईंट का जवाब पत्थर से देता आया है। चोर को पकड़ न पाये वह कुत्ता किस काम का ? आज कौन उसका बाल बांका कर सकता है ?"

फिर उसने लक्ष्मी अम्मा से पूछा, 'सुना है तिरुवनंतपुरम् में, इधर कोई आया था ?

लक्ष्मी अम्मा ने मुस्कुराते हुए बताया कि कल्लरक्कल पिल्लै त्रिविक्रमन को लेकर

आया था। मन की खुशी प्रकट किये बिना पेरिंचक्कोडन ने पूछा, "उस गोरे सुअर को तुमने देहलीज के भीतर क्यों कदम रखने दिया ?"

देवकी ने उसके होंठों को, "पिताजी ! पिताजी !" पुकारते हुए अपनी उंगलियों से बंद किया।

इस पर पेरिंचक्कोडन ने कहा, "मीठा चावल देख कर छोटा चूहा भी खाने को लपकता है। शायद यही बात थी।" फिर पत्नी से बोला, "उस कल्लरक्कल को थोड़ी दूरी पर ही रखना।" पेरिंचक्कोडन ने देवकी की पीठ सहलाते हुए कहा, "देवू, तुम्हारी उस माखन-मूरत को कल या परसों लाकर तुम्हारे सामने न खड़ा कर दिया तो नाम नहीं।"

पेरिंचक्कोडन का वाक्य पूरा भी न हुआ कि देवकी के चेहरे पर से बादल छंट गये और मुस्कान छा गयी। यह देखकर पेरिंचक्कोडन बोला, "लो ! मेरा मंत्र काम कर गया। वाह ! मां तो सिर्फ नहलाने-खिलाने के लिए होती है। मन मोहन प्यारे को ले आने के लिए तो पिता की ही जरुरत पड़ती है।"

पेरिंचक्कोडन ने अपने कुछ अनुचरों को बुलवाकर त्रिविक्रमन की गतिविधियों का गुप्त रूप से पता लगाने की व्यवस्था की।"

उसकी सैनिक टुकड़ी का बड़ा भाग उत्तर तिरुविंताकूर में था, इसलिए पेरिंचक्कोडन अपनी स्थानीय सेना की ताकत बढ़ाने का उपाय सोचने लगा।

लक्ष्मी अम्मा ने कयास लगाने की कोशिश की कि पेरिंचक्कोडन के चेहरे पर शिकन क्यों पड़ रही है। उसने उसे समझाया—"जान बूझकर किसी बड़े खतरे में मत फंसियेगा। पढ़ा है न, कि तारा की बातों को ठुकराने से कैसे बालि खतरे में पड़ गया था।"

पेरिंचक्कोडन ने पत्नी को उपदेश दिया—"इस मामले में अड़चन मत डालो। बालि की बेवकूफी से ही उसका सिर धड़ से अलग हो गया था। उसकी तरह जानबूझकर पेरिंचक्कोडन खतरे में नहीं पड़ेगा।" फिर भी वह अपना वाक्य पूरा नहीं कर सका, जिसमें त्रिविक्रमन को ले आने का वादा किया गया था।

लक्ष्मी अम्मा—"मुसीबत मोल लेने के लिए कमर मत कसिए। आपने जो लोककथा सुनाई थी उसका स्मरण रखिए। जिस पिता ने कहा था कि वाल्लियूर कुलशेखर पेरुमाल को अपनी बेटी के लिए ले आकर खड़ा कर देगा वह अपनी बेटी के सामने उसकी लाश को ही पेश कर सका। आप उन पर टूट पड़ेंगे तो वे सामना करेंगे। आपको बड़ा क्रोध आयेगा। फिर क्या होगा, भगवान जाने।"

लक्ष्मी अम्मा ने देवकी से भी अनुरोध किया पर देवकी सहमत न हुई। लक्ष्मी अम्मा अपने मन के आईने में भावी संघर्ष व सर्वनाश का दृश्य साफ देख रही थी। उसे गहरा दुख हुआ। वह सती पतिदेव के झबरीले केशों को संवारती खड़ी रही। पेरिंचक्कोडन ने विभिन्न दिशाओं में अपने लोगों को भेजने के बाद कुछ पहलवानों को बुलवाया।

कुंचैक्कुट्टि पिल्लै ने वेलुतंपी को भेजे हुए पत्र में सुझाव दिया था कि एक खास शुभ दिन पर ही त्रिविक्रमन को युद्धसंबंधी कर्तव्यों से छुट्टी दी जाये। उसनें वेलु तंपी को एक और गोपनीय सूचना दी थी।

नियत दिन जब हल्की धूप होने लगी, तब पद्मनाथपुरम् से घोड़े पर उत्तरी दिशा में त्रिविक्रमन ने प्रस्थान किया। उसके साथ दो और घुडसवार थे। उन्हें पांडा के अड्डे को दो हिस्सों में बांटनेवाली बड़ी सड़क से आगे बढ़ना था।

इस सड़क की एक तरफ टीला था जो कुछ ढलुआ होते-होते फिर ऊंचाई की तरफ ले जाता था। वहां प्रकृति की बहार थी। हरे-भरे पेडों की कतारें थीं। दूसरी तरफ चट्टानें, पत्थरवाला मंदिर और गहरी पोखर थी। यहीं पर पांडा का अड्डा व दरबार थे। कंटीले पौधों ने यात्रा को कष्टदायक बना दिया था। यहां के ग्राम मंदिर की दीवारों पर दुर्देवताओं के चित्र हैं। लगता है वह रौद्र दुर्गा का मंदिर है। पोखरे में मेढ़कों की टर्र-टर्र अविराम सुनाई देती थी। इस भीषण सुनसान जगह से सभी दूर रहते थे।

त्रिविक्रमन और उसके साथी तीन चार घंटों की यात्रा करके इस स्थान पर पहुंचे थे। घोड़ों को आराम मिल चुका था। सो वे तेजी से दौड़ रहे थे। घुड़सवार घोड़ों की पीठ से पेट सटाये बैठे थे। घोड़ों की टापों की आवाज दूर तक सुनाई दे रही थी। घोड़ों की टाप पड़ने से उठी धूल वृत्ताकार फैलती दिखाई दे रही थी। उस दल के नेता का आदेश दूर तक सुनाई पड़ता था।

एकाएक परप्पांडा ने सामने प्रकट होकर घुडसवारों को रोका। दायें हाथ में लंबा त्रिशूल, बायें हाथ में बड़ी ढाल, कमर में तलवार और बंदूक। उसके कमरबंद की जंजीरें झन-झन कर रही थीं। लंबी दाढ़ी, घनी मूंछें, तमतमायी आंखें, झबरे बाल, पैरों में लोहे के कड़े गले में शंख व सीपियों की मालाएं— यही उसकी वेश-भूषा थी। वेश-भूषा देखकर त्रिविक्रमन को पेरिंचक्कोडन की सूरत याद आयी। चट्टानों और पोखर की दिशा से अचानक एक फौजी टुकड़ी आ गयी। त्रिविक्रमन का घोड़ा रुक गया। उसके आदेश से उसके साथी घुड़सवार फौजी टुकड़ी से जूझ पड़े। त्रिविक्रमन खुद घोड़े के रकाब पर खड़ा हो गया। घोड़े का आकार जैसे और लंबा होने लगा। उसके नथुने फड़क उठे। आंखें चौड़ी हो गयीं। बागडोर हाथ में कसे हुए त्रिविक्रमन थोड़ा आगे झुका। इस पर उस जानवर ने दांतों को बड़ी क्रूरता से बाहर दिखाते, दोनों कानों को एक दूसरे से सटाये, जमीन छूने पर भी न छूते, पांडा के सिर के ऊपर से उछाल मारी। पीछे खड़े भूतगणों को तहस-नहस करते हुए वह उत्तरी दिशा में तेजी से बढ़ा। थोड़ी दूर आगे बढ़ने पर घोड़े को रोकना पड़ा। त्रिविक्रमन ने घोड़े को मोड़कर दक्खिनी तरफ खड़ा किया। पांडा अपनी पराजय पर लज्जित होकर भी जोर से अट्टहास कर उठा। उसने आगे उछलते घोड़े को लक्ष्य करके बंदूक चलायी। गोली लगने से घोड़े का एक पांव बेकार हो गया।

पेरिंचक्कोडन के भूतगणों में से कुछ लोग त्रिविक्रमन के साथियों की तरफ बढ़े और दूसरे उसकी तरफ। त्रिविक्रमन घोड़े से उतरने लगा। यह देख पांडा विजयोन्माद से अट्टहास व नृत्य करता युवक की तरफ बढ़ा।

इतने में शिकारी कुत्तों का एक बड़ा दल पेड़ों की आड़ से अपने भयंकर दांत बाहर दिखाता, हांफता, भूंकता बाहर आया। वे पांडा और उसके साथियों पर टूट पड़े, उन्हें काटने, बोटी-बोटी करने लगे। बंदूक, भाला व तलवार लिये नायारियों[1] ने पांडा के दल को घेर लिया। ये नायारि और शिकारी कुत्ते त्रिविक्रमन के पिता वेलु तंपी की आज्ञा से तैयार रखे गये थे। पांडा के अनेक सहयोगी बंदी बनाये गये। कई जान लेकर भागे। कुछ कुत्तों के काट खाने से मरे।

पांडा को संदेह हुआ कि अब मृत्यु से भी भीषण अपमान होगा। वह धरती पर शूल गड़ाये खड़ा रहा। शिकारी जब पांडा के सामने आये तब उसका दानवाकार रूप और वैसी ही वेश-भूषा देखकर ताज्जुब में पड़ गये। पांडा क्षणभर खड़ा रहा। शिकारियों या शिकारी कुत्तों ने उसे चोट नहीं पहुंचायी तो वह समझ गया कि इस हमले की व्यवस्था करनेवालों ने उसे न मारने की आदेश दे रखा है। अपने अनुचरों की मौत और कैद देख उसने लंबी आह भरी। उसकी आंखों से आंसू बह चले। अब तक उसे कोई हरा नहीं सका था। आज उसने अपने सामने खड़े लोगों की तरफ देखकर शूल का स्पर्श करके संकेत से उनका अभिवादन किया। अगले ही क्षण वह एकाएक उछला और घाटी के जंगल में जा पहुंचा। वह एक पेड़ से दूसरे पेड़ पर कूदता जा रहा था तो पेड़ों की डालें हिल उठीं। शिकारी कुत्ते मारे गये। मगर पांडा को कैदी नहीं बनाया जा सका।

---

1 एक ग्रामीण उपजाति जो शिकारी कुत्तों का संचालन करती है।

31
शिरोभंजक संधिवार्ता

टीपू सुलतान ने सोचा कि तिरुविंताकूर के शासकों के साथ कपट चाल से सुलह की बातचीत करनी चाहिए। उसी के जरिए विजय पायी जा सकती है। इसके पहले भी दो बार संधिवार्ता चली थी। दोनों बार टीपू के प्रतिनिधि सीधे महाराजा से मिले थे। अब की बार यही निश्चय हुआ कि टीपू का प्रतिनिधि अजितसिंह, दीवान केशव पिल्लै से सुलह की बातचीत करे।

योजना यह थी कि इस संवाद के अंत में अजितसिंह का सेवक दीवानजी का वध कर देगा। कपट के आरोप से बचने के लिए अजितसिंह उस सेवक का भी वध करेगा। टीपू ने खुद यह योजना बनायी थी।

इस काम के लिए टीपू ने छोकरा डूंडिया को चुना था। मामूली सेवक होने के बावजूद छोकरा डूंडिया टीपू के दरबार में एक मंत्री-सा सम्मानित था। वह अनिच्छापूर्वक टीपू के आदेश से अपनी जान निछावर करने को तैयार हुआ।

महाराजा ने दीवानजी को संधिवार्ता के विषय में उचित निर्णय लेने का पूरा अधिकार पत्र द्वारा दे दिया था। पत्र में यह भी लिखा था कि केशवन उण्णित्तान कुछ लोगों को सेना में भरती कराने के लिये ला रहा है। महाराजा ने सलाह दी कि उण्णित्तान को लड़ाई में घायल होने से बचाया जाये। पत्र में कुंचैक्कुट्टि पिल्लै के इस स्थायी निर्देश का भी जिक्र था कि टीपू की तोपें मांकोपिक्कल में स्थापित न होने पावें।

संधि-वार्ता कोचिन रियासत के चेंदमंगलम् नामक गांव में की गयी। वह सुहावना भूभाग झील और नदी से घिरा तथा नारियल के बागानों से भरा हुआ था। नदी किनारे के जंगल की सफाई करके एक अहाते में संधिवार्ता के लिए अस्थायी आवास खड़ा करके उसे खूब सजाया गया था। सरकारी अधिकारियों, प्रमुख धनी गृहस्थों और दर्शकों के लिए जरूरी सुविधाएं उपलब्ध करायी गयी थीं। दीवानजी के लिए मुलायम गद्दे, मसनद और तकिये सजाकर उन पर रेशमी चादर बिछायी गयी थी। दीवानजी तिरुअंनतपुरम् से जिस पोशाक में निकले उसी में यहां भी बैठे थे। कर्नाटक सेना के कप्तान फ्लोरी भी हाजिर थे। त्रिविक्रमन घुड़सवार की पोशाक में दीवानजी का अंगरक्षक बना हुआ था।

अजितसिंह एक विशेष रूप से निर्मित शानदार बजरे में घाट पर पहुंचा तो रियासत

के सर्वाधिकारी और सेनापतियों ने मिलकर उसका स्वागत-सत्कार किया और उसे संधि-वार्ता के स्थल तक पहुंचाया। अजितसिंह के पीछे शस्त्रधारी छोकरा डूंडिया चल रहा था। अजितसिंह रत्नखचित राजकीय वेशभूषा से सज्जित था। दीवानजी ने टीपू के प्रतिनिधि के सम्मान में रेशमी छाता खोल रखा था। मैसूर का मखमली छाता भी खोला गया। उसके बाद सम्मानसूचक बाजे बजे और आतिशबाजी पेश की गयी। सर्वाधिकारी अजितसिंह को दीवानजी के कमरे की तरफ ले गया। दीवानजी ने अजितसिंह से हाथ मिलाया और उसे बिठाने के बाद खुद बैठ गये। छोकरा डूंडिया अंगरक्षक के रूप में अजितसिंह के पास खड़ा होने के बजाय दीवानजी के पास जाकर खड़ा हो गया। अजितसिंह ने कप्तान फ्लोरी की तरफ घूरती नजरों से देखा। फ्लोरी चलने लगा तो दीवानजी ने अपनी आंखों से ही निर्देश दिया कि अपने लिए नियत स्थान पर ही बैठे रहिए।

टीपू सुलतान के प्रतिनिधियों ने पिछली संधि-वार्ता में निम्नलिखित शर्तें रखी थीं:

"अंग्रेज कंपनी से नाता तोड़ दें या अंग्रेज कंपनी से खरीदे किलों को कोचिन रियासत का अंग स्वीकार करके उन्हें कोचिन को वापस कर दें। तिरुवितांकूर नरेश को टीपू सुलतान की अधीनता स्वीकार करके उन्हें खिराज देना होगा।"

ये शर्तें महाराजा को स्वीकार नहीं थीं मगर टीपू ने गलती से समझ लिया कि गरीबी में जीवन प्रारंभ करनेवाले दीवान केशव पिल्लै टीपू की अधीनता मानने को राजी हो जायेंगे। टीपू की इच्छानुसार संधि की शर्तों को दीवान के स्वीकार करते ही तत्काल सुलहनामे पर हस्ताक्षर करने के लिए अजितसिंह तैयार था। यह भी तय हुआ था कि दीवानजी के राजी न होने पर छोकरा डूंडिया तुरंत दीवानजी को मार डालेगा और अजितसिंह छोकरा डूंडिया की जीवनलीला समाप्त कर देगा।

अजितसिंह ने ही संवाद आरंभ किया। थोड़ी देर की बातचीत से ही वह समझ गया कि दीवानजी उसकी बात नहीं मानेंगे। इस पर उसने कहा, "क्या आपकी पूरी सेना हमारे एक भी मतवाले हाथी की चपेट सहन कर पायेगी ?"

दीवानजी—"यह जांचने के लिए ही हम लोगों ने भी इतनी सारी तैयारियां की हैं।"

अजितसिंह—"टीपू सुलतान शेर हैं शेर। वे कसम खा चुके हैं कि अपने घोड़े को आपके मंदिर के ध्वजस्तंभ से बांधेंगे।"

दीवानजी—"यह भी हो सकता है कि घोड़ा मेरा हो और श्रीरंगपट्टण के राजमंडप के स्तंभ से बांधा जाये। कल्पना के साम्राज्य में कोई भी विहार कर सकता है। उसी तरह डींग हांकने की आजादी हर किसी को है। इसके लिए राजगद्दी या राजमुकुट की जरूरत नहीं है।"

अजितसिंह ने जितने भी तर्क दिये उनके उत्तर में दीवानजी ने कहा—"हमने फौज इकट्ठी करके मोर्चाबंदी नहीं की है। हमने पहाड़ व नदियां लांघकर मैसूर की तरफ झांका

तक नहीं है। इसलिए मैसूर मैसूर रहे, तिरुवितांकूर को तिरुवितांकूर रहने दीजिए। जिद करने से तबाही हो जायेगी। आप टीपू सुलतान के राजदूत, सामंत बंधु, सलाहकार एवं कुशल मंत्री की हैसियत से उन्हें उचित समय पर उचित सलाह दें।"

अजितसिंह कुछ देर चुप रहा। उसके बाद वह केशव पिल्लै का हाथ अपने हाथ में लिये उन्हें कक्ष के कोने में एकांत में ले गया और आहिस्ता से कहा, "मंत्रियों में अग्रणी भाई सहाब! सुलतान बहादुर के दिल की बात से आपको आगाह किये देता हूं। इसे खुशामद मत मानिए। शेरे मैसूर आप जैसे दीवान को पाने के लिए अत्यंत अधीर हैं। वे फरमाते है कि आप उस रियासत को हुकूमत खुद संभालें। आपको दीवान पद पर बिठाने के बाद सुलतान अपना सारा वक्त नमाज अदा करने में काटेंगे।"

केशव पिल्लै—"अगर आप हमारे अन्नदाता को पत्र लिखकर इस मतलब का आदेश प्राप्त कर लें, तो इस रियासत की तरह उस रियासत की भी सेवा हम यथाशक्ति करेंगे।"

अजितसिंह ने आवाज़ और धीमी करके कहा, "सुनिए। अगला उपहार हमारी ही सिफारिश के आधार पर आपकी सेवा में प्रस्तुत है। तिरुवितांकूर रियासत का मुकुट क्या आप के सिर को शोभा नहीं देगा ? सुलतान बहादुर की ही नहीं, आपके बंधुजन तक की सम्मति है कि वह मुकुट आपके सिर पर शोभित होना चाहिए। सिंधिया से लेकर बहुत सारे राजा इसे स्वीकार कर तुरंत अपने राजदूतों को आप के दरबार में भेजेंगे और आपके विजयोत्कर्ष की कामना करेंगे। शेरे मैसूर सुलतान बहादुर अपने ईमान के नाम यह कसम खाते हैं।"

दीवानजी ने एक पल दिग्भ्रमित की तरह चारों तरफ दृष्टि डाली फिर ऊंची आवाज़ में बोले, "वाह ! अब प्रमाणित हो गया कि मैसूर में शेर का अवतार नहीं, कालशक्ति का ही अवतार हुआ है।"

अजितसिंह इससे भी विचलित नहीं हुआ। वह आगे बोला, "अगर ऐसी बात है तो आप हमारे साथ चलिए। मैसूर के चार-चार जागीरों के जागीरदार बन जाइए। सुलतान बहादुर की रिश्तेदार खूबसूरत कन्याओं में, जितनी चाहें, उतनी पत्नी रूप में स्वीकार करें। अब तक आपने जितना राजकोष कमाया हो उसके स्वामी बने रहें। दीवान पद पर नियुक्ति का आदेश, तिरुवितांकूर के शासन का मुख्तारनामा, जागीर, राजकोष और महल देनेवाला राजादेश—इनमें से जो आपको पंसद हो उसके आज्ञापत्र पर टीपू सुलतान के प्रतिनिधि के रुप में हस्ताक्षर कर दूंगा। सुलतान के दरबार के कई सरदार बजरे में हैं। वे गवाही में दस्तखत करेंगे। रोज जो नरहत्या, लूट-पाट और जनता का भय देखते हैं उसे समाप्त करनेवाले करुणामूर्ति का पद ग्रहण कीजिए। आप जिस क्षण वहां कदम रखेंगे, उसी क्षण मैसूर की सेना तंबू उखाड़कर वापस चल पड़ेगी। रामराजा बहादुर तपस्या में लीन रहते हुए अपने प्रधान आश्रित को आशीष दें।"

दीवानजी ने माथा सहलाते हुए कहा, "राजा साहब ! क्या एक आदमी के चले जाने से तिरुवितांकूर रियासत रसातल में धंस जायेगी ? हाय ! ऐसा सपना देखनेवाला इसे जीवित पा सके तो उस दिन सूरज पूरब में अस्त होगा। यदि आप इस बंदे की लाश पाकर संतुष्ट हों तो युद्ध में विजयी बनकर ले लें। मैंने आपको धीर गंभीर समझने की जो भारी भूल की थी, इस पर मैं शर्मिन्दा हूँ।"

अजितसिंह लज्जित हो उठा। वह फर्श पर नजर गड़ाये रहा। तय हुआ था कि संधि-वार्ता के टूट जाने पर छोकरा डूंडिया दीवानजी का वध कर देगा। अजितसिंह उसी की प्रतीक्षा में था। मगर जब छोकरा डूंडिया ने दीवानजी और अजितसिंह के भावों और विचारों में महाराज नल और कलि का अंतर पाया तब वह हथियार फेंककर दीवानजी के चरणों पर लोटकर चिल्ला उठा, "हे श्रेष्ठ महानुभाव ! आपकी जय हो! इस धूर्त को कैद कीजिए। यहां के एक कानन कुसुम को ....."

वह यह वाक्य पूरा भी नहीं कर सका था कि अजितसिंह का लोहे की नाल वाला जूता छोकरा डूंडिया के सिर पर इतने जोर से पड़ा कि उसका सिर कुम्हड़े की तरह चूर-चूर हो गया।

32

टीपू सुलतान को पेरिंचक्कोडन का नज़राना

सावित्री ने सुन रखा था कि त्रिविक्रमन अमुक दिन दीवानजी के साथ सावित्री के घर के पास वाले राजपथ से आनेवाला है। नियत दिन रात के समय वह अपने कमरे में अर्धनिद्रा में पड़ी थी। बाहर पानी की फुहारें पड़ रही थीं। आसमान पर चांद मुस्कुरा रहा था। सावित्री को किसी के पैरों की आहट सुनाई दी। वह दरवाजे पर पहुंची तो देखा, आंगन में कोई खड़ा है। सावित्री को भ्रम हुआ कि वह आदमी उसे बाहरी आंगन में आने का इशारा कर रहा है। हिम्मत करके वह घने पेड़ों से घिरे अहाते की तरफ चल पड़ी।

पेड़ों की छाया व अंधेरे में दो- तीन लंबे कद के आदमियों की धुंधली शक्लें नजर आयीं। सावित्री ने सोचा कि उनमें सबसे आगे खड़ा त्रिविक्रमन एकांत में उस से मिलने की प्रतीक्षा कर रहा है। वह तेजी से उस दिशा में बढ़ी। उसके लिए संदेश लेकर आये आदमी ने झट उसका सिर एक चादर से ढक दिया। सावित्री समझ गयी कि उसके साथ धोखा हुआ है। फिर भी उसने न हिम्मत हारी, न रोयी- चिल्लायी। दो आदमियों ने मिलकर उसे उठा लिया। यद्यपि सावित्री ने निवेदन किया कि पर्दा हटा देने पर वह खुद उनके साथ पैदल चलेगी तो भी उन्होंने उसकी बात अनसुनी कर दी।

तीन- चार घंटे बीत गये। सावित्री ने आवाज और गंध से अंदाजा लगाया कि उसे वन मार्ग से ले जाया जा रहा है और भोर की बेला नजदीक है। चारों ओर जंगली जानवरों के दौड़ने की आहट पाकर उसने सोचा कि ये शायद मुझे किसी मांसभक्षी जानवर के मुंह में झोंकनेवाले हैं। तभी उसने एक भीषण आदेश सुना—"रुक जाओ।"

सावित्री को उठाकर ले जाने वाले तुरंत रुक गये। फिर पर्दा हटाने का आदेश मिला। दिन उग चुका था। सावित्री मन ही मन आश्वस्त हो गयी कि उसकी मुश्किल भी छंटते हुए अंधेरे की तरह दूर हो जायेगी।

पेरिंचक्कोडन ने ही वह आदेश दिया था। चिलंपिनेत्तु भवन में गौंडन से नाराज पेरिंचक्कोडन मन ही मन आश्वस्त हो गया था कि उस भवन का स्वामी गौंडन ही है। शीघ्र ही वह गौंडन के अड्डे पर पहुंचा और वहां छोड़े हुए अपने अनुचरों को साथ लेकर नंतियत्तु भवन की तरफ चल पड़ा। वह दूसरे दिन रात तक नंतियत्तु भवन के पास वाले

जंगल में पहुंचा। अपनी योजना के अनुसार उसने सावित्री का अपहरण बड़ी आसानी से कर लिया था।

पर्दा हटाने पर सावित्री दिखाई दी तो पेरिंचक्कोडन दंग रह गया। उसने उस कन्या को मार डालने का अपना पुराना इरादा बदल दिया। उसने सोचा कि भविष्य में इसके जरिये उसे बड़ा लाभ होगा। इसलिए वह उसे कांटो-पत्थरों-भरे पथ से ले चला। उन दिनों टीपू की एक बड़ी फौज कोचिन रियासत की उत्तरी सरहद पर तैनात थी। पेरिंचक्कोडन ने सुलतान के दर्शन करने की अनुमति मांगी। टीपू सुलतान गौंडन के मुंह से पेरिंचक्कोडन के बारे में सुन चुके थे। कोचिन रियासत में कदम रखते ही तिरुवितांकूर के एक प्रमुख गृहस्वामी का दर्शन उन्हें शुभसूचक लगा। इसलिए उन्होंने पेरिंचक्कोडन को पेश करने का हुक्म दिया।

सिर के बाल और मूछें बढ़ी हुई। सिर पर पगड़ी और धोती, माथे पर भस्म की मोटी लकीरें, लंबा डंडा, छाती पर बालों का घना जंगल—यही उस समय पेरिंचक्कोडन की वेशभूषा थी। अजितसिंह ने सुलतान से निवेदन किया कि पेरिंचक्कोडन सात-आठ दिन का सफर करके एक छोटी सैनिक टुकड़ी लिये आया है। सुलतान खुश हुआ। पेरिंचक्कोडन ने टीपू से निवेदन किया—"अन्नदाता की सेवा में खाली हाथ नहीं आया हूं। अपनी सैनिक टुकड़ी को पहाड़ी दर्रे पर छोड़ आया हूं। नजराना भेंट करने के वास्ते एक कन्या ले आया हूं। उसे यहां रख लें तो वहां के कुछ लोगों की चोटी अन्नदाता अपनी मुट्ठी में मान सकते हैं। दीवानजी तो आपके बंदी सरीखे हो जायेंगे।"

अजितसिंह ने पेरिंचक्कोडन की बातों को हिंदुस्तानी में अनूदित करके टीपू को सुनाया।

टीपू ने उसकी तारीफ की कि इस्लामी मुल्कों की परंपरा के अनुसार खलीफाओं की तरह मुझे दुआ देने के लिए आये ये आदमी बड़े समझदार और दुनियादारी में माहिर हैं। सावित्री को देखकर सुलतान चकित हो उठे। उन्हें पूरा यकीन हो गया कि उनके हरम की परियां सावित्री नामक इस सूरज के सामने सिर्फ टिमटिमाते तारे हैं। टीपू का बेटा फतह हैदर हिरन पर नजर गड़ाये चीते की तरह भूखी नजरों से उसे देख रहा था। अजितसिंह ने आंखों-आंखों में फतह हैदर को डांटा।

तिरुअनंतपुरम में नकली अजितसिंह के सहायक के रूप में काम करने वाला व्यक्ति ही असली अजितसिंह था। वह वीर था और उत्तर भारत के अनेक राजपूत नरेशों का प्यार व सम्मान पा चुका था। अपनी प्रजा और देश की शांति अक्षुण्ण रखने के उद्देश्य से और टीपू के क्रोध की दिशाओं का नियंत्रण करने की इच्छा से वह सुलतान का दरबारी बना हुआ था। टीपू को उस पर बड़ा भरोसा था। और वे उसे सम्मान देते थे। इसलिए उसे अपने साथ रख लिया था। अजितसिंह के साथ उसकी पत्नी और विदूषक माधव

नायक भी थे। सुलतान ने उसे अपने निजी सेवकों के प्रबंध एवं पूजापाठ की अनुमति दी थी। सिपाही और राजकर्मचारी उसे प्यार व इज्जत देते थे।

अजितसिंह ने टीपू से प्रार्थना की—"महामहिम राजाधिराज ! प्रभु की छत्रछाया में रहनेवाला यह दास आपसे निवेदन कर रहा है कि यह कन्या अभिजात कुल की है। प्रभु जब तिरुविंताकूर पर अपना झंडा फहरायेंगे तब आपकी राजसभा की शोभा बढ़ाने योग्य एक विद्वान की पुत्री है। कुछ महत्वपूर्ण उद्देश्यों की पूर्ति के काम में आनेवाली यह कामधेनु है। दैनिक पूजा- अर्चना आदि से फलदायक बना लेने के लिए उसे इस दास को सौंप दीजिए। अपने प्रताप की वृद्धि कीजिए।"

अजितसिंह को अतिशय सम्मान भाव से देखती खड़ी सावित्री ने उनकी प्रार्थना सुनी तो शुद्ध हिंदुस्तानी में टीपू से स्वयं प्रार्थना की, मानो अपने पिताजी से विनय कर रही हो—

"प्रजाजन के लिए पितातुल्य महानुभाव ! विशेषरूप से निरवलंब नारियों के विषय में ईश्वरीय शक्ति के प्रतिनिधि और धर्मरक्षा के योग्य विजयी प्रभुवर ! अन्नदाता आप इस प्रार्थना को कृपापूर्वक स्वीकार करें तो इस बालिका की विपत्तियों का समाधान हो जायेगा। इस अबला की अभिलाषा को अपनी मंजूरी देकर करुणा के परम आनंद का अनुभव कीजिए। इस्लाम के उसूलों पर अमल कीजिए।"

गणित विज्ञान में दीवान केशव पिल्लै की टक्कर के विद्वान एवं टीपू के प्रमुख प्रशासनाधिकारी पूर्णय्या ने सम्मति दी कि सावित्री की प्रार्थना स्वीकृति के योग्य है। कन्या के प्रांजल हिंदुस्तानी के शुद्ध उच्चारण ने सुलतान और अजितसिंह को ताज्जुब में डाल दिया। पेरिंचक्कोडन को राजसभा की सुध जाती रही और उंगली से नाक बजाते हुए खड़ा रह गया। सुलतान ने अजितसिंह और पूर्णय्या की सलाह मान ली।

सुलतान बहादुर बोले—"वाह ! कैसी अचरज की बात है ! अल्लाह ताला ने रहम करके हमें एक बड़ी होशियार प्यारी बिटिया बख्शी है। रामराजा की रियासत में पैदा होने वाले इस नूर का वालिद बनने की मुझे खुशी है। अजीज दोस्त अजितसिंहजी, आप इसे अपनी गोद ली हुई बेटी के रूप में ग्रहण कीजिए। यह हमारे महल में भी हमारी दुलारी बेटी की तरह पूरी तरह आजाद रहेगी। हम दोनों की इस दुलारी बेटी की सारी इच्छाएं टीपू सुलतान पूरी करेंगे। यह हमारा वादा है, कसम है। प्यारे बेटे हैदर ! यह तुम्हारी बहन है, समझे ! दरबार के सारे अधिकारियों, सरदारों और सैनिकों को सूचित कर दो कि जो धूर्त तुम्हारी बहन की आजादी और चैन में अड़चन डालने की कोशिश करेगा हमारी कटार उसके सिर के टुकड़े-टुकड़े कर देगी।"

पेरिंचक्कोडन खुश हो उठा। वह अपने हृदय-पटल पर सारे दृश्य देखने लगा—टीपू सुलतान तिरुविंताकूर की गद्दी पर विराजमान हैं। देवकी त्रिविक्रमन को ब्याही जा चुकी

है, दीवानजी टीपू सुलतान के क्रोध भाजन बने हुए हैं आदि। टीपू के एक सैनिक अधिकारी ने पेरिंचक्कोडन को सूचना दी कि उसे अपनी टुकड़ी तिरुवितांकूर की सेना के अधिक से अधिक नजदीक रखनी होगी। पेरिंचक्कोडन ने माधवी अम्मा को भी किसी तरह मना लिया।

33

गौंडन और पेरिंचक्कोडन की बहस

केशवन उण्णित्तान ने परवूर से कृष्ण कुरुप को भेजे हुए अपने पत्र में अवश्य लिखा कि सावित्री के कहीं भाग जाने की खबर कोटंता ने दी है। परंतु उस पत्र में मुख्य बात फौज में लोगों को भरती करने की थी। उसने आग्रह किया था कि तिरुअनंतपुरम् से लौटने के समय तक कम से कम एक सौ सिपाही और उनके सहायक तैयार मिलें। तदनुसार कुरुप ने नंतियत्तु के प्रधान की अनुमति से ढिंढोरा पिटवाया और लोगों को फौज में भरती करना तथा प्रशिक्षण देना शुरू किया।

तिरुअनंतपुरम से परवूर लौटकर त्रिविक्रमन ने दीवानजी को केशवन उण्णित्तान की सैनिक तैयारी, पांडा द्वारा गौंडन का बचाव, परप्पांडा अड्डे का ध्वंस आदि खबरें सुनायीं। त्रिविक्रमन ने दीवानजी से यह भी निवेदन किया कि मांकाव भवन पर एक नजर रखने की बात कुंचैक्कुट्टि पिल्लै ने फिर दुहराई है। कार्यक्कार ने गौंडन को भीषण दंड देने लायक सूचनाएं देकर भंगाराम को टीपू को छावनी की तरफ भेजा। भंगाराम को लौटे दो-तीन दिन गुजर गये, फिर भी गौंडन कहीं नजर नहीं आया। तभी टीपू ने संधिवार्ता के लिए अजितसिंह को दीवानजी के पास भेजा।

पेरिंचक्कोडन द्वारा प्राप्त दो अनुचरों के साथ गौंडन टीपू के डेरे की तरफ उत्तरी दिशा में चल पड़ा। कोट्टारक्करा पहुंचते-पहुंचते उसे बड़ी थकान महसूस हुई। आराम करना अनिवार्य लगा तो वह राजपथ से गांव की तरफ चल पड़ा और वहीं जा पहुंचा जहां कुरुप पलटन में भरती किये लोगों को सैनिक प्रशिक्षण दे रहा था। कुरुंगोट के ग्रामवासियों को यायावर वैश्य का स्वागत-सत्कार करना आनन्ददायक लगा। उन्होंने गौंडन के मैले विदेशी वस्त्रों की धुलाई की व्यवस्था की। पहनने के लिए उसे केरलीय वस्त्र दिये गये। धुले कपड़े मिलने तक उस गांव में रुकना गौंडन के लिए अनिवार्य हो गया।

गौंडन ने उस गांव के कई परिवारों से जान-पहचान कर ली। उण्णित्तान के आदेश से कष्रक्कूट्टम् में जैसा सैनिक प्रशिक्षण चलता था वैसा ही प्रशिक्षण इस गांव में भी चालू था। गौंडन को यह बात बुरी लगी कि यह सेना टीपू की फौज से लड़नेवाली है। फिर

भी भांजे के प्रति वात्सल्य के कारण वह अपनी नाराजगी छिपाये रहा। इसी बीच उण्णित्तान के आज्ञानुसार कोटंता आशान गांव के सैनिक-प्रशिक्षण की प्रगति जानने आ गया।

कोटंता अपनी प्रकृति के अनुसार बकवास करते हुए बोला कि त्रिविक्रमन ही सावित्री को घोड़े पर बिठाकर ले गया है। वह खुद उनके पीछे काफी दूर दौड़ा था, पर एक भारी पत्थर उसके मुंह पर आ लगा, जिससे उसका एक दांत उखड़ गया। घर लौटने का विचार छोड़कर उसी हालत में वह परवूर गया और उण्णित्तान को सारी बातें बतायीं। उसने उण्णित्तान के पवित्र मुंह से उन दोनों को शाप दिलाया कि दोनों को भगवान इस धरती पर से उठा लें। आशान ने आगे कहा, "आप लोग परेशान न हों। वह कन्या उसी डेरे में है।"

कोटंता वहां गौंडन के ही साथ घूमता-फिरता और रहता था। एक रात गौंडन अपने विदेशी कपड़ों में आशान के साथ गांव से गायब हो गया।

उस गांव के कई बुजुर्गों ने गौंडन को देखा तो उनके मन में संदेह होने लगा कि कहीं यह आदमी वही चंद्रक्कारन तो नहीं है, जो वर्षों पहले चिलंपिनेत्तु भवन से लापता हो गया था। उन्होंने सोचा कि उण्णित्तान के लौटने पर अपनी शंका का समाधान करा लेंगे।

पेरिंचक्कोडन की व्यवस्था के अनुसार गौंडन मांकाव पहुंचा। उसे मन ही मन खीझ हो रही थी कि उसकी प्रतिष्ठा कम हो रही है।

मांकाविल भवन चिलंपिनेत्तु भवन से पुराना, अधिक विशाल और सुंदर था। परंतु गौंडन पर उसका कोई असर नहीं पड़ा। उसका अहाता अब बड़े मैदान में परिवर्तित हो चुका था। छोटे टीलों को समतल करके वहां दस हजार लोगों के ठहरने लायक मकान बनाये जा चुके थे। अपनी वाग्मिता से पेरिंचक्कोडन उन सब का सरपरस्त बना हुआ था। उसने अपने खर्चे पर यह निर्माण कराया था। पेरिंचक्कोडन ने युद्धकाल में टीपू की फौज को मदद देने के लिए अपनी एक फौज गठित की थी। उसे जंगल के भीतर बसाया था। उसने माधवी अम्मा को झूठी सूचना देकर आश्वस्त कर दिया था कि यह फौज तिरुवितांकूर के महाराजा के पक्ष में है। इसके लिए उसने उससे कुछ धनराशि भी ली थी।

माधवी अम्मा ने गौंडन का स्वागत किया। गौंडन को चिलंपिनेत्तु में मीनाक्षी अम्मा के किये स्वागत-सम्मान की याद आयी। उस देवी ने उसके पौरुष को अपनी श्रद्धा का अमृत पान कराया था किंतु माधवी अम्मा उसे भर्तृनाशिनी, कुटुंबघातिनी और सर्वसंहारिणी सी लगी। गौंडन की परेशानी देख माधवी अम्मा ने अनुकूल प्रतिक्रिया प्रकट की और उसे अपना पुरोहित बना लिया।

मांकाविल भवन में दो दिनों के निवास के दौरान ही गौंडन और पेरिंचक्कोडन ने आपस में खुली बातचीत की। पेरिंचक्कोडन ने गौंडन के विलंब से आने का कारण उसके अनुचरों से जान लिया था। गौंडन ने सुझाव दिया कि पहाड़ से लगा हुआ हिस्सा

भील सेना को दे दिया जाये और अहाता नागरिक सेना के लिए सुरक्षित रखा जाये। पेरिंचक्कोडन को मालूम हो गया कि गौंडन ने जो जाल बिछाया है उसमें कौन-सी मछली फंसेगी। पेरिंचक्कोडन ने कहा, "मेरी आंखों में धूल झोंकने की कोशिश की तो मैं भी देख लूंगा। चिलंपिनेत्तु भवन की वास्तुकला किस काम की है? इस घर की छत या खंभों के बेलबूटे भला चिलंपिनेत्तु भवन में मिलेंगे? खैर! चालाक लोगों के छल-कपट व चालें खुर्राटों पर नहीं चलेंगी। दो काइयां जब आपस मे टकरायेंगे तब बड़ा काइयां ही जीतेगा। इसलिए गौंडन सेठ की तिकड़म हमारे ऊपर नहीं चल पायेगी।"

इस पर गौंडन और पेरिंचक्कोडन की गरमा-गरम बहस छिड़ गयी। दोनों अपने भीतरी इरादे जाहिर किये बिना बातें कर रहे थे। पेरिंचक्कोडन बोला, "मेरे मन में शुरू से ही शक था कि नंतियत्तु परिवार से सेठजी का खास नाता रहा है, इसे जांचने के लिए मैंने उण्णित्तान को एक खत भेजा है। वह भी पक्का चोर है। टस से मस नहीं हुआ। इसलिए मैंने वह कोशिश जारी नहीं रखी। फिर भी सेठ ने कषक्कूट्टम परिवार की गुप्त निधि हड़पने के लिए जो मेहनत की और चिलंपिनेत्तु परिवार में जो हिजड़ापन दिखाया उससे मेरा संदेह बढ़ा। इस दुधारी तलवार के बारे में टीपू सुलतान जब जानेंगे तब क्या होगा, कौन जाने ? सेठ की सेना को मेरा नेतृत्व मान लेना होगा। सेठ इस सेना की तैयारी का कोई श्रेय टीपू सुलतान से नहीं मागेंगे।

गौंडन का मन था कि पेरिंचक्कोडन की संपत्ति बहुत मामूली है। उसका यह भी दावा था कि टीपू को मोहित करने लायक दौलत उसी के पास है। उसने कहा, "डींग क्यों हांकते हैं ? गौंडन कई दरबार देख चुका है। यह न समझना कि गौंडन की पूरी सपंत्ति नष्ट हो चुकी है।"

पेरिंचक्कोडन—"शाबास ! सेठजी ! दिल खोल दीजिए। मैं भी यही चाहता हूं कि चिलंपिनेत्तु के तहखाने का ताला खुले। उसे भी मेरे जिम्मे छोड़ दीजिए।"

गौंडन ने फिर कहा कि चिलंपिनेत्तु से उसका कोई संबंध नहीं है।

पेरिंचक्कोडन—"सेठजी ! झूठ बोलकर दुनिया को ठगने की कोशिश मत कीजिए। उस कन्या को लेकर जब आपने झगड़ा किया तभी पेरिंचक्कोडन ने समझ लिया था। इस करोड़पति सेठ के लिए फांसी का तख्ता लगाया जा चुका है।"

गौंडन—"वह फांसी का तख्ता तुम्हें ही भला क्यों छोड़ेगा ? मेरे विषय में प्रसिद्ध है (कुर्ते के भीतर से जनेऊ निकालकर दिखाते हुए) कि मैं बड़ा विद्वान और वेदपाठी हूं। सुलतान बहादुर भी यह बात जानते हैं। तब यह धर्मराज्य का कालीप्रभाव भट्ट नामक ब्राह्मण का वध करेगा ?"

पेरिंचक्कोडन—"खूब डींग हांकिए। अपने को महाभार्गव, वैदिकाचार्य जो मर्जी हो बताइए।"

इस संवाद के बाद पेरिंचक्कोडन ने गुप्त मार्ग से अपना एक दूत टीपू के पास रवाना किया। इसका ध्येय गौंडन का असली परिचय पाना और अपनी तैयारियों की सूचना देना था। नकली अजितसिंह और पेरिंचक्कोडन इसी गुप्त मार्ग से मांकाविल भवन गये थे। टीपू के पास भेजा गया दूत तीन-चार दिन बाद ही वापस आ गया। पेरिंचक्कोडन और गौंडन को एक साथ देखकर नकली अजितसिंह खुश हो गया। उसने गौंडन के चरणों पर माथा टेका।

34

खोया हुआ बेटा मां से मिला

नकली अजितसिंह को गौंडन के चरणों पर गिर कर प्रणाम करते देख पेरिंचक्कोडन से रहा नहीं गया। उसे उम्मीद थी कि नकली अजितसिंह सावित्री से विवाह करेगा और उसकी बेटी देवकी के लिए दामाद के रूप में त्रिविक्रमन प्राप्त होगा। पेरिंचक्कोडन ने पूछा, "भैया ने जिस कन्या की बात बतायी थी उसका शुभ विवाह संपन्न कराके कहां बसाया है ?"

अजितसिंह—"देखोजी ! अपना-अपना धंधा पहचाने बिना यों ही लल्लो-चप्पो न करना। दूसरे मुल्कों पर कब्जा करने जब आदमी चलता है तब उसके लिए छल-कपट अनिवार्य हो जाते है। आप क्या कम हैं ? आपने जो अनमोल उपहार सुलतान को दिया है, जरा उस पर विचार कीजिए।"

पेरिंचक्कोडन ने फिलहाल अपने को संभाल लिया। मगर जब नकली अजितसिंह ने टीपू का संदेश गौंडन को सुनाया तब उसका क्रोध फिर से धधक उठा। उसने टीपू का हुक्म सीधे उन्हीं के मुंह से पाया है। खुद एक सैनिक टुकड़ी का प्रधान है। इसलिए वही इस ब्राह्मणदेवता से अधिक पूजनीय और आदरणीय था।

गौंडन ने माधवी अम्मा के अतीत का इतिहास उससे सुन लिया था। उसने माधवी अम्मा को वचन दिया था कि शीघ्र ही उसके बेटे को ला देगा। पेरिंचक्कोडन का वादा था कि युद्ध की समाप्ति के बाद खोजूंगा। गौंडन ने तो तुरंत बेटे को ला देने का आश्वासन दिया था। अतएव माधवी अम्मा गौंडन पर अधिक भरोसा करने लगी थीं। गौंडन ने कहा, "पेरिंचक्कोडनजी, मुझे यहां से जाने का हुक्म देने वाले आप कौन होते हैं? इस ब्राह्मण को बाहर निकल जाने का आदेश देना राजद्रोह है।"

पेरिंचक्कोडन ने कहा,"जनेऊ की बात छोड़िए। घरवालों से पूछ लीजिए कि यहां मेरा कैसा अधिकार है। अगर बढ़-चढ़कर बोले तो याद रखना पास ही गहरा खड्ड है।" फिर नकली अजितसिंह माधव नायक को संबोधित करके बोला, "सुनो बेटा, तुम अपनी राह पकड़ो। जाकर सुलतान बहादुर को खबर दो कि उनके मोर्चे का अगला पड़ाव यहीं होगा।"

माधव नायक ने उन दोनों से अनुरोध किया कि वे आपस में न लड़ें। उसने यह भी बताया कि असली अजितसिंह के आदेश से ही उसने यह कपट किया था।

पेरिंचक्कोडन गुस्से से बोला, "पेरिंचक्कोडन को सिखानेवाले तुम कौन हो जी ? तुम मेरे गुरु हो क्या? अभी गरदनिया देकर नदी किनारे की झाड़ में फेंक दूंगा। अगर कोई पूछेगा तो जवाब दे लेंगे।"

माधव नायक को भी क्रोध आ गया। दोनों एक दूसरे पर गालियों की बौछार करने लगे। फिर पेरिंचक्कोडन का थप्पड़ खाकर माधव नायक नीचे गिर पड़ा। झगड़े में गौंडन ने भी दखल दिया। गौंडन और पेरिंचक्कोडन दो मतवाले हाथियों के समान एक-दूसरे से भिड़ गये। शुरू में ही माधव की चीख- सुनकर माधवी अम्मा वहां आ गयी थी। दोनों बूढ़ों को एक दूसरे का सिर फोड़ने को तत्पर देखकर माधवी अम्मा ने दोनों को खूब डांटा, बुरा-भला कहा। युवक की खिन्नता और थकान देख माधवी अम्मा उसे मनाने लगी। परमात्मा की विलक्षण कृपा देख गौंडन जिंदगी में पहली बार भीतर से निश्चेष्ट हो गया। जब माधवी अम्मा करुणापूर्ण हृदय से उस युवक की सेवा करने लगी तब गौंडन को अद्‌भुत शांति अनुभव हुई।

गौंडन ने पेरिंचक्कोडन का दंभ कम करने और माधवी अम्मा को खुश करने के लिए अपनी जानकारी के बल पर एक सूचना दी—"मैं जिन दिनों श्रीरंगपट्टण में रहता था उन्हीं दिनों इस माधव मेनन को डूंडिया नामक वैश्य छोकरे के साथ देखा था। यह एक धनी केरलीय परिवार का बालक था, जिसका अपहरण किया गया था। छोकरा डूंडिया मंत्र-तंत्र में कुशल ओझा के रूप में ब्राह्मण वेश में केरल में घूमता था।" इस बीच माधव नायक माधवी अम्मा के पैरों पर गिरकर अपने बचपन की बातें याद करने लगा। माधवी अम्मा हर्षातिरेक से अपने को भूल गयी। वह 'नारायण, नारायण' पुकारती रही और युवक के हाथ को अपने हाथों में लेकर उसे अपनी आंखों से लगाये सिसक-सिसककर रोती रही। गौंडन ने उस युवक और उसकी माता को ब्राह्मणोचित आशीर्वाद दिये। पेरिंचक्कोडन ने सोचा कि कपटी गौंडन मुझे नीचा दिखाने के लिए करतब दिखा रहा है। माधवी अम्मा ने वह आइना लाकर पेरिंचक्कोडन के हाथ में रख दिया जिसे वह उस आंधी-पानी की रात में देख रही थी जब पेरिंचक्कोडन ने आलिंगन पाश में बांधकर उसे भोगा था। पेरिंचक्कोडन के मुंह से एक शब्द भी नहीं निकला। माधवी अम्मा ने इशारे से माधवन को बताया कि उन चरणों को प्रणाम करो। वह आगे बढ़ा, मगर उसी समय कुछ भी न देखने का भान करते हुए तेजी से निकल गया।

35

उण्णित्तान की सेना का मार्गदर्शक कोटंता

उण्णित्तान की सैनिक टुकड़ी सशक्त और सुसज्जित थी। इसके लिए चिलंपिनेत्तु भवन की सुरक्षित संपत्ति व्यय की गयी थी। अंग्रेज कंपनी की पलटन में अनुभव प्राप्त पंची नामक व्यक्ति ने इन सिपाहियों को प्रशिक्षण दिया था। वही सेना का नेतृत्व भी कर रहा था। कृष्णकुरुप उपनायक था। सैनिक आदेश का अधिकार पंची को था और रसद आदि का कार्य कुरुप संभालता था। केशवन उण्णित्तान राजकोष के अधिकारी की पोशाक में कमर पर नंगी तलवार लटकाये पूरी टुकड़ी का दायित्व संभाले हुए था।

कोट्टारक्करा की सैनिक टुकड़ी को ले आने उण्णित्तान नंतियत्तु गया, फिर भी बेटी के विषय में पूछताछ नहीं की। रास्ते भर भूस्वामी उस छोटी सेना का स्वागत-सत्कार करते रहे, इसलिए अपने साथ रखी गठरियां सैनिकों को खोलनी नहीं पड़ीं। यद्यपि सेना का संचालन पंची और कुरुप कर रहे थे, फिर भी उसका मार्गदर्शन कोटंता आशान कर रहा था। उसे स्थानीय भूगोल की जानकारी थी। कोटंता को एक ऐसा सहयात्री मिल गया था, जो उसकी आर्थिक सहायता भी कर रहा था। वे दोनों साथ-साथ आगे चल रहे थे। उक्त सज्जन को बीच-बीच में सड़क के यात्रियों से कुशल-समाचार पूछने में बड़ा आनंद आता था।

वैक्कम के बाद उत्तर दिशा में पड़ने वाली नदी पार करने के बाद सैनिकों को यात्रा के अनुकूल मार्ग मिला। मगर कोटंता ने उण्णित्तान से कहा, "कोचिन रियासत में प्रवेश करके किसी आफत में फंसने के बजाय तिरुविंताकूर रियासत के रास्ते से ही आगे बढ़ने में समझदारी है।"

उण्णित्तान मान गया। आदेश दिया गया कि कोटंता मार्ग दिखावे।

कोटंता को आर्थिक सहायता देनेवाले सज्जन ने चलते-चलते कहा, "मेरे साथी ! क्या और कोई आदमी नहीं मिला जो नरेश ने केशव पिल्लै नामक इस बुद्धू को दीवान नियुक्त कर रखा है ? क्या लोगों का अकाल पड़ गया है ? तुम जिस दिन महाराजा साहब से मिलोगे उसी दिन इस मूर्ख की घनी मूंछें मुरझा जायेंगी। इसकी औकात ही क्या है ? क्या इसे कामकला का ज्ञान है ? क्या इसकी भाषा में विद्वत्ता है ? एकदम

नीरस है ! देश का शासन चलाने के लिए क्या-क्या चाहिए ! बोलो ! क्या इसने ऊंची शिक्षा पायी है ? क्या इसमें भाषण-कला है ?"

कोटंता—"अरे चुप रहो जी ! इस रास्ते चलते-चलते, दीवान का पद न सही, कोई न कोई पद हम भी पायेंगे। देखते चलो ! और सुनो ! तुम्हारे कितने साथी हैं ! चौराहे पर कुछ साथी मिले थे न ? वे क्या कह रहे थे ?"

साथी ने कहा कि वे आपकी बाबत पूछ रहे थे। कोटंता को लगा कि लोग उसे भी बड़ा अधिकारी ही समझ रहे हैं। आशान ऊबड़-खाबड़ भूमि से जा रहा था, जहां लोगों के पैरों के निशान तक नहीं दीख रहे थे। इस पर उण्णित्तान ने पूछा,"अरे ! तुम कहां ले जाकर हमें भूखों मारना चाहते हो ?"

उस दिन और दूसरे दिन उन्हें दावत मिली। तीसरे दिन कप्तान पंची ने उण्णित्तान को सूचित किया कि इस रास्ते आगे चलने पर दुश्मनों के मुंह में पड़ेंगे। इससे बचने के लिए पीछे चलना होगा। कोटंता को शाप देते हुए कुरुप उस पर झपट पड़ा। कोटंता वन के भीतर भाग गया। वहां वह एक आदमी की गिरफ्त में आ गया। उस व्यक्ति ने कोटंता के मुंह में कपडा ठूंस दिया ताकि कोई आवाज न निकले।

आगत व्यक्ति ने उण्णित्तान और साथियों को धीरज बंधाया और कहा,"हिम्मत न हारिए। कोई खतरा नहीं है। देखिए ! वह पेड़ों का झुरमुट दीखता है न ? वहां से सिर्फ दो मील की दूरी पर हमारे पक्ष का सैनिक पड़ाव है। वहां पहुंचने पर सब ठीक हो जायेगा।"

उण्णित्तान सेना की रसद ढोनेवालों के साथ चल रहा था। इसलिए सेना के पिछले हिस्से में था। यात्री लोग उससे कुशल-समाचार पूछते साथ चल रहे थे। उसके पीछे रह जाने का यह भी एक कारण था। यात्रियों ने विश्राम के लिए निमंत्रित किया, किंतु उण्णित्तान ने स्वीकार नहीं किया। एकाएक दूर एक टीले पर से शोरगुल और गोलाबारी की आवाज सुनाई पड़ी। उण्णित्तान को शक हुआ कि कहीं हमारे सिपाही किसी धोखे में तो नहीं पड़ गये। वह खतरे की परवाह किये बिना उसी दिशा में आगे बढ़ा। यात्रियों का अभिनय करते हुए साथ चलनेवाले लोग वस्तुतः दीवानजी की इच्छानुसार उण्णित्तान को युद्धक्षेत्र से बचाते हुए अलग पथ से ले जा रहे थे।

36
मामा का आशीर्वाद

पेरिंचक्कोडन मांकाव से सीधे घोर वन की तरफ भागा था, जहां उसने अपनी भील सेना तैयार रखी थी। उसने मन में निश्चय कर लिया था कि मांकाव के सामने के पड़ाव का अपनी उद्देश्य-सिद्धि के लिए उपयोग करेगा।

पुत्र को फिर से पा कर माधवी अम्मा की खुशी का ठिकाना न रहा। ऐसा सौभाग्य प्रदान करने वाले भट्ट के प्रति उसे बड़ा प्रेम व सम्मान अनुभव हुआ। भट्टजी माता-पुत्र को गीता का उपदेश देते थे। इसकी दक्षिणा में उन्होंने मांकाव का मैदान उनसे मांग लिया। पुत्र को तो वहां रहने में कोई दिलचस्पी थी नहीं। भट्ट को भी लगा कि वह भवन शीघ्र ही ध्वस्त हो जायेगा, इसलिए उसने भी टीपू के सैन्य-पड़ाव पर जाने का निश्चय किया। माधवी अम्मा के आग्रह के ही कारण वह कुछ दिनों के लिए रुक गया था।

एक दिन प्रातःकाल मांकाव परिवार के सदस्य भट्टजी का गीतोपदेश सुनने जमा हुए थे। भट्टजी पीले कपड़े पहनकर व्यासपीठ पर बैठे कुछ सोच रहे थे। तभी ढेर सारे लोगों के आने का कोलाहल सुनायी दिया। उन्हें संदेह होने लगा कि कहीं टीपू की फौज ने धावा तो नहीं कर दिया। सुलतान की इच्छा के विरुद्ध कार्य करने के कारण माधव मेनन भयभीत हो गया। माधवी अम्मा ने भट्ट से सलाह मांगी कि क्या मां-बेटा वहां से हट जायें। भट्ट ने उन्हें समझाया कि वह पेरिंचक्कोडन व भील सेना के आगमन का कोलाहल था।

बहुरंगी वेश और हथियार धारण किये भील सेना अहाते में घुस गयी। माधवी अम्मा को डर लगा। पेरिंचक्कोडन ने इसका ध्यान तो रखा कि वनचरों की सेना भवन के भीतर प्रवेश न करे। भट्ट ने कहा, "इस फौज को देखकर टीपू खुश नहीं होंगे।"

इस पर माधवी अम्मा ने पूछा, "इससे टीपू की खुशी या नाखुशी का क्या संबंध है ?" माँ की सरलता देखकर माधव मेनन हंस पड़ा। भट्ट ने माधवी अम्मा को यथार्थ स्थिति से अवगत कराया। पेरिंचक्कोडन, भट्ट एवं माधव मेनन टीपू को वचन दे चुके थे कि वे उनकी सेवा करेंगे, इसलिए वे पराधीन और विवश थे।

माधवी अम्मा यह सुनकर घबरायी। वह महाराजा के शासन के खिलाफ कुछ भी करने को तैयार न थी। भट्ट ने उसे अनेक प्रकार से समझाया, लेकिन माधवी अम्मा ने

साफ-साफ कहा, "सुनिए ब्राह्मण देवता ! आप कैसी मूर्खता की बातें कर रहे हैं ? क्या उनमें और इनमें कोई फर्क नहीं है ? ये सब बातें मांकाव की माधवी अम्मा नहीं सुनना चाहती। आपने यह कहकर मुझसे अनुमति ली थी कि तिरुअनंतपुरम् की फौज के लिए यह प्रबंध हो रहा है। दूसरे कामों के लिए आप कोई और जगह देख लीजिए। बेटा, तुम्हारी क्या राय है ?"

माधवी अम्मा जब राजभक्ति को अपनी विरासत घोषित करते हुए उसी के आधार पर दलीलें देने लगी, तब भट्ट का मन भी हिल गया। वह भी मांकाव परिवार के शाश्वत अस्तित्व की कामना करता था। उसे लगा कि परिवार के प्रति माधवी अम्मा के सम्मान और गौरव के भाव से सीख लेनी चाहिए। इस आचार्या से भट्ट ने सीखा कि परंपरागत प्रतिष्ठा को सुरक्षित रखना पुरुषों का अन्यतम कर्तव्य है।

थोड़े ही समय में मांकाव का प्रांगण एवं परिसर अनेक परिवारों वाला ग्राम-सा दिखायी दिया। अस्थायी बैरक तैयार किये गये। जहां-तहां चूल्हे जलने लगे। उस समय पहाड़ियों के दक्षिण-पश्चिमी कोने से कुछ आदेश सुनायी देने लगे। मांकाव के सैनिक डेरों की तरफ बढ़ती बंदूकों की नोकें दिखायी दीं।

पेरिंचक्कोडन के सैनिकों की संख्या करीब एक हजार थी। वे सब खाने की चिंता छोड़ फौरन लड़ने को तैयार हो गये। तभी ऊंचे स्वर में एक राजघोषणा सुनायी पड़ी। घोषणा का सार यह था कि जो सिपाही पेरिंचक्कोडन कुंचिमायिट्टि पिल्लै के नेतृत्व में आये हैं वे हथियार छोड़कर अपने- अपने घर लौट जायें। जो ऐसा नहीं करेंगे वे तिरुवितांकूर के महाराजा के विद्रोही माने जायेंगे और दंडित किये जायेंगे। सैनिकों ने पेरिंचक्कोडन की तरफ देखा। पेरिंचक्कोडन सैनिकों को यही बताकर ले आया था कि वे महाराजा की तरफ से लड़ेंगे। जब सैनिकों को पता चला कि उनके साथ धोखा हुआ है तब वे हथियार छोड़कर अपने-अपने निवास लौट गये।

पेरिंचक्कोडन और दक्षिण तिरुवितांकूर से आये सिपाही भिड़ गये। उन पर गोलियां बरसने लगीं। पेरिंचककोडन के भी गोली लगी और खून बह निकला। चक्कर खाकर गिरते हुए उस मोटे व्यक्ति को उसके सेवक कंधे पर बिठाकर ले भागे। जो लोग पेरिंचककोडन को लेकर जा रहे थे, वे कुछ ही दूर जाने पर चिल्ला उठे कि वह मर गया।

राजा के जासूसों की चतुराई के कारण ही इस मोर्चे को कुचला जा सका था। दीवानजी के गुप्तचरों ने मांकाव में प्रवेश करके माधव मेनन को कैद कर लिया। उन्होंने माधवी अम्मा के रोने-चिल्लाने की परवाह नहीं की। उस युवक को उण्णित्तान की नजर से बचाते हुए वे दीवानजी के पास ले गये।

कृष्ण कुरुप ने घर की तलाशी का जिम्मा अपने ऊपर ले लिया। उस भवन की वास्तुकला की सुषमा और श्रेष्ठता ने उसे आश्चर्य से भर दिया। उसने माधवी अम्मा

को आश्वासन दिया कि बेटे के लिए डरने की कोई बात नहीं है। कमरों की तलाशी लेते हुए कृष्ण कुरुप ने एक कोठार के कोने में कपड़ों की एक बड़ी गठरी-सी देखी। गौर से देखने पर मालूम हुआ कि यह गौंडन है। दीवानजी ने गौंडन के विषय में खास आदेश दिया था कि इससे राजद्रोहियों से भिन्न व्यवहार किया जाये। कुरूप ने भक्तिपूर्वक प्रणाम किया तो वह दीन स्वर में बोल उठा, "किट्टु कुरुप ! किट्टु कुरुप !"

कुरुप ने पूछा, "यह कैसा उत्पात है, मामाजी ? आप कहां गये थे ?" ज्वराक्रांत माणिक्यगौंडन ने सिर्फ इतना कहा,"केशवन, मेरा केशवन !" कुरुप उण्णित्तान की बात भूल गया था। "अभी आया" कहते हुए कुरुप बाहर की तरफ दौड़ा।

एकाध घंटे के भीतर केशवन उण्णित्तान को उस कमरे के भीतर पहुंचाया गया। उण्णित्तान पसीने से तर और शिथिल हो रहा था। कुरुप बाहर पहरे पर रहा। उण्णित्तान ने कुरुप से सारी बातें सुन ली थीं। अतएव उसने कमरे में प्रवेश करते ही मामा के चरणों पर सिर रख दिया। उसकी आंखों से अश्रुधारा बह रही थी। कालि उडयान चंद्रक्कारन उर्फ गौंडन के भी नयनों से आंसू टपक रहे थे।

चंद्रक्कारन ने कहा, "राजद्रोह से सिवा और किसी सदंर्भ में महाराजा रामवर्मा मुझे याद करना नहीं चाहेंगे। यही नहीं, मैंने टीपू को जो वचन दिया था उसका उल्लंघन करना भी पुरुषोचित नहीं है।

इसके बाद उसने अपने भांजे को कई बहुमूल्य रत्न उपहार में दिये। साथ ही उसे आशीर्वाद भी दिया —"मेरी सारी संपत्ति के स्वामी बनकर चिरकाल तक सुखी रहो।" वह फौलादी आदमी किस्मत का दिया कोई भी दंड स्वीकार करने का निश्चय कर चुका था। दीवानजी ने विशेष रूप से निर्देश दिया था कि उसे कैद न किया जाये। उसी दिन रात में वह टीपू के पड़ाव की तरफ चला गया।

37
अजेय वीरपुरुष

टीपू सुलतान का दरबार लगा था। अजितसिंह दीवान केशव पिल्लै से अपनी संधिवार्ता की असफलता निवेदन करने आया था। सुलतान रत्नखचित सिहांसन पर बैठे हुक्के का कश ले रहे थे।

अजितसिंह ने सुलतान को प्रणाम करके निवेदन किया—"जहाँपनाह रहम करें। इन पवित्र चरणों के दास ने कूटनीति, आश्वासन और प्रलोभन—इनमें से हर एक का बड़ी सावधानी से प्रयोग किया। सुलतान बहादुर की उदार दानशीलता को ग्रहण करने की समझ उनमें नहीं है। उन मंदबुद्धि लोगों को लुभाने में दास असफल रहा।"

टीपू सुलतान ने अजितसिंह को ढांढ़स बंधाया। सुलतान को इस बात पर बड़ा क्रोध आया कि छोकरा डूंडिया ने उनके हुक्म पर अमल नहीं किया था। सबसे अधिक गुस्सा इस बात का था कि छोकरा डूंडिया ने टीपू के डेरे में सावित्री के होने की खबर दीवानजी को दे दी। सुलतान ने कोचिन रियासत के विषय में पूछा, "उस रियासत के राजा ने हमारी कद्र क्यों नहीं की ? नजराना क्यों नहीं पेश किया ? वह राजा किस शैतान की मदद के भरोसे हमें सैनिक मदद देने से इनकार कर रहा है ?"

अजितसिंह—"वंचिराज्य (तिरुवितांकूर) के उत्तरी भाग में हमारा एक बड़ा मंदिर है। उस मंदिर में हमारे बंधु कोचिन नरेश की पेरुपटप्पु सेना ने रामराजा बहादुर से विद्रोह न करने की प्रतिज्ञा की है।"

सुलतान के सवालों के जवाब में अजितसिंह ने बताया कि किले की मरम्मत का काम तेजी से चल रहा है।

एक चोबदार ने आकर निवेदन किया कि जिन कालीप्रभाव भट्ट स्वामीजी को श्रीरंगपट्टण से व्यापारी की पोशाक में तिरुवितांकूर जाने के लिए नियुक्त किया गया था वे सुलतान के दर्शनों की अनुमति की प्रतीक्षा में बाहर खड़े हैं। सुलतान को पहले कालीप्रभाव भट्ट पर अजितसिंह से अधिक भरोसा था, मगर अब वह भरोसा टूट चुका था। इसका कारण जानने के लिए अजितसिंह सुलतान के सामने से कुछ हटकर खड़ा हो गया।

सुलतान ने प्रश्न किया—"क्या उस शैतान को मौत के घाट उतारने के लिए फांसी

की रस्सी अभी नहीं बनी ? कपट, जालसाजी और दौलत का लालच— वाह !वाह ! दोज़ख ले जाने वाले सारे गुनाहों का वह पुतला ! उस गिद्ध की मौत का खेल हमारे प्यारे सिपाही बड़ी खुशी से देखेंगे। जाओ ! एक ऊंची और मजबूत डाल का पता करो। उस पर उस खतरनाक नाग को लटका दो जो हमेशा धोखे से डसने को तैयार रहता है।"

हुक्म सुनकर एक सेवक उठा। टीपू का क्रोध अभी शांत नहीं हुआ था। वे आगे बोले—"अरे बेवकूफ ! रुक जा—वह गद्दार, धोखेबाज, खुदगर्ज जहर के घड़े का यहां तक लाते-लाते मार-मारकर भुर्ता बनादो ताकि उसे कपड़े में बटोरकर ले जाया जा सके।"

सेवक दौड़ पड़ा। दरबार के लोग सन्न रह गये। चारों तरफ खामोशी छा गयी। सुलतान ने म्यान से अपनी कटार निकाल ली और उसकी मूठ को उंगलियों से मरोड़ने लगे। सुलतान के तंबू के सामने सेवकों ने कालीप्रभाव भट्ट को दंडवत मुद्रा में लिटाया था। सेवकों से हाथपाई के दौरान भट्ट की पगड़ी भाले की नोक से उछाल दी गयी थी। गौंडन के गंजे सिर को देखकर सुलतान को सूझा कि छोकरा डूंडिया की तरह इसके सिर को भी कुचलकर चूर-चूर करने में मजा आयेगा। टीपू सुलतान ने अजितसिंह को इसके लिए हुक्म दिया। जब अजितसिंह ने इशारे से बताया कि उन्होंने उसके लिए उपयुक्त खास जूता नहीं पहना है, तब सुलतान का हुक्म हुआ कि भट्ट को भूसी की आग में जलाकर मारने की सजा दी जाती है।

यह आदेश सुनकर गौंडन उर्फ भट्ट उठ खड़ा हुआ। उसके मुखमंडल पर उस समय पौरुष और दर्प झलक रहे थे। वह अब टीपू की दासता स्वीकार करनेवाला ब्राह्मण नहीं था। उसके चेहरे पर न नफरत थी न विनय। घनी मूंछों व भौहों को इतमीनान से सहलाते हुए उस निडर आदमी को देख अजितसिंह का दिल कांप उठा। आश्रित लोग छिपने लगे। टीपू ने कटार म्यान में डाली। उस वीर ने ऐसा माहौल बना दिया कि अभियोग, पैरवी और गवाही के बिना ही सिर्फ उसकी कैफियत सुनकर फैसला किया जाये। भंगाराम ने उसे देखने पर भी न देखने का अभिनय किया। भट्ट ने इससे अनुमान लगा लिया कि भंगाराम ने सुलतान को उसके बारे में सच्ची-झूठी बहुत सी बातें सुनायी होंगी। वह भट्ट द्वारा मारे गये सिपाही का छोटा भाई जो था। लौकिक व्यवहार में कुशल भट्ट ने सोचा कि किसी धूर्त ने भंगाराम को मेरे वध का औजार बनाया होगा। भट्ट खूनी तलवार के लिए भी अजेय वीर पुरुष के रूप में टीपू के सामने खड़ा था। वह मन ही मन आशीष दे रहा था कि धर्ममात्र को जीवनव्रत बनाये हुए महाराजा रामवर्मा तथा उनके दीवान जुग जुग जियें।

भट्ट के गले से बुलंद आवाज में जो भी शब्द निकल रहे थे वे टीपू के गुरूर पर सख्त चोट कर रहे थे। सुलतान मखमली सेज पर कुहनी के बल लेटे थे। गौंडन (भट्ट) ने निर्भयता से, प्राण-त्याग के लिए तैयार होकर बिना लज्जित हुए पूरे आत्मविश्वास के

साथ अपनी बात कही और प्राण दंड का स्वागत किया। उसके मलयालम शब्दों का हिंदुस्तानी अनुवाद अजितसिंह ने यों किया—"चाहे भूसी की आग हो, या दिल की जलन, किसी न किसी रास्ते तो वहां पहुंचना ही है। गुलाबजल, चंदन की लकड़ी और गाजा-बाजा किसी को स्वर्ग में नहीं ले जाते। इस दरबार में छाती ठोंककर दावा करता हूं कि मैं मर्द हूं : अपने बाप का असली बेटा हूं। आज ही पता लगा कि मुझसे सौदे में चूक हो गयी। हुजूर ! यहां भूसी की आग का हुक्म हो रहा है, पर जानता हूं कि अगर अब भी उस छाया में जाकर शरण मागूं तो आश्रय मिलेगा।"

अजितसिंह समझ गया कि तोप के सामने भी अडिग रहनेवाले सुलतान की छाती में गौंडन का एक-एक शब्द सांप के जहर की तरह गहरे उतर रहा है। उसने इशारे से भट्ट को संकेत किया कि क्षमा मांग लो। उसकी परवाह किये बिना भट्ट ने अपनी बात जारी रखी—"क्या फर्क पड़ता है ? हुजूर उम्मतुल मुल्क मुबारकुद्दौला टीपू सुलतान अली खाँ बहादुर हस्सबर जंग के लंबे नाम से नई रियासतों पर कब्जा करते जा रहे हैं। मैंने तो हुजूर के वालिद के ही दांव का प्रयोग किया है। फिर भी आखिर में मुझे भूसी की आग की सजा मिल रही है। जलती भूसी और राख चबाते हुए मरने का दंड मिल रहा है। जिन्हें वाकई यह सजा मिलनी चाहिए थी वे लंबे अरसे तक मारते, जलाते सर्वनाश करते जीते रहेंगे । घर बना लिया, कोठी बनायी फिर ? फिर नमकहराम हाथ अंधेरे में ही छिप गया । हरिपंचाननन स्वामी के साथ भी यही नाटक किया गया था : हत्याएँ कराके उसे परिवार का घृणापात्र बनाया गया।"

सुलतान ने हरिपंचाननन की बात पूछी तो उसे संक्षेप में बताने के बाद भट्ट ने आगे कहा, "उस कहानी का नायक भी यह चंद्रक्कारन ही है। परम कंजूस, बाद में कालीप्रभाव भट्ट बना। इस अधम ने कितना दुख-कष्ट झेला, मारा-मारा फिरा, किसे पता ? स्वामी गंगूरामजी ने—उनकी पुण्य आत्मा अमर रहे—मुझे एक किनारे लगा दिया । पता नहीं किस बुरी साइत में तिरुमल राव ने आकर सब कुछ बिगाड़ डाला। मैं कहीं पड़ा रहता और वक्त आने पर मर जाता। मुझे इस सर्वनाशी पथ पर लाकर खड़ा कर दिया। अभिजात बंधु तो किसी भी अपराध को क्षमा कर देते हैं।

कालि उडयान चंद्रक्कारन ने जो भवन निर्माण कराया, जो दौलत कमायी, दोनों को देखकर उसका कलेजा ठंडा हो गया। अब जीने और मरने में क्या फर्क पड़ता है ? अब सोने के हाथ जलायें या भूसी में भूने जायें कोई फर्क नहीं पड़ेगा।"

जब टीपू को यकीन हो गया कि यह चंद्रक्कारन ही है तब उन्होंने पूछा, "अपनी गुप्त निधि पर कब्जा करके अपना नुकसान क्यों पूरा नहीं किया ? भट्ट ने सिर्फ एक बार आंख उठाकर देखा, कोई जवाब नहीं दिया। टीपू सवाल करते गये—"हमारी संपत्ति से खरीदी चीजें कहां हैं ? समय-समय पर हमारे खजाने से रकम मंगाकर रिश्वत देकर

कराये गये बलवे और षड्यंत्र कौन-कौन से थे ? पेरिंचक्कोडन की फौज कहां गयी ? गवाही देने के लिए भेजा गया माधव नायक कहां है ?" भट्ट सिर्फ मुस्कराता रहा । तब अत्यंत क्रोधित टीपू सुलतान नंगी तलवार लिये उसकी तरफ बढ़े । फिर भी भट्ट अविचल खड़ा रहा ।

सुलतान दांत पीसकर चिल्लाये—"नीच ! तू यहीं राख हो जा । खुदा की मेहरबानी से मुझे इस हमले के लिए सरबराही अता की गयी है । हम तेरी जन्म-भूमि को तहस-नहस करने के लिए निकल रहे हैं । अजितसिंह ! कमरुद्दीन को हमारा हुक्म बता दो—"बीस हजार प्यादे, उसी के हिसाब से घुड़सवार, तोपें, हाथी, ऊंटों की सेना कूच करे । पहले अषिक्कोट्टा को ढहाया जाये ! हमारी पाक शमशीर शैतानी फिजा को नेस्त नाबूद करने के लिए बेकरार है । इसे– इस शैतान को– उसके दुष्ट नायक के ही कुंड में गिरा कर भसम किया जाये, यह सजा. . . . ।"

तभी महल की ओर से आते दिव्य संगीत ने टीपू की क्रोधाग्नि को कुछ शांत किया । यह देख चंद्रक्कारन ने मौन तोड़ा और कहा,"पराक्रमियों में सर्वश्रेष्ठ राजाधिराज, कृपया एक बात सुनें । आंखें दो हैं और कान भी दो, मगर आदमी का दिमाग एक ही है । वह अकेला किला तो आपके कब्जे में आ जायेगा, मगर आगे के किलों को आप छू भी न सकेंगे । सारे संसार को सोने का मुलम्मा चढ़ाने का सपना, सपना ही रह जायेगा । अषिक्कोट्टा पर आप कब्जा करेंगे । शायद आगे की दलदली जमीन को भी पार कर लें, पर उसके आगे जो पहाड़ व मैदान है, उनको कैसे सर करेंगे ? अन्नदाता ! अगर आप आसमान पर रंग चढ़ाने चलेंगे तो बहुत बुरा हाल होगा ।"

महल में निकले संगीत में लीन होने के कारण सुलतान ने चंद्रक्कारन की पूरी बात ध्यान से नहीं सुनी । उस संगीत ने टीपू सुलतान और दरबारियों को बहिश्त की हूरों के संगीत का आनंद दिया । मगर मृत्युदंड प्राप्त वह वृद्ध अविचल खड़ा रहा । सुलतान की नजर उस पर गड़ी रही, किंतु उनकी कर्तव्य चेतना धूमिल हो गयी ।

संगीत एकाएक थम गया । सुलतान ने इसका कारण जानने के लिए महल की ओर जाना चाहा । जाने के पहले उन्होंने फिर से घोषणा की कि चद्रंक्कारन को दी गयी मौत की सजा पक्की है ।

तंबू से सटे विश्राम कक्ष से घुंघरुओं और चूड़ियों की झनकार सुनायी दी । कपड़े की सरसराहट और पैरों की मृदुल चाप सुनी गयी । हल्के क्रोध से सुलतान ने उस दिशा में देखा । इस्लामी ढंग का घाघरा, चोली और गहने पहने, पर बिना बुर्के के, एक कन्या को आते देखा तो सुलतान के चेहरे पर खुशी लहरा गयी । उस तेजोमय मूर्ति के मुखमंडल पर हैरानी की जगह दृढ़ निश्चय झलक रहा था । सुलतान ने स्वागत में बाहें फैलायीं ।

कन्या ने उत्तर में सिर नवाकर अभिवादन किया। उसने मैले-कुचैले कपड़े पहने उस वृद्ध को हाथ जोड़कर नमस्कार किया और सुलतान को दस्तबस्ता आदाब अर्ज किया।

सावित्री ने सुना कि तिरुवितांकूर का एक धनी गृहस्थ टीपू सुलतान के हुक्म का प्रतिवाद कर रहा है और उसका नाम चंद्रक्कारन है। इसीलिए उसने सुलतान के दरबार में जाने का साहस किया। वहां गयी तो देखा कि वे सज्जन एक समय नंतियत्तु आनेवाले बाबाजी थे। सावित्री ने उन्हें विनय से प्रणाम किया, क्योंकि वे उसके पिताजी के प्रति स्नेह के ही कारण नंतियत्तु जाया करते थे। उसने भरे दरबार में प्रार्थना की कि टीपू सुलतान ने उसे उसकी कोई भी इच्छा पूरी करने का जो वचन दिया था उसे अब पूरा करें और उसकी प्रार्थना स्वीकार करके सज्जन को छुटकारा दे दें।

सुलतान ने उसकी प्रार्थना मान ली। उन्होंने वृद्ध को इस शर्त पर अजितसिंह के डेरे में भेज दिया कि वह सुलतान के हुक्म के बिना सैनिक छावनी से बाहर नहीं जायेगा।

38

युद्ध का प्रारंभ

टीपू सुलतान ने तिरुवितांकूर के महाराजा पर एक फालतू आरोप की आड़ में युद्ध की घोषणा कर दी। आरोप यह था कि महाराजा ने डच कंपनी से दो छोटे किले खरीद लिये हैं। टीपू ने अषि्क्कोट्टा को तहस-नहस करने के इरादे से सैन्य-संचालन खुद करने की घोषणा की थी। उनकी सेना में चौदह हजार प्यादे थे। अजितसिंह ने अपने अस्थायी शिविर की सुरक्षा के लिए वहीं ठहरने का निश्चय किया।

सुलतान की फौज ने अषि्क्कोट्टा से कुछ मील दूर परकोटों और आवास की व्यवस्था की। दीवानजी टीपू की सैनिक तैयारियों का विस्तृत ब्यौरा बराबर प्राप्त करते रहे।

किले की हालत जानने के लिए खुद टीपू घोड़े पर चढ़कर आये। उन्हें पता लगा कि वह एक व्यापारी संस्था की बड़ी दीवार है, जो कि टूटने लगी है। मगर किले के नजदीक की विशाल झील को देखकर टीपू कुछ घबराये। हवा की गति से उसकी लहरें ऊंची उठती और बड़े जोर से रेतीले तट से टकराती थीं। उन्हें याद आया कि अषि्क्कोट्टा को अधीनस्थ करके आगे दक्खिन की तरफ जाने पर इससे भी बड़े सागरताल मिल सकते हैं।

अषि्क्कोट्टा को लेकर दीवानजी को भी ज्यादा उम्मीद न थी। वे अपने बचपन की यात्राओं में बड़े-बड़े दुर्गों को देख चुके थे। उन्होंने अषि्क्कोट्टा को भी पहले देखा था। उन्हें पता था कि कारखानों को सुरक्षित रखने और पास-पड़ोस के लोगों को भ्रम में डालने के लिए ही उसका निर्माण कराया गया था। उसका एक कोना ढह भी चला था। समुद्रतट से सत्याचल तक एक किले का निर्माण कराने के लिए ही वह किला दीवानजी ने डच लोगों से खरीदा था। दीवानजी ने यह नहीं सोचा था कि टीपू का धावा इतनी जल्दी होगा। तिरुवितांकूर रियासत की सेना का अधिकांश भाग टीपू की सेना की दक्षिणी प्रगति को रोकने के वास्ते सपाट मैदान में डेरा डाले पड़ा था। किले के भीतर कुछ ऐसे साहसी सिपाहियों को नियुक्त किया गया जो दुश्मनों की संख्या या शक्ति की परवाह किये बिना उनसे टक्कर ले सकें। दरारों में बंदूकें और परकोटों पर तोपें जमा दी गयीं। शत्रुसेना के सामने के मार्ग में एक चौड़ी और गहरी खाई खुदवाई गयी। उसमें झील का पानी भर दिया गया। दुश्मनों की चाल को परखने के लिए उचित संख्या में पहरेदारों

को जगह-जगह तैनात किया गया। किले के भीतर ही बंदूकों के कारतूस खाली होते-होते, दूसरी कारतूसभरी बंदूकें देने के लिए सिपाही हाजिर थे। जहां-तहां जंगल के भीतर भी सिपाही खड़े किये गये थे। दीवानजी वहां से कुछ दक्खिनी तरफ एक अस्थायी आवास में डेरा डाले हुए थे। त्रिविक्रमन और अयकन पिल्लै दीवानजी का हर आदेश सैनिक केंद्रों तक फौरन पहुंचाने को तैयार खड़े थे। सेना के भोजन और चिकित्सा का इंतजाम पिछवाड़े की तरफ था। मोर्चे की असुविधा के ख्याल से एक भारी सैनिक दस्ता जरा दक्खिन हटकर तैयार रखा गया था।

टीपू की फौज ने 30 दिसंबर 1788, दिन रविवार को तिरुवितांकूर की सेना पर हमला बोल दिया। तिरुवितांकूर की सेना के ज्यादातर सैनिक किसान थे। टीपू ने उन्हें भयभीत करने के लिए अपनी सेना की पहली कतार में अपनी अबीसीनियाई फौज को रखा था। लाल वर्दीवाले काली सूरत के इन सिपाहियों को झील के किनारे लंबी कतारों में खड़े देखकर किले के पहरेदार आश्चर्य में पड़ गये। अबीसीनियाई फौज के पीछे थोड़ी दूरी पर घुड़सवारों से घिरे टीपू सुलतान राजकीय छत्रों चामरों के बीच हाथी के हौदे पर विराजमान होकर हमले का निरीक्षण कर रहे थे। सुलतान का अनुगमन करनेवालों ने ऊंची आवाज में शृंगनाद किया। सैनिकों के पांवों से उड़ती धूल ने सूरज के प्रकाश को ढक लिया। अब दुर्ग-रक्षक सैनिकों को युद्ध की भीषणता का भान हुआ। तिरुवितांकूर के सैनिकों ने टीपू की फौज के बिगुल का उत्तर अपने बिगुल से दिया। टीपू की सेना अगले आदेश के इंतजार में तैयार खड़ी थी।

दोपहर का समय हो गया। सुलतान की दोनों बगलों से विजयकामना से मुर्गे की बांग सुनायी दी। दुर्गा मंदिर से शंखनाद भी गूंज उठा। सुलतान के नगाड़ों ने आसुरी ध्वनि गुंजायी और सैनिकों को तेजी से आगे बढ़ने की प्रेरणा दी। मध्य भाग पीछे हट गया। दायें-बांये दोनों तरफ की सेनाएं धनुष की तरह बंकिम हो चलीं। इस तरह वह भीषण सेना आगे की ओर बढ़ी। बीच में बाधक बनी नदी में जब छोटा बांध बनाया जा रहा था तब दुश्मन की तोपें दगीं। फिर भी काम जारी रहा।

तीसरे पहर तक पलटन बांध को पार करने लगी। उस समय कुमारन तंपी के नेतृत्व मे तिरुवितांकूर की सेना उनसे आ भिड़ी। घमासान लड़ाई छिड़ गयी। अबीसीनियाई फौज लगातार गोलाबारी करती रही। इसके फलस्वरूप किले के अनेक पहरेदार वीरगति पा गये। तिरुवितांकूर की सेना की बंदूकों की मार से अबीसीनियाई सेना की पांतों में कुछ दरारें जरूर पड़ीं , मगर उन्होंने फिर पंक्तिबद्ध होकर युद्ध किया। दुर्ग के पीछे की सेना ने कप्तान फ्लोरी के आदेशानुसार युद्ध किया। लगातार गोलियों की बौछार खाने के बावजूद दुर्ग को तहस-नहस करने के प्रयत्न जारी रहे। कुछ दूरी पर हौदे में बैठे टीपू सुलतान दुर्ग तोड़नेवालों को प्रोत्साहन देते रहे। तभी दुर्ग की प्राचीर में एक बड़ी दरार

दिखायी दी। अबीसीनियाई फौज उस दरार से होकर किले में दाखिल हो गयी और तिरुवितांकूर की सेना को भारी नुकसान पहुंचाया। सांझ होते न होते टीपू के सिपाही विजयनाद कर उठे।

दीवानजी अपनी सेना की पराजय से अत्यंत दुखी हुए। वे रात को विश्राम भी नहीं कर सके। सिर झुकाये उदास बैठे रहे। सेनापति, उपमंत्री आदि थोड़ी दूर खड़े थे। उनका अंगरक्षक त्रिविक्रमन दीवानजी को ढांढ़स देने की कोशिश कर रहा था।

39

सुलतान का लंगड़ापन

छोकरा डूंडिया ने जिस क्षण बताया कि एक 'कनक कुसुम' टीपू के डेरे में है, उसी क्षण से त्रिविक्रमन का मन उदास रहने लगा। वह युवक दीवानजी से आग्रह कर रहा था कि किसी तरह वे सुलतान के डेरे में जाकर सावित्री को खोजने की उसे अनुमति दें। दीवानजी ने आश्वासन दिया कि वे महाराजा के प्रतिनिधि के रूप में उसे भेजेंगे। इसकी तैयारी के दौरान युद्ध छिड़ गया । प्रयत्न सफल नहीं हुआ।

युद्ध में पराजय के बारे में सोचते हुए दीवानजी उदास बैठे थे कि त्रिविक्रमन उनके पास आया। दीवानजी ने एकांत में ले जाकर उसके कान में कुछ बातें कहीं। फिर कहा, "कुछ भी करो। यह अपमान किसी न किसी तरह दूर होना चाहिए। कल बड़ा युद्ध होगा। उसमें हार गये तो समझो तुम्हारे मामा– ..."

त्रिविक्रमन ने कहा, "अगर हमारी योजना पर अमल हो सका तो दुश्मन को भारी सदमा पहुंचेगा।"

योजना के अनुसार त्रिविक्रमन, अषकन पिल्लै, कृष्ण कुरुप और पंची सहित कोई तीस योद्धा टीपू के सैनिकों के वेश में अषिक्कोट्टा की उत्तर-पश्चिमी दिशा में स्थित नागवन में पहुंचे। पेड़ों व लताओं से घिरे रहने के कारण इस वन में सूरज की किरणें तक प्रवेश नहीं कर पाती थीं।

टीपू के डेरे में बिगुल बजता रहा। किले और डेरे के बीच कई लोग भूतों-प्रेतों की तरह आते-जाते रहे। अबीसीनियाई सिपाहियों ने सोचा कि तिरुवितांकूर के सैनिक अंधेरे में चल रहे होंगे। अतः वे गोले दागते रहे। चारों ओर घायल सिपाहियों का करुण स्वर सुनायी दे रहा था। जगह-जगह लाशें बिखरी पड़ी थीं । कुछ लोगों के मृत शरीरों को सियार नोच रहे थे।

त्रिविक्रमन और उसके साथियों ने इस्पाती अंगरखों और इस्पाती टोपियां पर इस्लामी पोशाकें पहन ली थीं । वे सब कुश्ती, तलवार-भाला सब के प्रयोग में निपुण थे। उन्हें न शीत का भय था, न सर्प का। अषकन पिल्लै ने साथियों को एक लोककथा सुनाकर हंसाना चाहा। पेड़ की टहनियां तोड़कर उन पर बैठा हुआ वह कथा सुनाने लगा। कथा गीत रूप में थी जिसका सार यों था—"विल्ली नामक हरिजन ने वेल्लिक्काट परिवार के

द्वार पर जाकर कहा, 'मालकिन कुछ खाने को दीजिए।' मालकिन ने कहा, "मेरे बड़े भाई मर गये, मामा भी मर गये। उनकी मृत्यु पर तुमने मातम नहीं मनाया, अब क्या मुंह लेकर खाना मांगने आये हो ? कोई है ? इसकी खाल क्यों नही उधेड़ देते ?"

इस पर विल्ली ने बाजी लगायी—"मैं इस कन्या से बलपूर्वक ब्याह करूंगा।" वह कन्या बूढ़ी के वेश में नाव पर चढ़कर बच गयी। विल्ली और उसके हजारों अनुचरों ने उसका पीछा किया। कन्या की दुर्दशा पर एक पेड़ को दया आयी। वह दो खंडों में चिर गया और उस कन्या को अपने भीतर छिपा लिया। बाद में उस कन्या ने अपने प्रेमी एक धनी युवक के घर गायें चराने का काम स्वीकार किया। उसकी पाली हुई गायें हृष्ट-पुष्ट हो गयीं। उसका रहस्य जानने के लिए धनी युवक पहाड़ पर चढ़कर छिप गया। तब उसने देखा कि बूढ़ी अपना वेश बदलकर युवती के रुप में नदी-स्नान करने के बाद गाय का दूध दुहकर पीती है। उस युवती ने लताओं का झूला बनाया और गाना गाती हुई, झूलती रही। चिड़ियों ने उड़ना छोड दिया; सूखा पेड़ हरा हो गया, हरे पेड़ में फूल आ गये, फूलों में फल निकल आये। गायें झूमती रहीं। नागराज ने फन समेटकर गाना सुना। धनी युवक ने उसके पैरों पड़कर उससे ब्याह के लिए मनाया। वे पति-पत्नी वेल्लिक्काट का मेला देखने गये। वहां हरिजन की सेना उन पर टूट पड़ी। धनी युवक ने पूरी फौज को हंसिया से काट डाला।" कहानी सुनकर कुरुप ने शाबाशी दी। अषकन पिल्लै ने एक और गीत शुरू किया।

त्रिविक्रमन ने ठान लिया था कि चाहे जो हो, अपनी प्रेयसी की एक झलक पाकर ही आगे बढूंगा। उसने टीपू के एक छोटे सेनानायक के वेश में उनके डेरे में प्रवेश किया। सब जगह ढूंढ़ा, मगर कोई औरत कहीं दिखाई नहीं दी।उसे पता चला कि अजितसिंह और स्त्रियां वहां नहीं आयी हैं। वह अपने साथियों के पास लौट आया।

लौटते समय देखा कि शत्रुपक्ष का एक सिपाही हाथ में बिगुल लिये खर्राटे ले रहा है। उसने बिगुल उसके हाथ से ले लिया।

दूसरे दिन टीपू ने युद्ध की तैयारियां शुरू की। खुद झंडा फहराया। हाथीदांत और सोने से सजायी गयी पालकी में टीपू बैठ गये। पहले एक सैनिक दल ने बांध पार किया। उसके पीछे सुलतान का दस्ता था। सुलतान के दस्ते के पीछे एक और दस्ता बांध के पार पहुंच गया।

त्रिविक्रमन के साथ किये गये परामर्श के अनुसार दीवानजी एवं कप्तान फ्लोरी के मातहत तिरुवितांकूर सेना टीपू की सेना के सामने आ डटी। यह देख टीपू ने आदेश दिया कि उनकी सारी सेना उनके पीछे आ जाये। तभी दक्षिण से बंदूकें दगीं। टीपू ने उसी दिन युद्ध समाप्त करने के इरादे से जोरदार आक्रमण का हुक्म दिया। तिरुवितांकूर की सेना की तरफ से फिर गोली वर्षा हुई। सुलतान के सैनिक बंदूक में दुबारा कारतूस

भर ही रहे थे कि उसी बीच सर्पवन में से निकलकर इस्लामी वेश धारण किये शत्रु के सैनिक-दस्ते उनमें आ मिले। टीपू की बंदूकें ऊपर उठीं तो त्रिविक्रमन ने बिगुल बजाकर सैनिकों को संकेत दिया—'पीछे हटो' किले की सुरक्षा में नियुक्त अबीसीनियाई सैनिक किले से बाहर कूद पड़े। जो सेना बांध को पार नहीं कर पायी थी वह भी पीछे मुड़ गयी। डेरों से जो फौजें नहीं निकली थीं वे उसी में रुक गयीं। गोली दागने को उठी बंदूकें नीचे कर दी गयीं।

टीपू का बिगुल 'आगे बढ़ो, आगे बढ़ो' का आदेश देता था तो त्रिविक्रमन का बिगुल और जोर से "पीछे हटो, पीछे हटो" का हुक्म देता था। सेना मे भगदड़ मच गयी। अबीसीनियाई सैनिकों को पीछे की तरफ भागते देख टीपू की सेना में कुहराम मच गया और वह भी पीछे की ओर भागी। सुलतान अत्यंत क्रोधित हुए और अपने सैनिकों को फटकारने लगे। उधर अबीसीनियाई सिपाहियों की गरदनें तलवार की धार पर उतरती गयीं। अबीसीनियाई सिपाही इसे केरल का जादू समझकर जान लेकर भागे। चारों तरफ भागनेवाले परस्पर टकराकर नीचे गिरने लगे। टीपू अपने सिपाहियों को फिर से जुटाने लगे, मगर टीपू की फौज की दिशा से ही "पीछे-पीछे" का बिगुल सुनकर दिग्भ्रम छा गया। अबीसीनियाई सैनिकों का यमराज सा एक रुद्रमूर्ति खून से सनी तलवार लिये लड़ाई के मैदान को अबीसीनियाई सैनिकों के कटे सिरों, और कटे अंगों से पाट रहा था। सभी दिशाओं में मृत्यु का आर्तनाद गूंज रहा था। मैसूर सेना के अनेक सैनिक बंदी बनाये गये। एक भीमाकार सैनिक ने टीपू की तरफ तेजी से बढ़ते हुए त्रिविक्रमन से कुछ कहा। त्रिविक्रमन के वार से टीपू के बिगुलवाले का हाथ बिगुल के साथ कटकर दूर जा गिरा। इसके बाद सिर्फ "पीछे-पीछे" की आवाज बची रह गयी। टीपू की फौजें लड़ाई का मैदान छोड़कर भाग निकलीं। जहां देखो वहीं लाशें नजर आ रही थीं। भागनेवालों के पैरों तले रौंदे जाने से कितने ही घायलों के प्राण चले गये। पालकी में बैठे टीपू लाचारी में चारों तरफ देखते रहे। अपने सिपाहियों को कट-कटकर गिरते और भागते देखकर टीपू सुलतान ने असुरों की तरह अट्टहास किया। त्रिविक्रमन ओर उसके साथियों की तलवारों के वार देखकर पालकीवाले भी पीछे की तरफ मुड़े। टीपू का हुक्म अनसुना करके वे बांध की तरफ भागने लगे। सुलतान ने तकिया फेंककर मारा। फिर भी जिधर सींग समायी उधर ही वे भाग चले। पालकी बांध और जलाशय के बीच पहुंच गयी थी। त्रिविक्रमन और उसके साथियों ने हमला जारी रखा। उनके कुछ अनुयायी भी इस दौरान मारे गये थे। यह देखकर क्रोधित अषकन पिल्लै ने एक भालेवाले का काम तमाम करके उसका भाला उठा लिया। इसके बाद उसने भाला पालकी को लक्ष्य करके फेंका। वार इतना जोरदार था कि ढोनेवालों के कंधों से फिसलकर पालकी खड्ड में जा गिरी। भाले की नोक से टीपू के घुटने में एक गहरा घाव हो गया। इससे सुलतान के एक पांव

में जो लंगड़ापन आया वह जिंदगी भर बना रहा। त्रिविक्रमन के साथी, जो मुस्लिम पोशाक में थे, पालकी की कीमती चीजें और गहने बटोरने लगे। इस बीच टीपू के अंगरक्षक अपने मालिक को कंधे पर उठाये उत्तरी दिशा में भागे। त्रिविक्रमन को कंधे पर उठाकर अषकन पिल्लै नाचने लगा।

दीवानजी ने देखा कि टीपू की पालकी उठाये कुछ लोग अपनी तरफ आ रहे हैं। उन्होंने पूछा, "त्रिविक्रमन यह सब क्या है ?" त्रिविक्रमन ने कहा कि इसके लिए सारी प्रशंसा और बधाई का पात्र अषकन पिल्लै है। अषकन पिल्लै ने भाला दिखाते हुए कहा कि सुलतान के घुटने का एक छोटा-सा टुकड़ा इस भाले में अभी भी लगा हुआ। दीवानजी ने खुशी के आंसू बहाते हुए अषकन पिल्लै को गले लगा लिया।

40
भगवान की लीला

पेरिंचक्कोडन की मृत्यु की सूचना मिलने पर कुंचैक्कुट्टि पिल्लै को लक्ष्मी अम्मा और देवकी की दुखद स्थिति का स्मरण आया। उनके प्रति सहानुभूति के कारण वह व्याकुल हो गया। इस बीच कल्लरक्कल पिल्लै ने देवकी से विवाह की अनुमति मांगते हुए महाराज की सेवा में कई पत्र भेजे। पेरिंचक्कोडन राजद्रोही था, इसीलिए भी यह अनुमति जरूरी थी। अनुमति ले आने का वादा करके जो अषकन पिल्लै गया तो उसकी कोई खबर ही नहीं मिल रही थी। इसी माहौल में पेरिंचक्कोडन के मारे जाने की खबर फैली। कल्लरक्कल पिल्लै ने पत्र में सूचित किया था कि अब ब्याह में अड़चन आने का कोई कारण नहीं है। नरेश ने अनुमति दे दी है और कुंचैक्कुट्टि पिल्लै ने कल्लरक्कल पिल्लै को यह बात सूचित भी कर दी है। इसके बाद कल्लरक्कल पिल्लै से कार्यक्कार को प्राप्त पत्र में लिखा था कि देवकी सख्त बीमार है। यह भी लिखा था कि संभवत: शारीरिक अथवा मानसिक व्याधि जन्मांतर के पाप या कोई जादू-टोना इसका कारण हो सकता हे। कल्लरक्कल पिल्लै ने प्रार्थना भी की थी कि उचित उपचार के लिए एक योग्य मंत्रज्ञाता व वैद्य को भेजने का कष्ट करें।

कार्यक्कार एक योग्य व्यक्ति को जानता था। वह ब्राह्मण टीपू सुलतान के आक्रमण के समय मलाबार प्रदेश से तिरुवितांकूर में शरणार्थी के रूप में आया था। उसकी उम्र पैंतालीस वर्ष के करीब थी। वर्षों से ब्रह्मचर्य व्रत पालन करने वाला वह अत्यधिक सुंदर व्यक्ति ज्योतिष, तंत्र-मंत्र और आयुर्वेद में प्रवीण था। कार्यक्कार ने उससे देवकी की चिकित्सा का अनुरोध किया तो वह मान गया और तुरंत अपने सेवकों के साथ पेरिंचक्कोड भवन की ओर चल पड़ा।

फागुन का महीना था। एकाध बार वर्षा हो चुकी थी। पेरिंचक्कोड भवन के आंगन में बाढ़ का पानी अभी सूखा नहीं था। आंगन सूखे व भुरभुरे पत्तों से अंटा पड़ा था। भवन के छप्पर के कुछ पत्ते भी उखड़े पड़े थे। एक बहरी बुढ़िया घर के उत्तरी भाग में चूल्हे पर काढ़ा तैयार कर रही थी। सेवक ने जड़ी-बूटी ला दी थी। लक्ष्मी अम्मा इन बातों पर बिल्कुल ध्यान नहीं दे रही थी। घुटनों पर सिर टेके वह चिंता में खोई हुई थी। उसे अपने अतीत के दिन याद आ रहे थे।

"तभी देवकी करुण स्वर में कराह उठी— "मां ! मां !" लक्ष्मी अम्मा ने उसकी पुकार जरूर सुनी, मगर थकान की वजह से वह झटपट उठकर जा नहीं सकी। फिर दीवार का सहारा लेकर वह उठी और यथासंभव शीघ्रता से पश्चिमी खंड के कक्ष में पहुंची। देवकी ने पूछा, "मां पिताजी. . . मेरे पिताजी आ गये ?" यह सवाल वह उस दिन कितनी ही बार दुहरा चुकी थी। देवकी ने कहा, "मां ? मुझे और किसी की जरुरत नहीं है। उस दिन जो सज्जन आये थे, उनका पद, प्रतिष्ठा, सेवा कुछ भी मुझे नहीं चाहिए। मुझे सिर्फ अपने पिताजी चाहिए। वही काफी हैं। मां, पिताजी की तस्वीर मेरी आंखों में नाच रही हैं। (अधीर होकर) मां, उन्हें बुलाओ न ? मैं उन्हें देखना चाहती हूं।"

लक्ष्मी अम्मा—"प्यारी बेटी ! ऐसा हठ करोगी तो काम कैसे चलेगा ? वे जब आ सकेंगे तभी तो आयेंगे। वे ऐसी जगह नहीं हैं जहां से तुरंत बुलवा लूं। वे लड़ाई के मैदान में गये हैं।"

देवकी—"लड़ाई ? कैसी लड़ाई ? उन्हें बुलाओ न ! मेरे लिए वे किसी से लड़ाई न करें, नहीं मां, वे लड़ाई न करें। हाय ! हाय ! मां, हे भगवान ! हे महादेव ! शंभो !"

लक्ष्मी अम्मा ने कहा, "बेटी, चीख-चीख कर अधमरी क्यों हो रही हो ? तुम्हारे पिताजी जरूर आयेंगे। बाप और बेटी खूब हंसी-मजाक करना।

देवकी ने पूछा, "मैं किसकी होकर रहूंगी, मां ?"

लक्ष्मी अम्मा ने लंबी सांस भरी। वह सोचने लगी कहीं वह अपनी मरणासन्न कन्या को धोखा तो नहीं दे रही है। उसने पति के मारे जाने की खबर सुनी थी। सबसे छिपाकर वह खूब रोयी भी थी। उसने सोचा था, पुत्री को खबर देगी तो वह उसी क्षण जाने दे देगी। एक बार लक्ष्मी अम्मा अनजाने ही बोल उठी थी "मुझे अकेली छोड़कर मत जाना।" इस पर वह पछतायी थी और अपने-आप को कोसा था।

देवकी ने प्रश्न किया—"उस दिन जब सड़क पर लड़ाई छिड़ी थी, तब पिताजी कहां थे ?"

लक्ष्मी अम्मा ने उत्तर दिया—"मैंने क्या देखा था ? जितने मुंह उतनी बातें सुनाई दे रही हैं।"

देवकी ने त्रिविक्रमन का जिक्र किया तो लक्ष्मी अम्मा ने कहा—"पगली ! तेरा छोटा सेनानायक बच गया। उसकी बात सोचकर जान न दे !"

देवकी ने अपने पिताजी के मित्र पांडा के बारे में पूछा तो लक्ष्मी अम्मा ने बताया कि वह तगड़ा आदमी एक झाड़ के पीछे अंतर्धान हो गया था।

देवकी फिर से जब पिता को बुलवाने का हठ करने लगी तो असहनीय दुख से लक्ष्मी अम्मा ने अपना सिर पीट लिया।

उसी समय कल्लरक्कल पिल्लै आ गया। वह रोग से कृशकाय देवकी को फिर से

स्वस्थ प्रसन्न करने की पूरी कोशिश कर रहा था। उसने निश्चय किया कि पेरिंचक्कोडन के मर जाने के बाद लक्ष्मी अम्मा और देवकी को वह अपने घर ले जायेगा। उसकी चिकित्सा में सफलता पाने के लिए तिरुअनंतपुरम् से मंत्र-तंत्र के जानकार एक योग्य वैद्य को ले आने का खर्च खुद उठाने को वह तैयार था। वैद्य और उसके सेवक के आगमन ने लक्ष्मी अम्मा के चिंतन-प्रवाह को भंग कर दिया।

कल्लरक्कल पिल्लै ने पीढ़ा लाकर वैद्य को बिठाया। ब्राह्मण देवता के लंबे दुबले कंचन जैसे शरीर ने लक्ष्मी अम्मा को आकृष्ट किया। लक्ष्मी अम्मा के रूप सौष्ठव ने ब्राह्मण देवता को भी स्तब्ध कर दिया। एक-दूसरे को सिर से पांव तक देखकर दोनों के शरीर सिहर उठे, मानों दोनों मोहाविष्ट हो गये हों। कल्लरक्कल पिल्लै घबरा उठा। वैद्य के नेत्र विस्फारित हो रहे थे। उसकी गरदन की नसें फड़कने लगीं। शरीर पसीने से तर हो गया। दुर्वासा की तरह मानों वह शाप देने को तैयार हो उठा। इसका कारण क्या निरपराधिनी के प्रति विद्वेष-भाव था या अप्रत्याशित साक्षात्कार से जाग उठी पुरानी स्मृतियां ? लक्ष्मी अम्मा ने क्रोधी ब्राह्मण पर से अपनी दृष्टि हटा ली। उसने सोचा, मेरे मन में जो तीखी बातें घुमड़ रही हैं क्यों न उनकी बौछार कर दूं ? वह नारी वस्तुतः उस ब्राह्मण की विवाहिता पत्नी थी। उस पर पर-पुरुष-संसर्ग का आरोप लगाकर उसे जाति-च्युत घोषित किया गया था। बाद में पति को विश्वास हो गया कि उसने अपराध किया है। अब उसे संदेह होने लगा कि कहीं मैं दुबारा वही अपराध तो नहीं कर रहा हूं। फिर भी वह सामाजिक रूढ़ि के अनुसार लिये गये निर्णय पर पुनर्विचार करने के लिए अपनी अंतरात्मा को मनाने को तैयार हो गया। "नारायण, नारायण ! मैं कहां आ फंसा ? यह क्या देख रहा हूं ? क्या अभी तक तुम मरी नहीं ? हाय ! हाय ! तुम नंगय्या ही हो न ?"

कल्लरक्कल पिल्लै कुछ समझ नहीं पा रहा था। उसने कहा, "पंडितजी ! यह पेरिंचक्कोडन की पत्नी है। इसकी पुत्री भीतर है। उसी की चिकित्सा करने के लिए कार्यक्कार ने आपको यहां भेजा है।"

नंपूतिरि उठ खड़ा हुआ। उसे पूरा यकीन हो गया कि वह नंगय्या ही है। अब उसे यह जानने की व्यग्रता हुई कि वह अपराधिनी थी या दया की पात्र। फिर सोचा कि यह बात तो बाद में भी पूछी जा सकती है। वह कल्लरक्कल पिल्लै के पीछे उस कमरे में पहुंचा जहां देवकी लेटी थी।

देवकी अधमुंदी आंखों से धीमे स्वर में बोली, "पिताजी ! बचाइए। हाय ! हाय ! ये कैसा पाप है। हाय ! मेरा जीवन कैसा हो गया ! अब सहा नहीं जाता ! हे महादेव !"

उसकी बांहें शिथिल होकर बिस्तर पर पसर गयीं।

नंपूतिरि को लगा कि कन्या का मोहक रूप अंगों की सुषमा मुखाकृति, स्वर-माधुरी

और 'महादेव' की पुकार सब कुछ चिरपरिचित है। उसका शरीर पसीने से तर हो उठा। नाभि के भीतर से जैसे आग की लपट-सी उठती लगी। ब्राह्मण ने हिम्मत करके कन्या का हाथ अपने हाथ में ले लिया और नब्ज को जांचने लगा। उसे लगा उसके सारे शरीर में चंदन का लेप हो रहा है और उसका हृदय एक विचित्र आनंद से भर उठा। उसी समय कन्या बोली, "पिताजी, मेरे और नजदीक बैठिए न ! आपको देखकर जी ठंडा कर लूं और परम पद प्राप्त करूं। आपकी ही पुत्री हूं न ?" यह सुनकर ब्राह्मण देवता को अपने दांपत्य जीवन के अंतिम दिन स्मरण हो आये। अपनी वर्तमान स्थिति को पहचानने में असमर्थ होकर वह घबरा उठा। लक्ष्मी अम्मा भी अपने भावों को दबाने में असमर्थ होकर जोर से रो पड़ी। एक पल बाद बोली, "मैं निरपराध हूं, कुलदेवता साक्षी हैं। भगवान महादेव ने जैसा लिख दिया उसे चुप मार कर सहन कर रही हूं। इसे अपने कर स्पर्श से अनुगृहीत करते जाइए। देवी अंबा इसे अच्छा कर दें। मेरी जिंदगी तो यों ही गुजर गयी।"

लक्ष्मी अम्मा की बातें सुनकर ब्राह्मण स्तब्ध रह गया। वह कन्या की पीठ बड़े स्नेह से सहलाता रहा। उसकी आंखों से अविरल अश्रुधारा बह रही थी। देवकी शांत-संतुष्ट हो सुख-निद्रा में लीन हो गयी। ब्राह्मण ने सेवक से अपना बटुआ मंगवाया। उसने तीन बार बटुए में से मुट्ठी भर-भर के स्वर्ण-मुद्राएं उठायीं और बेटी के बिस्तर पर डाल दीं। फिर दायां हाथ बढ़ाकर उसका माथा छूकर आशीर्वाद दिया और चल पड़ा।

कल्लरक्कल पिल्लै ने उससे मां-बेटी के गांव और परिवार का पता करना चाहा। पूछने पर भी ब्राह्मण ने कुछ नहीं बताया। ब्राह्मण के जाते ही लक्ष्मी अम्मा जड़ से उखड़े पेड़ की तरह जमीन पर गिर पड़ी।

नागंतकि नंपूतिरि के पवित्र करों में और उसके बहाये अश्रुजल में स्वर्ग-सुधा की सी संजीवनी शक्ति थी। पिता व पुत्री का वह मिलन भगवान की लीला थी। लक्ष्मी अम्मा एक नंबूतिरि स्त्री थी, जिसे स्मार्तविचार[1] के बाद जाति-च्युत कर दिया था। उस समय वह गर्भवती थी। निराश्रित होकर भटकती हुई वह एक जंगली पथ पर मूर्च्छित होकर गिर पड़ी। लोगों को लूटकर धन एकत्र करता पेरिंचक्कोडन संयोग से उसी रास्ते आया। उसकी नजर बेहोश महिला पर पड़ी तो दयावश वह अपने घर लाया। सेवा-शुश्रुषा से वह होश में आ गयी। भगवान का आदेश मानकर वह पेरिंचक्कोडन की पत्नी बन गयी।

---

1 स्मार्तविचार नंबूतिरि समाज का एक पुराना, धार्मिक रिवाज था। किसी नंबूतिरि स्त्री के विषय में पर पुरुष-संसर्ग का संदेह होने पर पंडितों की मंडली सामूहिक विचार करती थी। यही स्मार्तविचार था। अंत में दंड स्वरूप जाति-च्युत करके जीवित अवस्था में ही उसका पिंडदान कर दिया जाता था और उसे मृत मान लिया जाता था।

एकाध महीने में देवकी स्वस्थ हुई। अब वह घर के भीतर चल-फिर सकती थी। उस समय उसके चेहरे पर साधारण स्त्रियों जैसी भौतिक प्रेम की वासना नहीं झलकती थी। एक संन्यासिनी की-सी आभा थी, जिसे देख भक्ति से प्रणाम करने को जी चाहता था।

उसके नयनों की कांति अरुंधती तारिका सी सौगुनी हो उठी थी। माता भी उस पर वात्सल्य प्रकट करने का साहस नहीं कर पा रही थी। उसकी शोभा महालक्ष्मी के कमल की सी कांति बिखेर रही थी। उसके श्वास-प्रश्वास में भी सांसारिक बंधनों से मुक्ति का अनुभव हो रहा था। उसके मन-दर्पण में अपने पिता की मूर्ति एक नये रूप में प्रकट हुई थी। अब उसे उसी रूप में देखने या उसके लालन का सुख पाने की इच्छा नहीं रही। उसकी आत्मा साधारण मानवों से बहुत दूर ऊंचाई पर स्थित-सी लग रही थी। उसकी स्मृति में अब जो कनकमूर्ति थी वह चिन्मय थी।

कल्लरक्कल पिल्लै तिरुअनन्तपुरम गया और कार्यक्कार से लक्ष्मी अम्मा के अतीत की सारी बातें जान लीं। साथ ही देवकी के प्रति उसका प्रेम समाप्त हो गया। उसने सोचा कि ये चांडाल हैं और प्रतिलोम विवाह शास्त्र सम्मत भी नहीं है। इसलिए उसने पेरिंचकक्कोड परिवार में जाने का कार्यक्रम तक स्थगित कर दिया। इस प्रकार उपेक्षिता लक्ष्मी अम्मा और देवकी को दूसरे बंधुजनों ने सहायता दी। अषकन पिल्लै के भाई बिरादरी के व्यंग्य और सामाजिक टिप्पणियों की परवाह किये बिना उन स्त्रियों की मदद करते रहे।

घोर वर्षाकाल की एक रात्रि थी। बिजली की चमक और बादलों की कड़क से देवकी एक आनंदमय स्वप्न से जाग उठी। उसके मन में उभरे एक स्वर ने उसके अंदर अवर्णनीय प्रेम जगाकर उसके हृदय को उदास कर डाला। बिजली लगातार कौंध रही थी। डर कर उसने आंखें खोल दीं। उसने देखा—दो परिचित देह परस्पर हाथ में हाथ दिये खड़े थे। देवकी ने उस प्रणयी युगल से जो प्रार्थनाएं कीं उनका उत्तर निठुर झंझा और वर्षानाद ने ही दिया। वह मूर्च्छित हो गयी । फिर उठी और क्षणभर बाद बिस्तर पर गिर पड़ी। बेटी की तबीयत का हाल जानने लक्ष्मी अम्मा यहां आयी तो पुत्री की देह से टकराकर गिर पड़ी। वह बेटी को छाती से लगाये खड़ी हुई और दोनों बिस्तर पर गिर पड़ीं। मां की छाती से लिपटी देवकी को पिता के वात्सल्य की अनुभूति हुई। "पिताजी, पिताजी" कहती हुई वह अपने-आप निद्रालीन हो गयी।

इस घटना के मुश्किल से दो घंटे बाद कल्लरक्कल पिल्लै के भवन का पश्चिमी दरवाजा खुला। खर्राटा लेते गृहस्वामी को बारिश की आवाज के कारण यह आवाज सुनाई नहीं पड़ी। पांच-छः काले-कलूटे मुस्टंडे उस कमरे में घुस आये। घर के किसी सदस्य को इसका पता नही लगा। कल्लरक्कल पिल्लै ने भी चूं तक नहीं किया। वे लोग उसे उठाकर बाहर ले आये और दीवार फांदकर झाड़ में घुस गये। अब उन्होंने

कल्लरक्कल पिल्लै को जमीन पर खड़ा कर दिया। पिल्लै ने उनसे हाथ जोड़कर दया की याचना की। बिजली की रोशनी में कल्लरक्कल पिल्लै ने एक आदमी को पहचान लिया और बोल उठा, "अरे ! पाजी ! तू यहां भी आ गया।" उस व्यक्ति का उत्तर पूरे जंगल में गूंज उठा, "मेरे झूठे मालिक ! आप अपने लिए बड़ी दर्दनाक मौत का गड्ढा खोद रहे हैं ! मालिक ! पांडा की छोटी सी गुफा में रहने पर आप मर्द बन जायेंगे।" पिल्लै समझ गया कि बीमार देवकी को असहाय छोड़कर मौत की तरफ ठेलने के अपराध में पकड़ा गया है और प्रतिज्ञा-पालन करके ही वह मुक्त हो सकेगा। वे पिल्लै को बोरे में भरकर उठा ले गये।

41

सतीत्व की सुरक्षा का शस्त्र

सावित्री को अजितसिंह की पत्नी अपनी औरस पुत्री मानकर उसकी सुरक्षा में सावधान रहती थी।

सावित्री के संपर्क ने चंद्रक्कारन को दानव से मानव बना दिया। वह अपने भांजे की और अपने परिवार की प्रतिष्ठा व यश के बारे में बताकर सावित्री का जी बहलाता था। मधुर संगीत से जैसे नाग वश में हो जाता है उसी तरह सावित्री के मधुर वार्तालाप से प्रभावित चंद्रक्कारन उसके सारे अनुरोध व आदेश मान लेता था। वह अपने हाथों की गयी निष्ठुर हत्याओं पर पछताता था। बच्चों की तरह वह हंसी-विनोद में लगा रहता था।

टीपू के घुटने में चोट लगने की खबर सुनते ही अजितसिंह नामी वैद्यों को लेकर सुलतान के डेरे में पहुंचा। घाव शीघ्र भर गया। सुलतान की सेहत फिर से अच्छी हो चली। आक्रमण की तैयारियां नये सिरे से प्रारंभ हो गयीं। इसका प्रधान संकेत अमरावती के समीप का महादेव मंदिर था।

एक दिन सावित्री संध्याकाल में इस मंदिर की परिक्रमा के लिए पहुंची। ऊंची भूमि पर स्थित मंदिर में बहती मीठी बयार और वहां की प्राकृतिक सुषमा ने उसके मन में भगवान की महिमा के प्रति श्रद्धाभाव बढ़ाया। वह जब परिक्रमा पथ पर चल रही थी तभी एक सुंदर हाथ उसके हाथों की तरफ बढ़ता नजर आया। वह एक बलिष्ठ और सुंदर युवक था। उस युवक ने घुटने टेककर सावित्री से प्रणय-प्रार्थना की, जैसी कीचक ने सैरंध्री से की थी। उसने याचना की कि सावित्री उसकी अभिलाषा पूरी करे। वह युवक था टीपू सुलतान का शाहजादा फतह हैदर। सावित्री ने पूछा, "क्या शाहजादे जानते हैं कि अब्बाजान की कसम तोड़नेवाले बेटे को किसके गुस्से का सामना करना पड़ेगा ?"

फतह ने कहा, "मेरी विनती है कि आप मेरी बेगम का पद स्वीकार करें।"

सावित्री—"मैं इसी क्षण पिताजी की सेवा में इस ज्यादती की सूचना पहुंचाऊंगी।"

फतह—"मैं कन्यादान मांगते हुए अब्बाजान के कदमों पर अपना सिर चढ़ा दूंगा। अगर पिताजी यही फैसला करें कि भविष्य में मैसूर के लिए पटरानी नहीं चाहिए तो फकीर बन जाऊंगा।"

सावित्री—"सुलतान बहादुर ने मुझे आपकी बहन के रूप में यहां रखा है।"

फतह—"वाह ! कैसी बचपने की बातें करती हो ? सारे औरत-मर्द क्या बहन-भाई हैं। यह समझ लो कि हमारी बेगम का पद तुम्हारे राज्य की रानी का पद भी होगा।"

सावित्री—"उस पद की अभिलाषा करने का हक मुझे नहीं है। मैं हृदय से किसी और व्यक्ति को पत्नी के रूप में समर्पित हो चुकी हूं।"

फतह—"अरे धत् ! जब टीपू सुलतान का शाहजादा शादी की अर्जी लिये हाजिर हो तब और किसी की बात करना बहुत बड़ी बेवकूफी है।"

सावित्री—"नहीं उन्हें 'और कोई' कहना ठीक नहीं है। वे हजरत मोहम्मद के जमाने से प्रतिष्ठित वंश की संतान हैं। एक मशहूर आदमी के वारिस भी हैं।"

फतह—"क्या कह रही हो ? शाहजादों की पीढ़ी का जिक्र करना गुस्ताखी है। सिर कलम करानेवाली बगावत है।"

सावित्री —(हंसते हुए) "राजद्रोह के लिए दंडित वंश की सदस्या मैं भी हूं।"

फतह हैदर ने खंजर निकाल लिया। सावित्री ने उससे भी बड़ी चमचमाती कटार निकाली।

फतह—"वाह ! मनचली ! तुमने हथियार चुरा लिया है न ? यह तुम्हारी खूबसूरत उंगलियों को गंदा कर देगा। इसे तुरंत फेंक दो।"

सावित्री—"मेरे धर्मनिष्ठ प्रभु अजितसिंह नरेश ने अपने पास सुरक्षित रखने की सलाह देकर यह हथियार मुझे दिया है। शाहजादा साहब ! आपने जिस 'मनचली' शब्द का प्रयोग किया वह आपके गौरव को कितना गिराता है, आप जानते हैं ? अभद्र शब्द सुनने वाले को ही नहीं कहनेवाले को भी नीचे गिराते हैं। आप जाकर कुराने पाक का पाठ करें। तभी शायद आपको कुछ नेक नसीहतें मिलें।"

फतह कटार हाथ में लिये सावित्री की तरफ बढ़ा।

सावित्री—"शाहजादा साहब, कान खोलकर सुनिए। आप इस खयाल से मेरी तरफ न देखें कि आप हथियार चलाने में माहिर हैं और मैं एक मामूली लड़की हूं। मेरे बड़े मामाजी वंचि राज्य के सेनापति थे। पिताजी के पूर्वज भी राजपरिवार की छत्रछाया में ऐसे ही पदों पर रहे हैं। मेरे बचपन के खेल के मैदान हथियारों के अखाड़े ही रहे। आप मेरी तरफ हथियार बढ़ायेगें तो शायद जवाब में कुछ लेकर भी जायेंगे। इसे स्त्रीत्व का अभाव मानकर मेरी हंसी न उड़ाना। अगर आपकी मां बेगम साहिबा और किसी तरह का बर्ताव करें तो . . . "

एकाएक एक ठहाका सुनकर सावित्री अपना वाक्य पूरा नहीं कर सकी। तभी हुक्म हुआ—"फतह ! इसी वक्त मोर्चे पर चलो।" फतह हैदर तुरंत चंपत हो गया। वह हुक्म टीपू सुलतान का था। घाव भरने के बाद वे लाठी टेकते, दर्द सहते बड़ी मुश्किल से

चलने का अभ्यास कर रहे थे। तभी सावित्री और फतह हैदर का संवाद उनके कानों में पड़ा। वे सावित्री से नाराज नहीं हुए। उलटे मुस्कराते हुए बोले—"शाबाश ! किसी पराये आदमी की ज्यादती देखकर फतह हैदर की मा महाल अगर सावित्री बेटी की सी बहादुरी और पवित्रता न दिखाये तो उसी क्षण हमारी कटार से उनकी गरदन कटकर दो टूक हो जायेगी। हमारे दोस्त अजितसिंह ने तुम्हें जो हथियार दिया है उसे हमारी तरफ से भी तुम अपने चरित्र की सुरक्षा के लिए धारण किये रहो।"

इसके बाद बातचीत में जरा भी समय गंवाये बिना मुलतान वहां से चले गये।

42

कार्यक्कार की कुर्बानी

तिरुवितांकूर रियासत की जनता ने अषिक्कोट्टा की फतह को महाराजा की षष्टिपूर्ति से भी अधिक हर्षोल्लास से मनाया। मगर दो महीने बाद टीपू ने फिर से चढ़ाई कर दी। उन्होंने, लंगड़ाते हुए ही सही, अय्यप्पन मार्तंडपिल्लै के द्वारा निर्मित नेडुंकोट्टा के ध्वंस का स्वयं उद्घाटन किया। एकाध मास में दुर्ग धराशायी हो गया। टीपू की फौजें आलंगाड और परवूर पहुंची। वहां चारों ओर लूटपाट और आगजनी का नजारा था। झोंपड़ी से लेकर महल तक के लोग थर्रा उठे। बहुमूल्य वस्तुएं कुओं और संडासों में छिपाकर अपने साथ यथासंभव समान लिये लोग सुरक्षित स्थानों की खोज में चले गये। दीवानजी टीपू के द्वारा आक्रांत स्थानों से दक्षिण में किला, परकोटा आदि का निर्माण कराने लगे। कुर्याप्पिल्लि, कोडुंगल्लूर व मुनंपम् के किले टीपू के कब्जे में आ गये। तिरुवितांकूर सरकार अंग्रेजी फौज की मदद का इंतजार कर रही थी, मगर वह भी नहीं मिली।

नरेश अत्यंत दुखी हुए। उनके भोजन, निद्रा और विश्राम में बाधा पड़ गयी। युद्ध में मारे गये सैनिकों के परिवारों के पालन का दायित्व उन्हें और भी चिंतित कर रहा था। वे आठों पहर भगवान की प्रार्थना करते हुए पलंग के इर्द-गिर्द टहलते शयनकक्ष में ही बने रहे। उस कक्ष के कोने में कुंचैक्कुटि पिल्लै कार्यक्कार अपने झबरे केश फहराये और दाढ़ी-मूंछ हथेलियों से ढके खड़ा था। महाराजा के प्रश्नों का कोई उत्तर उसके मुंह से नहीं निकल रहा था। उसकी मंशा यह थी कि जब दीवानजी के फौरन आने की उम्मीद है तो वह क्यों कुछ कहे। वह बाहर वर्षा के आसार देखता तथा उंगलियों से कुछ हिसाब लगाता खड़ा था।

नरेश—"तुम्हारी जिन आंखों ने सावित्री का पता लगा लिया था, वे आंखें इस बार कहां गयी थीं ? (*कार्यक्कार ने उत्तर दिशा की खिड़की के बाहर झांककर आसमान की रंगत को और एक बार ध्यान से देखा*) आलंगाड और परवूर भी हमारे हाथ से चले गये।"

कार्यक्कार—"जो बाद में आये वे पहले गये।"

नरेश—"क्या तुम्हारा मतलब यह है कि जो शुरू में थे वे भी बाद में जायेंगे ?"

कार्यक्कार—"एक दो में पैदा होकर सात-आठ में झड़नेवाले तुरंत उगते हैं। यही देखा गया है।"

नरेश—यों पूरे पके हुए लोग ही उधर गये न?

कार्यक्वकार—"वे निकम्मे हैं। उनका भोजन था बासी भात और केले की पत्तल। दुश्मनों से संख्या में भी कम थे। वहां खेती करके खजाना भरनेवाला दल अलग होता है, फौजें जमा करनेवाला अलग। हमारा भोजन था विदुर का साग। सात समुंदर पार की एक राक्षस सेना भी उनके साथ है। वे नये-नये किले बनवाने की जगह अपनी संपत्ति नये और आधुनिक शस्त्र खरीदने में खर्च करते हैं।"

नरेश—"हमारे नजदीक पड़ाव डाले पड़ी अंग्रेज फौज भी हमारी सहायता नहीं कर रही है।"

कार्यक्कार—"उससे तो हमारे पैसे ही बचेंगे। श्रीपद्मनाभ हमारी रक्षा करके हमें विजयी बनावें।"

नरेश—"देवमंदिर ध्वस्त हो रहे हैं।"

कार्यक्कार—"जो देवता अपने घर की रक्षा नहीं कर पाते उनका स्वर्ग में वास करना ही बेहतर है।"

नरेश को क्रोध आने लगा। कार्यक्कार ने उस पर ध्यान नहीं दिया, न उसकी परवाह की। नरेश ने दीवान को दोषी ठहराया। वे जानते थे कि कार्यक्कार के मन में दीवान के प्रति अनन्य स्नेह और श्रद्धा थी। देखते-देखते वर्षा प्रारंभ हो गयी। कार्यक्कार ने फर्श पर झुककर कान लगाये।

नरेश—"उसका हाथ लगने से ही सारी आफत आयी है।"

कार्यक्कार—"इस समय निर्माण कार्य कनैत का नहीं है कि आसानी से घुसकर लांघ जाये। और देवनारायण नरेश जैसा शत्रु भी नहीं है।"

नरेश—"चाहे कपट से भी काम लेना पड़े, विजय तो प्राप्त करनी ही है। पीठ दिखाकर भागने की भूल किसकी थी ?"

कार्यक्कार—"जो लोग अपना कलेजा खुद काटकर भेंट चढ़ाते हैं उन्हें आखिर में यही इनाम तो मिलता है।"

नरेश —"अगर कलेजा देने को तैयार होते तो टीपू आगे न बढ़ता। खर्चा करते-करते खजाना खाली हो गया। गरीब भूखों मरते हैं। जहां देखो वहीं सर्वनाश. . . "

कार्यक्कार—"जिस शिष्य को खिला-पिलाकर पाला, शिक्षा दी, उसे शाप मत दीजिए। उसके दिल की धधकती ज्वाला को कौन पहचानता है ?"

नरेश—"किसका दिल धधकता है ? हिम्मत न हो तो रोना ही पड़ता है। अभिशप्त व्यक्ति सैन्य संचालन करें तो . . . ।"

कार्यक्कार —"उन्हें एक जंग-खाई तलवार दी गयी थी, न कि वैष्णव धनुष। पहनाया गया था एक सफेद कपड़े का कवच न कि जिरह-बख्तर।"

इतना कहने के बाद वह मंत्रज्ञानी तनकर खड़ा हो गया। वह उस राजमंदिर को आशीष देकर न जाने कौन-सा मंत्र रटता, हाथ जोड़े बाहर की तरफ चलने लगा। नरेश ने खिड़की से बाहर झांककर भारी वर्षा में भीगते कार्यक्कार को आवाज दी। अपने प्रधान सेवक को उसे बुलाने भेजा। मगर कोई व्यक्ति कार्यक्कार या उसकी परछाई तक का पता न लगा सका। कार्यक्कार अपने मित्रों के प्रयत्नों की सफलता सिद्ध कराने का दृढ़ निश्चय करके समीपस्थ पर्वतों को पार कर गया।

सात-आठ दिन गुजर गये। अविराम घनघोर वर्षा, बिजली और बादल की कड़क, इसी के बीच विष्णु और महादेव की शक्ति का सम्मिलित रूप युवा जांबवान सा एक युवक। सह्याद्रि की घटाओं पर चढ़ता ऊपर जा रहा था। हाथ में एक झोला और तलवार के अलावा कुछ डंडे भी थे। वह न बाएं निगाह डालता था न दाएं, सिर्फ आगे बढ़ा जा रहा था। लगता है, मानव समाज से विरक्त होकर उसने अपने शरीर को पर्वतरूपी गिद्धों का भोजन बनाने की प्रतिज्ञा की हो। बाघ व चीता जैसे हिंसक जीवों से भरे वन उसके लिए मानों सुहावने उपवन थे। कंटीले पौधों के बीच से चलना मानों उसके लिए कमल दलों पर कदम रखना था। वह भीषण वन में प्रवेश कर गायब हो गया। बाद में दूर एकाकी पर्वतश्रृंग पर दिग्विजयी सा खड़ा प्रकृति सौंदर्य का आनंद लेता दिखायी दे रहा था। फौलादी शरीर वाला वह वीर पुरुष घनी वृक्षशाखाओं को भेदते हुए भीतर घुसा। वहां बच्चों को दूध पिलाती बाघिन को देख खुश हो गया। इसके बाद वह घने वृक्षों से भरे पहाड़ी दर्रे के भीतर तेजी से प्रविष्ट हुआ। हाथियों का दल उसे खरगोशों का झुंड सा आनंद दे रहा था। लतानिकुंज को काटते हुए वह एक पहाड़ी नाले के किनारे पहुंचा और वहां थोड़ी देर सुस्ताया। फिर कंदमूल और फल खाकर भूख तथा झरने का पानी पीकर प्यास बुझायी। उसकी यात्रा जारी रही।

कुछ दूर आगे बढ़ा तो उसने एक दुर्गम पहाड़ देखा। वह पेड़ों के तने के सहारे चढ़ते-चढ़ते पहाड़ की ऊंचाई पर पहुंच गया। वहां एक बड़ी चट्टान थी जो किसी भी वक्त लुढ़क सकती थी और उस पर एक बाघ बैठा नजर आया। आदमी को देख बाघ ने पूंछ हिलायी। उसके छलांग लगाते ही वह चट्टान हिल गयी और नीचे की तरफ लुढ़कती, भीषण ध्वनि करती, पथ में पड़े जीवों और वृक्षों को नष्ट करती दूर जा गिरी। इतने में तेज आंधी आयी। अनगिनत पेड़ जड़ से उखड़कर धराशायी हो गये। यात्री की गति में भी बाधा पड़ी। वृक्षों के टूटने-गिरने की आवाज सुनकर जानवर अपने खोहों और कोटरों से भाग निकले। वह रात भर एक पेड़ के ऊपर बिना पलक झपकाये बैठा रहा।

इस तरह पहाड़, नदी और दर्रे लांघता, हिंस्र जीवों से भरे नदी-तट एवं कुहरे से एकदम धुंधले पड़े बीहड़ों को पार करता वह आदमी एकाध दिन में चंद्रमंडल को चूमनेवाली चारों तरफ नीली छवि बिखेरती एक चोटी पर आ गया। कुंचैक्कुट्टि पिल्लै एक भीषण प्रतिज्ञा करके यहां आया जो और किसी को विदित न थी। यहां आने पर उसे सामान्य लोगों के लिए दुर्लभ एक अलग ही दुनिया का दर्शन प्राप्त हुआ।

इस विश्वदर्शन का हर अंग विश्वविधाता की अपार कल्पना का दृष्टांत था। अनंत दीर्घतरंगित होते गिरिश्रृंग; उनके नीचे पर्वतीय घाटियां, उनके नीचे मेघों की पंक्तियां, मेघों के परस्पर टकराने से निकलती बिजली की कौंध; दृष्टि को ढकते कुहरे के पर्दे, पर्वतमालाओं की हरियाली; आंखों को कष्ट देता विशाल गेरुआ विस्तार देखकर कार्यक्कार ने स्वर्गोपम आनंद का अनुभव किया। उसने अनुमान लगाया कि मेरे प्रयत्न के फलस्वरूप कितनी जीवहानि और कितनी स्थायी शांति की संभावना है। फिर पर्वत की ऊंचाई से सटी वृत्ताकार घाटी में कार्यक्कार ने प्रवेश किया।

वहां कार्यक्कार को अवर्णनीय प्राकृतिक सुषमा के दर्शन हुए। एक विशाल सरोवर था, जो इंद्रनील मणि से निर्मित लग रहा था। आकाश का सांवलापन और तट के तरुओं की हरीतिमा उसके जल में प्रतिबिंबित थी। इस सरोवर से निकली धाराएं दर्रे की ओर मुड़ती थीं। कितने ही ऋषियों ने इस स्थान को ध्यान व समाधि के लिए चुना था। कार्यक्कार ने स्मरण किया कि उसे दीक्षा देने वाले मुनिवर ने भी उसी स्थान पर तप किया था। दूर खड़े पर्वतशृंग भी इस विशाल सरोवर में प्रतिबिंबित थे। मंद पवन सरोवर की लहरों को झूला झुलाता नृत्य कर रहा था। चारों तरफ खड़े घने वृक्षों की शाखाएं शीतल हवा में झूल रही थीं। ये शाखाएं सरोवर की अगाधता को ढंके हुई थीं। चारों तरफ विशालकाय हाथी वृक्षों की छाल से अपने शरीर रगड़ते हुए आनंद ले रहे थे एवं वृक्षों को झुला रहे थे। वे वृक्षों की शाखाओं को तोड़कर पैरों से कुचलते थे और नरम बनाकर खा लेते थे। युवा हाथी विहार करते-करते आपस में उलझ पड़ते थे। कोई किशोर हाथी जल में फंसकर डूब जाता तो हाथियों का दल भयभीत होकर चिंघाड़ता था। वन में भी मानव परिवारों का-सा सुख-दुख देखकर कार्यक्कार मुस्कुराया। उसने आसपास दुर्घटना से अछूते गज-परिवारों को भी देखा। चीतों का स्वर्ण वर्ण तथा लाल एवं काले बाघों के भीषण वर्ण भी उसकी दृष्टि को आकृष्ट कर रहे थे। घाटियों की हरियाली से भरे सपाट स्थानों पर हिरन विचरण कर रहे थे। गुड़हुल के रंग के अजगर पेड़ों के तनों से लिपटे नजदीक से गुजरने वाले जीवों को निगल लेने को मुंह खोले तैयार थे। विविध रूपवाले वानर मानव दर्शक को देखकर खीस निपोरते हुए खांव-खांव कर उठे। उनमें से कुछ सिर को एक तरफ टेढ़ा करके हंसी उड़ाते से दिखते थे। फिर वे डालों को झुलाते एक पेड़ से दूसरे पेड़ पर छलांग लगाते हुए गायब हो गये। सरोवर के जल में रंग-रंग

के फूल झड़े थे। उनके बीच में पनिहा सांप भी तेजी से तैर रहे थे। पर्वत और वन का मिला-जुला प्राकृतिक सौंदर्य देख कार्यक्कार विस्मित हो उठा। उसने सोचा क्यों न यहीं सन्यास ग्रहण कर लूं। किंतु बाद में अपने आगमन का ध्येय और साथ लाये ताड़पत्र-ग्रन्थ के बारे में सोचकर उसने निश्चय किया कि लोकसेवा के जरिये ही मुक्ति प्राप्त करूंगा। सरोवर के दायें किनारे चलते हुए वह एक सुहावने स्थल पर पहुंचा। वहां दीखे औषधि-वृक्षों के पत्ते बटोरकर उसने भोजन किया। कुछ और आगे गया तो उसने अपने गुरुदेव द्वारा वर्णित पर्वतमुख देखा। कार्यक्कार ने गौर से देखा कि उस सरोवर के चारों ओर खड़ी पर्वत श्रेणियों में एक दर्रा है और दर्रे के नीचे का स्थान ढलवां है। अपनी यात्रा की सफलता की संभावना से वह हर्षित हुआ। उस भूभाग में सरोवर की सीमाएं एक कम चौड़े बांध से सुरक्षित की गयी थीं। कार्यक्कार ने झोला कंधे से उतारकर नीचे रख दिया। फिर वह कुदाली से सरोवर के बाहर एक कुआं खोदने की कोशिश में लग गया। तलवार की नोक से उंगली काट कर खून की बूंदें निकालीं और उन रक्त-बिंदुओं में भगवान वरुण का ध्यान किया। फिर लोहे के मूसल को बांध में धंसाये हुए कुछ समय तक मंत्रजाप और ध्यान में लीन रहा।

इसके बाद उसने कुएं का काम फिर शुरू किया। यह दस हजार फुट गहरी ढलवां जमीन पर था। इसलिए काम आसान था। फिर भी दो-तीन दिन की मेहनत के बाद ही थोड़ा-थोड़ा करके जल छलकने लगा। उसने दो दिन और कठोर प्रयत्न किया। फिर उसने कुएं से लेकर ताल से सटी शिला तक दो फुट चौड़ी नहर बनायी। ऊपर की मिट्टी हटाने पर चट्टान दिखायी पड़ी। पता नहीं चल रहा था कि वह चट्टान कितनी बड़ी होगी। कार्यक्कार का दिल चंचल हो उठा। उसने ताड़पत्र का ग्रंथ फिर से खोलकर पढ़ा और अपने मन को आश्वासन दिया कि पंडितों द्वारा बताया हुआ ईश्वरहित निश्चय ही संभव है। कार्यक्कार ने वह रात भी वृक्ष के ऊपर बितायी।

दूसरे दिन प्रभात में कार्यक्कार ने सरोवर में हाथ-मुंह धोया। कमर की धोती को छाती के कवच के रूप में पहन लिया। इसके बाद लोहे का मूसल लिये नहर में कूद पड़ा। सरोवर के दूसरे पार पर्वत के ऊपर उदित हुए सूर्य देव को प्रणाम करते हुए वह दो घड़ी तक प्रार्थना में लीन रहा। अपनी जन्मपत्री का अंतिम भाग एक बार और पढ़ने के बाद उसने निर्निमेष नेत्रों से सूर्य भगवान की ओर देखते हुए प्रार्थना की—"हे भगवान! मैं अपने लिए कुछ नहीं मांगता। आशीर्वाद दें कि पवित्रात्मा नरेश श्रीरामवर्मा उत्तम स्वास्थ्य और वैभव प्राप्त करें एवं अमर यश के भागी हों। जिस गुरुदेव मंत्रिसत्तम ने मुझे उपदेश दिया था कि धर्मानुसार किया जानेवाला सांसारिक क्रियाकलाप भी मोक्षदायक होता है उसकी जय हो! हे कालदुर्गे! संभव हो तो मेरे गुरुदेव को दुर्घटना एवं अपमान से बचाना। किंतु धूर्तता, गर्व और दुर्नीति की विजय अनिवार्य दीख रही है। ईश्वर इस

अल्पजीवी आत्मा को शाश्वत कल्याण प्रदान करें। इसके बाद कार्यक्कार ने अपनी जन्मपत्री सरोवर में फेंक दी।

सरोवर का जल छलक-छलककर बांध को गीला कर रहा था। कार्यक्कार ने लोहे की मूसल चट्टान से नीचे की ओर धकेल दी। फिर योग सिद्धि से प्राप्त सारी शक्ति का प्रयोग करते हुए उस चट्टान को सरोवर में गिराने की पूरी कोशिश की। कार्यक्कार की छाती कंधे और जंघाएं फूल उठीं। नाक और आंखें बंद हो गयी। चेहरा एक खास प्रकाश से आलोकित हो उठा। उसका हाथ लोहे की मूसल के साथ आहिस्ता-आहिस्ता नीचे झुकता गया। सांस रोकने से पूरा शरीर पसीने से तर हो गया। शिला मिट्टी छोड़कर अलग होने लगी। कार्यक्कार की जांघों और हाथों के पुट्ठे फड़कने लगे। मूसल और हाथ एक अंगुल और नीचे पहुंचे। अब शिला हिलने लगी। कार्यक्कार की गरदन फूल उठी, माथे की हड्डियां चटकती-सी लगीं। दोनों जाघें टेढ़ी हो परस्पर मिलकर एक-सी हो गयीं। छाती कमान सी झुक गयी। चेहरा और गरदन पीठ की तरफ झुक गयी।

उस महान शक्तिशाली सिद्ध का शिरोभाग फट रहा था। हाथ नीचे धंस रहे थे। शिला सरोवर में डूब गयी थी और झाग ऊपर आ गया था। अपने प्राणों का बलिदान करनेवाले उस देशप्रेमी की जटाओं के मध्य में एक वज्रकनी दिखायी पड़ी। एक मर्मर ध्वनि ! सिहंगर्जन ! बादल की कड़क ! ब्रह्मांड भेदन का नाद !

43
बिन वर्षा की बाढ़

आलंगाड और परवूर पर कब्जा करके टीपू सुलतान खुश हुए कि यह आगामी विजयों की शुरुआत है। उन्होंने अपना निवास, भंडार तथा अंगरक्षक सेना की छावनी आदि पेरियार नदी के उत्तरी भाग में एक खेत से सटी हुई पहाड़ी की ढाल पर स्थानांतरित कर दी थी। इस बीच बारिश, हवा, बिजली और बादल की कड़क निरंतर बनी रही। मगर सुलतान को बताया गया कि मौसम दो-चार दिन बाद बदल जायेगा। अतएव वे अस्थायी प्राकृतिक प्रकोप से विचलित न हुए।

उधर प्रकृति अप्रत्याशित रूप से क्रुद्ध हो उठी। बादलों के बिना भी भयानक बाढ़ आ गयी। कुंचैक्कुट्टि पिल्लै ने अपने प्राणों की आहुति देकर पेरियार झील का बांध खोल दिया। बाढ़ आने का कारण यही था। मगर किसी को असली बात का पता न था।

सुलतान के आवास के समीप की घाटियां बड़ी-सी झील बन गयीं। तंबू के खंभे उखड़ गये, झंडे उड़कर जल में डूब गये। टीपू की जमा की हुई बारूद पानी भर जाने से गीली व कीचड़ से सन गयी, तोपें बेकार हो गयीं। छावनी में अनेक लोग बीमार पड़ गये।

नदी-नाले भी कगार तोड़कर बहने लगे। तिरुवितांकूर का पूरा उत्तर-पश्चिमी खंड टापुओं से भरा लाल सागर-सा दीख पड़ा। बाढ़ के बहाव में जंगली जीव भी बहते जा रहे थे। निःशस्त्र शत्रु-सैनिकों को नाविकों और स्थानीय सैनिकों ने दंडित किया। सुलतान ने पहाड़ी के ऊपर एक बड़ी आरामगाह बनवायी। सोचा गया कि बारिश और बाढ़ की एक सीमा होती है। सुलतान ने मैसूर से अतिरिक्त सेनाएं भेजने का भी हुक्म दिया। डेरे में गलीचों और सफेद जाजिम पर बैठे सुलतान दरबारियों के साथ विचार-विमर्श करने लगे।

पहाड़ी पर पानी के न चढ़ पाने की आशा से ही वहां विचार-विमर्श का प्रबंध किया गया था। किंतु तभी अजितसिंह कान लगाकर आहट लेने लगे तो सुलतान को यकीन हो गया कि कोई आफत आने वाली है। बारिश तो बिल्कुल नहीं हो रही थी, लेकिन अस्थायी अस्तबल में बंधे हुए घोड़े खूंटे उखाड़कर चक्कर लगाते, पिछली टांगों से दुलत्ती झाड़ते, पूंछ घुमाते किसी निरापद स्थान की तलाश में भाग खड़े हुए। तभी भौरों की

गुंजार-सी कोई भनभनाहट सुनाई देने लगी। अजितसिंह नंगी तलवार लिये सुलतान की सुरक्षा के लिए तैयार हो गये। सुलतान का विचार था कि नदी की ओर से शत्रुसेना हमले का प्रयास कर रही होगी। अजितसिंह ने बताया कि यह शत्रु की आवाज नहीं, पानी की लहरों की आवाज है।

पानी का शोर बढ़ता गया। लोग डर के मारे चिल्लाने लगे। नदी के कगार ढहते गये। बड़े-बड़े वृक्ष जड़ से उखड़कर बहने लगे। लोग कहने लगे कि पर्वतमाला ही वनसहित पश्चिम की ओर बहती आ रही है। पेड़ और जानवर ही नहीं, रास्ते में आती हर चीज को बहाती बाढ़ आ रही थी। लंगड़ाते सुलतान को सहारा देते हुए अजितसिंह आगे बढ़े। एकाएक एक बड़ी भंवर सुलतान के तंबू को निगलती हुई समुद्र की ओर तेजी से दौड़ी। सुलतान के साथ अजितसिंह भी पूरी तरह भीग गया। सेवकों की मदद से सुलतान को उठाये ले जाता अजितसिंह पहले घुटने तक, फिर छाती तक पानी में पहुंच गया। सुलतान ने अल्लाह को याद किया। सैनिक छाती पीटते हुए सुलतान की जान बचाने उनके चारों ओर इकट्ठे हुए। पानी और बढ़ा तो वे ऊंचाई की तरफ भागे। उनके कपड़े भीगकर बदन से चिपक गये। स्त्री-पुरुष सभी पानी का शिकार हो रहे थे। अजितसिंह के डेरे के लोग किसी तरह तैरते हुए आरामगाह में पहुंचे। अजितसिंह आदि ने सुलतान की पटरानी को भी आरामगाह में पहुंचा दिया।

सुलतान को पूरा भरोसा था कि पानी आरामगाह की ऊंचाई तक नहीं आयेगा। फिर भी उन्होंने हुक्म दिया कि नावें तैयार रहें और सारी सेना तृश्शूर पहुंच जाय। सुलतान का हुक्म सैनिकों तक पहुंचाने की व्यवस्था करने के बाद अजितसिंह अपने परिवार की सुरक्षा-व्यवस्था में लग गया।

उन्होंने आरामगाह को कई भागों में विभक्त कर रखा था। अजितसिंह ने उसके एक कोने में अपनी पत्नी को घूंघट काढ़े खड़ी देखा तो उसकी जान में जान आयी। उसने पत्नी का हाथ अपने हाथ में लेकर चारों तरफ देखा। सुलतान ने उसे जिस कन्या की जिम्मेदारी दी थी वह कहीं दिखाई नहीं दे रही थी। थककर खड़े घोड़ों में से एक पर सवार होकर अजितसिंह ने पूरे इलाके में खोज-बीन की, पर सावित्री कहीं नही दीखी। उसने सोचा, राजा की अन्य पत्नियों के साथ सावित्री और दंडित होकर डेरे में दिन काटता चंद्रक्कारन बाढ़ में बहकर मर-खप गये होंगे। उसने निश्चय किया कि आदरणीय दीवानजी को यथासमय वह इसकी सूचना दे देगा। इसके बाद वह सैनिकों के कूच की तैयारी के काम में लग गया।

44
एक साहसी का स्मरणीय अंत

भंयकर बाढ़ आने के बाद चंद्रक्कारन को लगा कि अब सुलतान को युद्धक्षेत्र से पीछे हटना होगा। बरसात में पहनने-ओढ़ने के कपड़ों की कमी के कारण वह बहुत कमजोर हो गया था। फिर भी वह सावित्री को वहां से बचकर भाग जाने के उपाय बहुत धीमे स्वर में बताता रहा। बाढ़ आने पर उसने हृदय से प्रकृति को धन्यवाद दिया। सावित्री को उससे तरह-तरह की सलाहें मिलने लगीं और ऐसे आदेश भी देता जिन्हें वह नकार नहीं सकती थी। उसके माता-पिता, प्रेमी और उनके परिवारों के नाम दुहरा कर वह उसे अशांत कर देता था।

जब बाढ़ का पानी अजितसिंह के डेरे के भीतर पहुंचा तब वहां के निवासी ऊंचाई पर स्थित आरामगाह की ओर बढ़े। सावित्री का हाथ थामे चंद्रक्कारन जिस दिशा में मन हुआ उसी में भाग पड़ा। डेरे के निवासी अपनी-अपनी जान बचाने के फेर में थे। अतएव किसी को उस परदेशी वृध्द या सावित्री का ध्यान नहीं रहा। वृद्ध चंद्रक्कारन और सावित्री भागते-भागते दो छोटे अंतरीपो के बीच की एक छोटी खाड़ी के पासवाले झाड़ों में जा पहुंचे। सावित्री ने निश्चय किया कि भला हो या बुरा, वह इस वृद्ध का अनुसरण करेगी। सूर्यास्त हो गया। घना अंधेरा था। मूसलाधार वर्षा। दोनों ने मान लिया कि अब उनकी मौत निश्चित है। जान बचाने के लिए कई तरह के जीव और सांप बिच्छू भी उस झाड़ की तरफ जा रहे थे। वृद्ध की आंखें अंधकार में भी देख सकती थीं। उसने उन जीव-जंतुओं को मार-मार कर रात बितायी। साथ ही वह हंसी-मजाक की बातों से सावित्री का मन भी बहलाता रहा।

वृद्ध को अपना अतीत याद आ रहा था। वह प्रेम की कोमलता को बिल्कुल जाने बिना पूरी तरह मस्त जीवन बिताता आया था। उसने ऐसा विशाल भवन बनवाया था, जिसमें हजारों लोग आराम से रह सकते थे। उतने ही लोगों की खुशहाल जिंदगी के लिए जरूरी धन भी उसने कमाया था। वह वर्षों तक अद्‌भुत श्रम से अर्जित धन के सहारे लंका के पराक्रमी राजा रावण की तरह जीवन बिताता रहा। कई राज्यों की सीमाओं पर स्थित प्रसिद्ध धर्मशालाओं का वह प्रशासक बनाया गया और सम्राटों की तरह वैभवशाली जीवन व्यतीत करता रहा। कितने बड़े-बड़े महारथी उसके चरण छूते थे। वह उन सब

को आशीष देता था। अब भी उसकी कमर में लाखों रुपये की कीमत के ढेर-सारे हीरे-जवाहरात सुरक्षित रखे थे। मगर हाय! विधि का विधान कुछ और ही था। वृद्ध ने अपने चिंतन को उस गहन अंधकार पर केंद्रित किया। घनघोर वर्षा में लगातार कौंधती बिजली उसे सितारों की तरह प्रकाश दे रही थी। रात्रि भी अब समाप्त होने वाली थी।

बिगुलों की आवाज से चंद्रक्कारन समझ गया कि सुलतान की वापसी यात्रा प्रारंभ हो गयी है। उसको कुछ राहत महसूस हुई। अजितसिंह तथा अनुसूया देवी को छोड़ कर चले आने से सावित्री का मन दुखी था।

कुंचैक्कुट्टि पिल्लै ने जो छोटी नहर खोदी थी वह सरोवर की निचली तह तक पहुंच चुकी थी। अतः प्रवाह तीव्र हो चला था। चंद्रक्कारन सावित्री को साथ लेकर एक वृक्ष के ऊपर जा बैठा था। एक समय बाढ़ का जल उनके बैठने की जगह तक जा पहुंचा। वृक्ष तेज प्रवाह में डोलने लगा। चंद्रक्कारन ने सोचा कि अब शत्रु भाग चुके होंगे और हमें पहाड़ी पर स्थित आरामगाह में शरण लेनी चाहिए। दोनों पेड़ से नीचे कूद पड़े। थोड़ी देर बाद पेड़ भी ढह गया और दोनों पानी में बहने लगे। चंद्रक्कारन और सावित्री ने फिर बहते हुए पेड़ पर शरण ली।

सूर्योदय हो रहा था। गझिन वृक्ष चक्कर खाता बहता गया। साथ चंद्रक्कारन और सावित्री भी चक्कर खाते बहते रहे। वृक्ष पश्चिमी भाग के छोटे अंतरीप की परिक्रमा करते हुए भीतरी झील की गहराई की तरफ बढ़ रहा था। एक समय वृक्ष से उन दो व्यक्तियों का संबंध टूट गया। चंद्रक्कारन के मन में साहस उदय हुआ। बायें हाथ से सावित्री का हाथ थामे हुए वह पानी में कूद पड़ा। धारा बड़ी तेज थी। फिर भी वृद्ध सावित्री को लिये हुए बीस भुजावाले लंकेश्वर की तरह नदी प्रवाह को चीरते हुए दूसरे किनारे की तरफ तैरता गया। अपने महत्वपूर्ण ध्येय के विचार ने उसे विकट उत्साह एवं शक्ति प्रदान की। साहसी सावित्री भी पूरी तत्परता से वृद्ध की मदद करती रही। वृद्ध ने कल्पना की कि वह खुद एक नाव है, उसका एक हाथ चप्पू है और हिम्मत खिवैया है। वह गीत गाता हुआ कन्या की हिम्मत बढ़ाता रहा। सावित्री भी उसे प्रोत्साहन दे रही थी—"मामाजी! बस अब किनारे पहुंचने ही वाले हैं।" वह वृद्ध कितनी ही महानदियों को तैरकर पार कर चुका था, मगर बुढ़ापा और बोझ उसमें अड़चन डाल रहे थे। फिर भी वह बोला—"हुंह, भला मैं इस दलदली पानी से हार मानूंगा ? कभी नहीं।" पूरे जोर से वह तैरता गया। बीच में कई बाधाएं पड़ीं। उन सब को हटाता हुंकार भरता वह आगे बढ़ा। वृद्ध पर एक ही धुन सवार थी। अगर उसके भांजे का चैन नष्ट हो गया तो उसका पारलौकिक सुख भी नष्ट हो जायेगा। वह और जोर लगाकर तैरने लगा। सहसा उसे लगा कि उसकी जांघ को कोई फूल छू रहा है। पानी के ऊपर काले छल्ले उभरे और गायब हो गये। "ओह, तो यह बात है।" कहते हुए वृद्ध ने पूरा जोर लगाया। उसकी

जांघों और पुट्ठों में सुई की नोक की सी चुभन हो रही थी। असल बात वृद्ध की समझ में आ गयी। वह चामुंडी का स्मरण करता हुआ लगभग किनारे जा पहुंचा। अब ऊदबिलावों का एक झुंड वृद्ध को घेरने लगा था। वृद्ध ने सावित्री को नदी के रेतीले तट को लक्ष्य कर उछाल दिया। उसके होंठ बुदबुदा रहे थे—"केशव से कहना कि इसने उसे बहुत कष्ट दिये। फिर भी मरते समय.....।"

वृद्ध की पीठ, गरदन और सिर धीरे-धीरे जल के भीतर समा गये। एक बार पानी से उठकर उसने ताली पीटते हुए अट्टहास किया। फिर जलप्रवाह में खून के रंग के बुलबुले उठे। दपर्ण सा प्रकाशमय उसका गंजा सिर एक बार और जल के बाहर आकर फिर से जल के अंदर अदृश्य हो गया। पानी के छोटे-छोटे बुलबुले उभर आये। जलप्रवाह की दुर्गा कोटि-कोटि जीवों के संहार की वेला में घटी उस छोटी जीवहानि से अचंचल हुए बिना अपना कृत्य पूरा करके दिग-दिगंत को कंपाती, अट्टहास करती जाकर समुद्र में समा गयी।

जलप्रवाह की आसन्न मृत्यु से बची सावित्री अपने जीवनदाता वृद्ध की जल-समाधि देखकर जोर से रो पड़ी। उसने ऊदबिलावों का दृश्य देखा तो वृद्ध को बचाने की उसकी आशा समाप्त हो गयी। जो कन्या किसी भी खतरे में हिम्मत नहीं हारती थी वह जमीन पर लोट-लोटकर रोने लगी। उसने पानी में कूदकर जान देने की बात भी सोची। मगर वह आत्महत्या होती और वह आत्महत्या करने को तैयार नहीं थी। रात भर वह भूखी रही। इस आफत से बचने की चिंता उसके मन को मथ रही थी। अपने रक्षक वृद्ध की मृत्यु से वह अत्यंत व्यथित हुई थी। उसका आत्म-विश्वास नष्ट हो गया था। वह मूर्च्छित सी धरती पर बैठ गयी। उसे होश आने में कुछ समय लगा। होश आने पर उसे कोई पुरुष-स्वर सुनाई पड़ा। पहाड़ी के ऊपर जो मुसलमान घुड़सवार दिखायी दे रहा था उसे हमलावर समझकर वह उठकर बिना पीछे देखे दौड़ पड़ी। उस छोटी झील के रेतीले कगार को वह पार कर गयी। घोड़े की टाप और नजदीक आ गयी तो उसे डर लगा कि कहीं घोड़े की टाप उसके सिर पर ही न आ पड़े। घुड़सवार पीछे से कुछ चिल्लाता आ रहा था। हवा के झोंके के कारण कुछ स्पष्ट सुनाई नहीं दे रहा था। सावित्री ने अपनी गति बढ़ायी और अजितसिंह की दी हुई कटार निकाल ली। घोड़ा एकाएक रुका। उस पर बैठा आदमी जमीन पर कूद पड़ा। पाप करने के इच्छुक दो हाथ सावित्री को स्पर्श कर रहे थे। सावित्री बड़े क्रोध से मुड़ी और उस मुस्लिम वेशधारी की छाती में कटार घुसेड़ दी। सावित्री को गले लगाने को आतुर उस मुस्लिम वेशधारी के मुख पर दैन्य का भाव उभरा और उसकी छाती से निकलती रक्तधारा से उसके कपड़े लाल हो गये। सावित्री उसके बाहु बंधन से फिसल कर नीचे गिर पड़ी। अपनी प्रणयिनी को पुनः प्राप्त करने का यत्न करता साहसी त्रिविक्रमनकुमार भी गिरकर मूर्च्छित हो गया।

45

निश्छल स्नेह का बंटवारा

टीपू की फौज के वापस हो जाने पर स्थानीय लोग निर्भय होकर घूमने लगे। इनमें से कुछ लोगों ने मरणासन्न पड़े त्रिविक्रमन और सावित्री को देखा। उन्होंने उन दोनों को एक अस्थायी शाला में पहुंचाया। थोड़ी सी सेवा-शुश्रूषा से त्रिविक्रमन की मूर्च्छा दूर हुई तो उससे सारी बातों का पता चला। दूसरे दिन दीवानजी, उनके डेरे में अलग-अलग जगह ठहराये गये उण्णित्तान, माधव मेनन एवं प्रमुख सरकारी अधिकारी और चिकित्सा विशेषज्ञ वहां आ गये।

त्रिविक्रमन शीघ्र ही स्वस्थ हो गया। वह खाट पर उठकर बैठने में समर्थ हो गया। सावित्री को शीतज्वर हो गया था। वह करवटें बदलती बुखार में बकझक करती रही। उसका रोग त्रिदोष से उत्पन्न एवं खतरनाक था। अतएव उसके लिए विशेष चिकित्सा की आवश्यकता थी।

त्रिविक्रमन से पूछने पर भी दीवानजी को यह पता नहीं लगा कि सावित्री टीपू के डेरे से बचकर कैसे निकल आयी। शत्रु द्वारा बंदी बनाये गये चंद्रक्कारन की स्थिति जानने की भी उन्हें व्यग्रता थी।

दीवानजी ने निश्चय किया कि उण्णित्तान को बुलवाकर इस पर चर्चा की जाये और अंतिम निर्णय ले लिया जाये। मिलते ही उण्णित्तान ने अपने कैद किये जाने की शिकायत की। दीवानजी ने बताया—"अन्नदाता की आज्ञा थी कि आपको युद्ध में जाने से किसी तरह रोका जाये।"

उण्णित्तान ने पूछा—"क्या और कोई चारा नहीं था?" दीवानजी ने इसके उत्तर में प्रतिप्रश्न किया—"हम दोनों में जो मनमुटाव है—मतभेद है—उसे देखते हुए क्या उपामे था ?"

उण्णित्तान ने शिकायत की कि कोट्टारक्करा कार्यक्कार के जरिये सावित्री का विवाह रूकवाकर उनका अपमान किया गया। इस पर दीवानजी ने माधव मेनन को बुलवाया और तथ्य प्रकट करा दिया। उण्णित्तान को यकीन हो गया कि वह नकली वेशभूषा में शत्रु का गुप्तचर बना था। दीवानजी ने माधव मेनन को सावधानी की ताकीद देकर विदा किया।

दीवानजी ने कहा—"बीमार सावित्री को अपने करस्पर्श से अनुगृहीत कीजिए।" इस पर उण्णित्तान क्रुद्ध हो उठे। उनका मत था कि सावित्री उनकी बेटी नहीं, दीवानजी की पुत्री है। उन्होंने कहा, "वह कोटंता तक मेरी हंसी उड़ाता है। लोग मेरी तरफ टेढ़ी नजर से देखते थे। पता नहीं इस तथाकथित संतान ने 'पिता' के नाम का बोझ ढोनेवाले इस व्यक्ति को देखा भी है या नहीं? आत्मसम्मान कोई चीज होती है? उसी का खयाल करके मैं कुछ नहीं बोला। फिर भी आपने भरसक मुझे तंग किया। अन्नदाता के लिए मैंने सैनिक टुकड़ी तैयार की तो मुझे कैद का पुरस्कार मिला।"

दीवानजी ने अपने पद की गंभीरता के अनुरूप लहजे में पूछा—"अच्छा, उण्णित्तान जी! आपने किसकी अनुमति से सैनिकों को भरती किया था और क्यों?"

उण्णित्तान ने निवेदन किया कि महाराजा की मुख्य सेना से मिलने के लिए ही उन्होंने सेना तैयार की थी।

दीवानजी—"तो फिर मांकाव क्यों गये? सीधे रास्ते को छोड़कर दूर के रास्ते क्यों गये? खैर, सावित्री को पहले ही टीपू के डेरे में भेजने की क्या कैफियत आप दे रहे हैं? वह पेरिंचक्कोडन मांकाव में डेरा डाले हुए था। उसकी फौज में शामिल होने के लिए ही आप उधर गये थे न?"

उण्णित्तान—"ऐसा तो न मैंने सोचा था और न ही ऐसा किया।"

दीवानजी—"उस चांडाल ने आप की बेटी को ले जाकर टीपू को कैसे भेंट किया? अन्नदाता आपको हरिश्चंद्र मानकर सम्मानित करते हैं। यही आपकी सत्यवादिता है? खैर! चिलपिनषिकम और नंतियम में कौन लोग आये थे? टीपू सुलतान जा चुके हैं। अब अन्नदाता ही शरणदाता हैं। कोटंता और कृष्ण कुरुप के यहां आये लोगों से आपने क्या बातें की थीं? रियासत से चोरी से दूध पीनेवाली बिल्ली की तरह शत्रुता का व्यवहार नहीं करना चाहिए। सावधान रहना चाहिए। सोचना चाहिए कि दुश्मन की हजार आंखें होती हैं। आपने कोटंता को पांडा और नकली अजितसिंह के गुप्तचर के रूप में ही नियुक्त किया था न? पांडा पेरिंचक्कोडन का कप्तान है या नहीं? उसने भी आपके साथ मिलकर कंठीरव को छुड़ाया था या नहीं? मांकाव में कमरे के भीतर आपने किसे देखा था? कम से कम यह सचाई तो अन्नदाता को विदित हो जानी चाहिए। आपने गौंडन को देखा था या नहीं? वह टीपू का गुप्तचर था या नहीं? शत्रुओं के जासूस तो मृत्युदंड के भागी होते हैं, क्या आप को इतना भी नहीं मालूम?"

उण्णित्तान बड़े असमंजस में पड़ गये। न झूठ कहते बनता था, न सच। उन्होंने जलती आंखों से दीवानजी की तरफ देखा। कूटनीति की कुशलता से उद्भाषित उस मुख की निश्छलता देख उण्णित्तान हथियार रखने को तैयार हो गये और कहा—"लगता है कोई खोटा ग्रह मुझे भरमा रहा है।"

दीवानजी—"आपके विरुद्ध कई बातें सुनते और जानते हुए भी आपके प्रति मैं अपना प्रेम बनाये रह सका इसीलिए कह रहा हूं कि बुरी दशा से बचने के लिए अपनी कन्या का सिर छू कर उसे आशीर्वाद दीजिए ! उसके बुरे दिन समाप्त हों।"

उण्णित्तान—"अब समझा कि आपका इरादा क्या है। ऐसा नहीं होगा, चाहे आप फांसी लगा दीजिए या गरदन पर तलवार चला दीजिए। मैंने अपना जीवन समाप्त करने का निश्चय कर लिया है।"

दीवानजी—"आदमी का दिमाग फिर जाये तो कोई क्या करे ? अपनी बच्ची को न पहचानने वाला पिता विद्वत्ता का अभिमान करे, यह कैसा पाखंड है । अपनी पत्नी को मौत की देहली पर आपने ही पहुंचाया है। जब लोगों को पता चलेगा कि नंतियत्तु के मालिक के पुत्र में जरा भी स्वाभिमान नहीं है तब वह कितनी शरम की बात होगी।"

उण्णित्तान—"ज्यादा भाषण मत झाड़िए। आपके सारे पाखंड मैं सहन कर सकता हूं, पर सरल समझकर आंखों में धूल झोंकने की कोशिश मत कीजिए।"

दीवान—"यह तो आप खुद कर रहे हैं। आपकी पत्नी ने क्या बिगाड़ा था जो उसे आपने मौत के मुंह में डाल रखा है ?"

उण्णित्तान—"जो मिर्च खायेगा, उसे पानी तो पीना ही पड़ेगा।"

दीवानजी—"आपने इतनी मिर्चें खायी हैं कि पूरे समुद्र का जल आपको पीना पड़ेगा। कम से कम आपकी यह सनक तो दूर हुई कि हमने लड़की को दक्षिणी भाग में छिपा रखा था।"

उण्णित्तान ने दलील पेश की कि वह केवल उनका अनुमान था। मगर जो आंखों से देखा वह तो गलत नहीं हो सकता।

दीवानजी ने पूछा—"साफ साफ बताइए, क्या देखा ?"

उण्णित्तान ने बताया कि सावित्री की शक्ल-सूरत माता-पिता के रूप से नहीं मिलती।

इस पर दीवानजी बोले—"अपनी सती साध्वी पत्नी का अपमान बंद कीजिए। मेरे पास आइए। चिलंपिनेत्तु भवन में क्या हरिपंचानन स्वामीजी नहीं पधारे थे ?"

उण्णित्तान—"उनके जाने के कितने ही बरसों बाद सावित्री का जन्म हुआ था।"

दीवानजी—"पूरी बात सुनने के पहले ऊटपटांग मत बकिए। आप कैसे न्यायशास्त्री हैं ? आपने उस योगिराज को आमने-सामने देखा था न ?"

उण्णित्तान—"हां, मगर इससे क्या ? आप स्वयं दायित्व लेने तैयार नहीं, तो दूसरों को क्यों कष्ट दे रहे हैं ?"

दीवानजी—"पूरे पागल हो गये हैं क्या ? इस तरफ आइए। कन्या के मुखमंडल की तरफ जरा गौर से देखिए। वह अभी बेहोश है न ? आइए।"

दीवानजी से प्राप्त पूर्व सूचनाओं के आधार पर उण्णित्तान रोगिणी के चेहरे पर नजर

गड़ाये खड़ा रहा। उस शुद्धात्मा को महसूस हुआ कि तिरुअनंतपुरम में बंदी दशा में अर्धनिद्रित वह मुंह और मरुत्वामला में एक रात प्रकट हुए योगीश्वर का मुख उनके सामने है। वीर यतींद्र की मुखाकृति स्पष्ट दिखायी दे रही थी। माथा, नाक, आंखें, भौंहें, गाल, सिर और ठुड्डी—सब की बनावट तथा केश का नीलश्याम वर्ण सब कुछ छदम् योगी और रोगिणी में समान थे। इस समानता ने उण्णित्तान को चक्कर में डाल दिया। थोड़ी देर की ग्लानि के बाद उण्णित्तान ने मुड़कर प्रश्न किया—"तो वह धूर्तराज तिरुअनंतपुरम् में ही रहता था न ?"

दीवानजी—"तिरुअनंतपुरम् में जो रहता था और आपको जिसने देखा था वे दोनों अलग अलग व्यक्ति थे। वे कष़क्कूट्टम परिवार के दो सदस्य थे—नाम थे उग्र और शांत। अन्नदाता का आदेश था कि यह रहस्य खोलकर आपकी स्थिति को खतरे में न डाला जाये। इसीलिए उस बात को अब तक छिपा कर रखा गया।"

उण्णित्तान—"उग्र और शांत बड़ी कुंजम्मा के बेटे थे न ?"

दीवानजी—"माता और ज्येष्ठ योगी की मुलाकात के समय जो घटनाएं घटीं उनका स्मरण कीजिए। आश्चर्य की बात यह है कि आपने अन्नदाता की कृपाशीलता की अपारता के बारे में नहीं सोचा। आप की पत्नी की मां थी सावित्री कुंजम्मा। उनके भाई थे—उग्र और शांत। उनके पिताजी ने इस सब को लेकर गांव छोड़ दिया और अन्यत्र चले गये। उस त्रिपुरसुंदरी कुंजम्मा के जुड़वां भाई हरिपंचानन कहलाये।"

उण्णित्तान ने पूछा—"वे कहा गये ?"

दीवानजी—"वे उन्हीं दिनों एक अग्निकांड में भस्म हो गये। सेनापति मामा एवं अन्नदाता इसके गवाह हैं। महाराजा ने आदेश दिया है कि अगर आप झगड़ा करें तो सारी बातें आपको साफ-साफ समझा दी जायें। इसलिए मैंने आपको यह सब बता दिया।"

उण्णित्तान गहरी चिंता में लीन हो अपनी छाती महलाते खडे रहे। इस पर दीवानजी ने मंदहास करते हुए धीरे से पूछा—"मांकाव में जिनसे मिले वे मामाजी ही थे न ?"

मानसिक व्यथा और अपनी मूर्खता प्रकट होने की ग्लानि से मुरझाये हुए उण्णित्तान ने कहा—"कितना कहा ! फिर भी घर आने को तैयार नहीं हुए। किसने बताया कि वे मामाजी थे ?"

दीवानजी—"जाने दीजिए। अन्नदाता ने सारे रहस्य जान लिये हैं। उन्होंने मामा के विषय में भी वही नीति अपनायी जो हरिपंचाननों के विषय में अपनायी थी। उन्हें कैद किये या दंड दिये बिना छोड़ दिया गया। सब आप का खयाल करके ही किया गया था।"

उण्णित्तान ने प्रश्न किया—"फिर आप स्वयं क्यों चिलंपिनेत्तु भवन गये थे ?"

दीवानजी—"सही बात है। एक नौकर को भेजना काफी था। मगर महाराजा ने मुझे

आदेश दिया था कि उनके स्थानपति की हैसियत से मुझे कषक्कूट्टन्तु जाकर कुंजम्मा से गुप्तनिधि को राजकोष में स्थानांतरित करने की अनुमति लेनी चाहिए।"

उण्णित्तान—"सिर्फ एक बात और पूछना चाहता हूं। आपने विक्रमन के हाथ अंगूठी क्यों भेजी थी ?"

दीवानजी—"अरे भोलेराम ! आपके मामाजी ने आपकी पत्नी को वह अंगूठी बेची थी। मुझे यह बात अभी-अभी विदित हुई है। मेरी अंगूठी यह है, लीजिए! देखिए दोनों एक तरह की हैं या नहीं ?"

जड़ से हिले नारियल के पेड़ की तरह उण्णित्तान डगमगा उठे।

दीवानजी—"महाराजा हम दोनों का परस्पर वैर देखकर दुखी हैं। अब तो मन से स. ' भ्रम दूर कर दीजिए। ऐसी पुत्री के पिता होने की गरिमा कितनी बड़ी है ! आज से वह आप के लिए बेटी रहेगी, मेरे लिए भांजी। यों हम उसके स्नेह का बंटवारा किये लेते हैं। अब अपनी सीता जैसी पवित्र पुत्री को स्वीकार कीजिए।"

उण्णित्तान ने हाथ जोड़कर दीवानजी से अपने सारे अपराध क्षमा करने की प्रार्थना की। मुस्कराते हुए दीवानजी उन निश्छल पुण्यात्मा के हाथों को वात्सल्यपूर्वक अपने हाथों से सहलाते रहे।

उण्णित्तान ने कहा—"कोटंता को फांसी पर चढ़ा देना चाहिए।" फिर वे 'मीनाक्षी-मीनाक्षी' का मंत्र जपते रहे। उन्होंने पुत्री का स्पर्श करना चाहा पर हाथ कांप रहे थे।

दीवानजी ने कहा—"एक बात बताऊं। हम दोनों जिस दिन आपस में मिले उसी दिन से विशेष आत्मीयता से बंध गये थे। अपने पद के अनुरूप मुझे कूटनीति से तो जरूर काम लेना चाहिए था, परंतु आप जैसे दिव्य सज्जनों से ...."

दीवानजी को बीच में ही रोककर उण्णित्तान ने सब कुछ भुलाकर अपने अपराधों के लिए क्षमा याचना की और सावित्री को छाती से लगाकर फूट-फूटकर रोने लगे।

उण्णित्तान ने उपयुक्त व्यक्ति द्वारा चिलंपिनम्रिकम को एक पत्र भेजा और विक्रमन को सहलाते हुए कई व्यावहारिक उपदेश दिये।

माधव मेनन मांकाव पहुंचा तो पता लगा कि वह घर बाढ़ में बह गया था। माधवी अम्मा भी उसी के साथ कालकवलित हो गयी थी।

46
किसी का दिल न दुखाइए

उत्तरी तिरुवितांकूर की जनता अब टीपू के हमले से उत्पन्न संकट से तो बच गयी, लेकिन दक्षिणी भाग में परप्पांडा का उत्पात फिर से शुरू हो गया। पहले पेरिंचक्कोडन से प्रार्थना प्रस्तुत करते तो वह उत्पात थम जाता था। पेरिंचक्कोडन के मर जाने के कारण अब वह उपाय संभव नहीं रहा। पर पांडा की लूटपाट और मारकाट के विषय में महाराजा की सेवा में भी शिकायतें आती थीं। किसी अज्ञात स्थान पर बंदी रखे गये कल्लरक्कल पिल्लै को छुड़ाने की प्रार्थनाएं भी प्राप्त होती थीं। नरेश ने दीवानजी से इसका जिक्र किया तो दीवानजी बोले—"यह कार्य त्रिविक्रमन को सौंपा गया है और अब तक इसका समाधान हो जाना चाहिए था।"

दीवानजी तथा नरेश ने कुंचैक्कुट्टि पिल्लै के विषय में भी बातें कीं। नरेश बोले—"वह कहा करता था—टीपू के आग्नेयास्त्र के जवाब में वह वरुणास्त्र बनेंगे और श्री पद्मनाभ की कृपा से टीपू को भगा देंगे, आदि। मैंने लड़कपन में किसी गोसाईं के मुंह से एक गिरि शृंग का वर्णन सुना था। शायद ने वहीं चले गये हों। कुंचैक्कुट्टि किसी भी संकट का मुकाबला करने को तैयार एक वैरागी है।"

दीवानजी ने कहा—"इस दास को लगता है कि हमारा राज्य एक पुरुषरत्न से वंचित हो गया है। वर्ना वह कहीं न कहीं मुझसे मिलते जरूर और युद्ध करने के लिए प्रसाद के भस्म की पुड़िया लेकर चल पड़ते।"

महाराजा ने कहा—"यहां पर उनसे हरेक व्यक्ति थर्राता था, किंतु हैं वे बड़े कृपालु और न्यायप्रिय, ऊपर से निष्ठुर, पर हृदय से अत्यंत स्वामीभक्त। सोचने पर उनके अनंत गुण याद आते हैं। भगवान उनकी रक्षा करें।"

पेरिंचक्कोट्टु भवन की लक्ष्मी अम्मा नारकीय पीड़ा झेल रही थी। जातिच्युत होने के कारण कोई उसकी मदद को आगे नहीं आता था। मल्लन पिल्लै आदि कभी-कभी जाकर कुछ मदद करते थे। पेरिंचक्कोडन ने मां-बेटी को और लोगों की दृष्टि से बचाकर टिकाया था, इसलिए वे बाहरी जगत से बिना किसी संपर्क के ही रहती थी। उनका जीवन अंधेरे से भरा और तलवार की धार पर चलने जैसा कठिन था।

देवकी का जीवन अब एक संन्यासिन का जीवन हो गया। उसे किसी विषय में

कोई रुचि नहीं रही, न पिता में, न माता में। वह मन ही मन परमानंदस्वरूप ईश्वर में समा जाने की कल्पना करती थी। उस कल्पना से वह खुश होती थी। लक्ष्मी अम्मा बेटी की दशा देखती तो उसका दिल टुकड़े-टुकड़े हो जाता।

देवकी कहती थी—"मेरे सब अरमान पूरे हो गये, मां! अब कुछ नहीं चाहिए। अम्मा! तुम यह सोचकर रंज मत करो कि तुम्हारी कोख से ऐसी लड़की का जन्म हुआ। यहां जो देवता एक बार पधारे थे, अगर एक बार उनके दर्शन कर पाती।"

लक्ष्मी अम्मा—"बिटिया, वह तो एक सपना था।"

देवकी—"जो मौत के नजदीक होते हैं वे सचाई को देख पाते हैं। मां! मैं अब कभी नहीं पूछूंगी कि तुम्हारा रहस्यमय अतीत कैसा था। ईश्वर करे तुम्हारी सारी बाधाएं दूर हो जायें। मेरे इस दुनिया से चले जाने पर तुम्हें जरूर चैन मिलेगा।"

लक्ष्मी अम्मा—"कुछ खा लो बिटिया। तुम्हें भूखी देखकर मुझसे रहा नहीं जाता।"

देवकी—"जब मेरे भीतर अमृत भरा हुआ है, तब मुझे और किस चीज की जरूरत है? मेरे भगवान अपने करकमलों से मेरे हृदय में अमृत भरकर गये हैं।"

देवकी बड़बड़ाती रही। जब अंतिम बार होश आया तब बोली—"अन्नदाता की तो विजय हो गयी। अब तक पिताजी क्यों नहीं आये?"

लक्ष्मी अम्मा—"किसने कहा कि अन्नदाता विजयी हो गये? पिताजी जल्दी ही आयेंगे। शांत रहो।"

देवकी—"पिताजी से कहिएगा कि किसी का दिल न दुखायें। पिताजी को विशेष रूप से समझाना—उस छोटे सेनानायक को मेरा मां-जाया भाई मान लें।"

देवकी फिर से बेहोश हो गयी। "नारायण-नारायण" जपते हुए उसने अंतिम सांस ली।

लक्ष्मी अम्मा ने इसके पहले कभी मौत नहीं देखी थी। वह दूध का लोटा खोजने लगी। उसी वक्त कुछ आहट सुनाई दी, जैसे एकसाथ अनेक लोग चले आ रहे हों। अष्ठकन पिल्लै ऊंची आवाज में रास्ता बताता आगे चलने का निर्देश दे रहा था। लक्ष्मी अम्मा ने दक्षिण की दिशा में दृष्टि डाली। उसने संयोग से वहां उस युवक को देखा, जिसने देवकी के मन को मोह लिया था।

लक्ष्मी अम्मा ने ऊंची आवाज में कहा—"मेरी मरणासन्न कन्या को एक नजर देखकर जाइएगा।"

महाराजा से उपहार में प्राप्त भाले को हाथ में लिये अषकन पिल्लै झाड़-झंखाड रौंदता चला जा रहा था। त्रिविक्रमन के नेतृत्व में बंदूकधारी सिपाही बंदूक ताने कंटीले झाड़ों के भीतर घुस गये। लक्ष्मी अम्मा के आश्रम के परिसर में छिपा हुआ परप्पांडा उछल कर बाहर आ गया। सिपाहियों ने शोर करते हुए उसका पीछा किया। वे बीच-बीच में गोली भी चला रहे थे। पांडा अष्ठकन पिल्लै की मुट्ठी में आते-आते बच गया। वह

भागता हुआ तालाब के किनारे पहुंचा। फिर किसी भी परिस्थिति का सामना करने तैयार होकर पीछे मुड़ा। त्रिविक्रमन ने ऊंची आवाज में आदेश दिया—"गोली मत चलाना।" त्रिविक्रमन अष़कन पिल्लै और दूसरे सिपाही अब पांडा के सामने थे। त्रिविक्रमन को उसे देखकर शक हुआ कि क्या यही परप्पांडा है। उसने आदेश दिया—"भागने या बचने की कोशिश न करके हथकड़ी पहन लो तो शायद अन्नदाता क्षमा कर दें।"

ये शब्द सुनने भर की देर थी कि पांडा त्रिविक्रमन के ऊपर टूट पड़ा और उसे उठाये हुए तालाब में कूद पड़ा। सिपाहियों ने उसे गोली मारने को तैयार हो तालाब को चारों ओर से घेर लिया। अष़कन पिल्लै ने सिपाहियों को सावधान किया कि गोली न चलायें, क्योंकि गोली त्रिविक्रमन को भी लग सकती है। इसके बाद वह खुद बड़ी सावधानी से तालाब में उतर गया।

तालाब गहरा था, इसलिए काले जल के भीतर धंसी मूर्तियां दिखाई नहीं दे रही थीं। पांडा इसी इरादे से तालाब में कूदा था कि देवकी की मौत के जिम्मेदार त्रिविक्रमन की जीवन लीला भी समाप्त कर दूंगा। उस भीमकाय ने पानी के भीतर त्रिविक्रमन की गरदन जोर से दबायी। युवक भी उस पर प्रहार कर रहा था, पर बेकार। पांडा युवक के सिर को नीचे की ओर दबाता गया। पानी के भीतर इस कुश्ती से पानी का रंग मटमैला हो गया। त्रिविक्रमन किसी प्रकार भी उस दानव की पकड़ से अपने को छुडा नहीं सका। आखिर उसने पिताजी द्वारा सिखायी गयी मर्मविद्या का प्रयोग किया। पांडा की पकड़ ढीली हो गयी। सांस की गति का नियंत्रण करते हुए त्रिविक्रमन फुर्ती से जल से बाहर आ गया। अष़कन पिल्लै ने उसकी ओर भाले का हत्था बढ़ाया ताकि उसके सहारे त्रिविक्रमन किनारे आ जाये। पांडा की पीठ देखते ही सिपाहियों ने गोली दाग दी। त्रिविक्रमन चिल्ला उठा—"अरे! धोखा हुआ?" गोली खाकर पांडा का भारी बदन जल में डूब गया। त्रिविक्रमन के आदेश से अष़कन पिल्लै ने तालाब में डुबकी लगायी और एक मोटा ताजा बेहोश शरीर लेकर बाहर आया। शरीर को देख सब भौंचक्के रह गये। वह पेरिंचक्कोडन था। वही इतने दिनों तक परप्पांडा के नाम से उत्पात मचाये हुए था। त्रिविक्रमन ने सोचा था कि मर्मविद्या के प्रयोग से पहले उसे मूर्छित करेगा, बाद में प्रतिविधि से मूर्छा दूर की जायेगी।

दूध का लोटा लेकर लक्ष्मी अम्मा कमरे में आयी तो देखा कि देवकी के प्राण पखेरू उड़ गये हैं। वह पांडा का रहस्य जानती थी। देवकी के कमरे का दरवाजा बंद करके वह पति की जान बचाने दौड़ी। पति का सिर अपनी गोद में लेकर वह विलाप करने लगी—"हे भगवान! मैं कहां थी? कहां खींच लाये? मुझे यह दिन देखना लिखा था। हे महादेवी! भगवती!" उच्च स्वर में लक्ष्मी अम्मा का विलाप सुनकर पेरिंचक्कोडन ने आंखें खोलीं। उसने पत्नी को छूने को हाथ उठाना चाहा। पर हाथ शिथिल होकर नीचे

गिर पड़ा। त्रिविक्रमन, अष्‌कन पिल्लै और सिपाही उन्हें घेरे खड़े थे। उस साध्वी ने पति का सिर छाती से लगाया। उसके प्राण प्रेम-निश्वासों के साथ निर्गत हुए। लक्ष्मी अम्मा ने विलाप रोककर त्रिविक्रमन से कहा—"पिता और पुत्री दोनों को एक ही घड़ी मृत्यु मिली। उधर ले जाइए और दोनों के अंतिम संस्कार संपन्न कराके हमारी रक्षा कीजिए। मेरे लिए भगवान के अलावा आप ही आश्रय हैं। बाद में सब कुछ आपको बता दूंगी।" जार-जार रोती और सिर पीटती वह स्त्री आगे-आगे चली। त्रिविक्रमन का इशारा पाकर अष्‌कन पिल्लै उसके पीछे लग गया। त्रिविक्रमन और दूसरे लोगों ने मिलकर पेरिंचक्कोडन का मृत शरीर उठाकर उसके घर पर पहुंचाया।

जब त्रिविक्रमन ने देवकी का मृत शरीर देखा और लक्ष्मी अम्मा से उसकी प्रेमकथा सुनी तब वह एकदम उदास हो गया। दोनों लाशों के दाह-संस्कार के बाद वह अपने पिता से मिला और लक्ष्मी अम्मा के संरक्षण का सारा प्रबंध कराया।

त्रिविक्रमन पिता के घर से निकल ही रहा था कि वहां एक दाढ़ी-मूंछवाला दुबला-पतला देहाती-आदमी आ पहुंचा। वह कल्लरक्कल पिल्लै था। पेरिंचक्कोडन की मौत की खबर फैलने पर उसके अनुचरों में फूट पड़ गयी। इस माहौल में कल्लरक्कल पिल्लै उनके बंधन से छूट गया। वह शरणार्थी होकर वेलु तंपी से मिलने आया था।

सावित्री का शीतज्वर कुशल चिकित्सा से दूर हो गया। उण्णित्तान ने सावित्री से चंद्रक्कारन के दुखद अंत की कहानी सुनी। उसने मामाजी की अंतिम क्रियाएं विधिवत संपन्न कीं। नरेश भी प्रसन्न हुए कि दीवानजी और उण्णित्तान का मनमुटाव दूर हो गया। उण्णित्तान ने राजकोष का दायित्व फिर से संभाल लिया।

एक छुट्टी के दिन उण्णित्तान चिलंपिनाष़िकम जाने के पहले महाराजा के दर्शन करने आये। उन दोनों ने दिल खोलकर काफी समय तक बातें कीं। विदा के वक्त नरेश ने उनके दोनों हाथों में वीर शृंखला पहनायी। सावित्री को देने के लिए एक बड़ी पेटी भर कर उपहार दिये।

जब मीनाक्षी अम्मा ने उलाहना दिया कि मेरे लिए कोई उपहार ही नहीं है, तब उण्णित्तान बोला—"हां, हां, अन्नदाता ही दीवानजी की कर्मठता को सही-सही पहचानते थे। इसलिए कोई भी केशवन उण्णित्तान की पत्नी को मन, वचन व कर्म से सम्मान देने या पूजा करने को तैयार नहीं होगा।"

मीनाक्षी—"अन्नदाता मेरी अभिलाषा पूरी कर चुके हैं। मैं जो मरी नहीं वह अन्नदाता का आशीष और आपके निश्छल मन की कृपा है। उन्होंने आपको जो आदेश दिया कि किसी का दिल मत दुखाओ, वह मेरे लिए पूरे राज्य के दान जैसा मूल्यवान है। महाराजा को ऐसा आदेश देने की जो इच्छा हुई उसका कारण धार्मिकता को पहचानने की आपकी दिव्य शक्ति ही है।"

उण्णित्तान—"मेरे विषय में तो दिव्य-शक्ति की बात ही नहीं उठती। मैं तो अंधा हो गया था। वह धूर्त कोटंता मुझे बराबर धोखा देता रहा। कलियुग में किये का फल तुरंत मिलता है। कोटंता हड्डियों का ढांचा बना मुर्गियां चरा रहा है। दीवानजी को देखो, वे अपने वचन अथवा व्यवहार से यहां तक कि नजर से बीती बातों का जिक्र तक नहीं करते। उन्हीं को महापुरुष कहना चाहिए।

उण्णित्तान और मीनाक्षी जिस समय ये बातें कर रहे थे उसी समय उसी घर में एक और कमरे में त्रिविक्रमन तथा सावित्री मधुर वार्तालाप का आनंद ले रहे थे।

अतीत की चर्चा करते-करते उनकी बहस जब तेज होने लगी, तब मीनाक्षी अम्मा और उण्णित्तान वहां आये। उण्णित्तान को महसूस हुआ कि पिता, मामा और आचार्य की हैसियत से इन युवा दंपतियों को उचित उपदेश देना चाहिए।

उण्णित्तान बोले—"सुनो त्रिविक्रम! तुम भी सुनो सावित्री! अन्यथा न लेना। मैं जन्म से ही निरुत्साही प्रकृति का व्यक्ति हूं। फिर भी अनुभव से मैंने एक बात सीखी है। बेहद खुशी के पीछे अक्सर कोई हल्का सा दुख आता है। वह प्रभु की इच्छा है ! फिर भी हमें सावधान रहना चाहिए। शैशव में क्रीड़ा, कौमार्य व यौवन में शिक्षा, तथा बुद्धि का विकास, उसके बाद यानी वर्तमान बंधन में बंध जाने के पश्चात गंभीरता और कर्म व्यस्तता नहीं छोड़नी चाहिए। इन बातों का सजगता से निर्वाह करना चाहिए। संसार तुम्हारे वंश, संपत्ति या प्रताप को कोई महत्त्व नहीं देगा। वह तुम्हारे पुरुषार्थ का ही आदर करेगा। पुरुषार्थ की दृढ़ता ही अमूल्य संपत्ति है। शुद्ध आचरण पुरुषार्थ चेतना का स्वयं अनुगमन करेगा। अन्नदाता से हम ये सब बातें सीख सकते हैं। उनके चरणकमलों का अनुगमन करने पर हर जगह, हर बात में हमारी विजय निश्चित है, मंगल निश्चित है।